6.

कितना आश्चर्यजनक लगता है कि भूमि-सुधारों की जब भी आलोचना छपती, एक मात्र वही जवाब देते। सरकार की जैसे कोई जवाबदेही ही नहीं थी। अधिकांश मंत्री मन से नहीं चाहते थे कि भूमि सुधार हो। परिणामत: इनका श्रेय भी चौधरी साब, अकेले चौधरी साब को मिला। उस समय, सार्वजनिक सभाओं, अखबारों और रेडियो पर चरणसिंह का जादू चल रहा था। कोई दिन खाली नहीं जाता। इसी बीच 1957 के आम चुनाव हो चुके थे। चौधरी साब पुन: भारी बहुमत से विजयी बन कर आये। इस बार सिर्फ उन्हें राजस्व विभाग दिया गया था।

इसके पूर्व काल में वे पशुपालन, कृषि तथा यातायात मंत्री भी रह चुके थे। राजस्वमंत्री के रूप में वे देश भर में विख्यात हो गये किन्तु अन्य विभाग भी चौधरी साब के कार्य से उपकृत हो उठे। कृषि मंत्री के रूप में उन्होंने खाद एवं भूजल संरक्षण अधिनियम बनाया जो पूरे देश में अपने ढंग का पहला कानून बना। बाद में सभी राज्यों में इस कानून को अपनाया। मिट्टी के वैज्ञानिक परीक्षण के लिए जिला और विकास खण्डों में केन्द्र स्थापित कर योजना पर कार्य किया गया। निजी कृषि कॉलेजों और संस्थाओं में भी इसकी व्यवस्था कराई गई। मिट्टी परीक्षण से ही खेतों में विभिन्न खादों का अनुपात से प्रयोग करने की विधि अपनाई गई। इससे उपज में वृद्धि हुई। दूसरे दौर में जब पुन: कृषि मंत्री बने तो 1964 में कृषक समाज की स्थापना की। यह निर्दलीय संस्था थी। इसका उद्देश्य विज्ञान खेती के आधुनिक तरीकों और उपलब्धियों को आम किसानों तक पहुंचाना था। सन् 1963 तक बीज, उर्वरक, कृषि यंत्रों आदि की सुविधा सहकारी समितियों को ही मिलती थी। यह सुविधा 40 प्रतिशत किसान ही उठा पाते थे। उन्होंने कृषि आपूर्ति संस्थान की योजना चलाई। इसके माध्यम से सहकारी समितियों के सदस्यों की तरह शेष किसानों को भी सब सुविधाएं मिलने लगी थी। रातदिन कृषि, विज्ञान और चरणसिंह का ध्यान, जैसे एक तार में बंध गये थे।

पशुपालन विभाग भी तो किसान से सम्बन्धित था। वे कहते थे, कि खेती और पशु दोनों किसान को स्वयं से भी प्यारे लगते हैं। उन्होंने एक विधेयक तैयार किया। यह पशु बाजारों के समुचित संचालन और नियंत्रण के लिए था। जब पंडित पंत केन्द्र में चले गये, तो सम्पूर्णानन्द ने इसे अनावश्यक करार दे दिया। चौधरी साब ने इसे पेश करने के लिए बार बार तर्क दिये। मुख्यमंत्री सम्पूर्णानन्द के पास उनके तर्कों का कोई जवाब नहीं था। हां, जब चौधरी साब अड़ गये तो यह विभाग ही उनसे ले लिया था।

परिवहन मंत्रालय तो भ्रष्टाचार के लिए बदनाम था। उनके आते ही भ्रष्ट अधिकारियों के पसीने आ गये। भ्रष्टाचार तो समाप्त ही हो गया। इस विभाग में भी उन्होंने अनेक सुधार किये। पिछले 20 सालों से अनेक समस्याएं थी। किसी ने ध्यान नहीं दिया। उन्होंने समस्त अनियमितताओं को दुरस्त किया। बेनामी चलने वाली बसों, ट्रकों को मालिकाना अधिकार दिये। एक व्यक्ति को एक से अधिक परमिट न देने की परम्परा चलाई। परिवहन विभाग से बिचौलियों का भ्रष्टाचार समाप्त कर दिया। राज्य ट्रक यूनियन के सदस्यों ने इसके लिए चौधरी साब का जीवन भर एहसान माना।

लेकिन राजस्वमंत्री के रूप में जो कार्य किये, उनसे ही वे युग पुरुष बने। राजस्वमंत्री चरणसिंह की तो तूती बोला करती थी। ज्यों ज्यों लोकप्रियता के शिखर पर चढ़ते गये, चौधरी साब अधिक विनम्र होते गये। विशेष तौर पर विपक्षी सदस्यों को अच्छे भाषण पर वे बधाई देते। उन्हीं दिनों, विपक्षी सदस्य चन्द्रजीत यादव से उनकी मुलाकात विधानसभा लॉबी में हो गई। उन्होंने बड़े प्रेम से यादव को देखा। फिर गंभीरता से अपनी चिर-परिचित शैली में बोले, ''तुम अच्छा बोलते हो। चलो मेरे साथ।'' हाथ पकड़ वे यादव को कमरे में ले गए।

यादव की कुछ शंकाओं का समाधान करने के बाद बोले, ''यादव, तुम्हें कांग्रेस में होना

चाहिए था, तुम गलत स्थान पर हो।''

ऐसे स्पष्टवादी और अपनत्व रखने वाले नेता को यादव ने पहली बार देखा। तब यादव इतने प्रभावित हुए कि अनेक अवसरों पर चौधरी साब से सलाह लेते रहते। यादव को जाते समय अपनी एक पुस्तक दी जिसमें भारत की कृषि व्यवस्था और किसानों की स्थिति का वास्तविक चित्रण था। यह भी संयोग था कि जब यादव कांग्रेस में आये, तब चौधरी साब को कांग्रेस छोड़ने को मजबूर होना पड़ा। किन्तु यह तो बाद की बात है।

तब तो राजस्वमंत्री चरणसिंह एक विख्यात किसान मसीहा के रूप में छा गये थे। तब ग्रामीण आधार वाले पक्ष या विपक्ष के नेता तो उन्हें घेरे ही रहते। उनके चिंतन, अध्ययन और परिश्रम से दंग रह जाते। कभी उन्हें गप्प मारते नहीं देखा गया। जब देखो, तब फाइलों में, किताबों में अथवा कुछ लिखने में व्यस्त रहते। उन्हीं दिनों एक रूसी विद्वान लखनऊ आये हुए थे। वह भारत की कृषि व्यवस्था और भूमि सुधार पर अध्ययन कर रहे थे। वह चौधरी साब से भेंट करने को बैचेन थे। चौधरी साब ने उन्हें लगभग एक घंटे का समय दे दिया। रूस की सहकारी खेती और राजकीय कृषि फार्मों की असफलता का बखान करने लगे। इसके विकल्प में यू. पी. के भूमि सुधार कार्यक्रमों की जानकारी दी। निजी और लघु कृषि के फायदों को गिनाने लगे। रुसी विद्वान चकित था। बाह निकलने पर प्रतिक्रिया व्यक्त की ''चौधरी साब की योग्यता और जानकारी की कोई मिसाल नहीं। भारत में मुझे ऐसा और कोई राजनीतिज्ञ नहीं मिला जिसे कृषि व्यवस्था और किसानों की समस्याओं का पूर्ण ज्ञान हो। भले ही उनकी विचारधारा अलग हो, लेकिन इस विषय के ये मास्टर हैं।''

उस दिन किसान सभा के नेता पी. के. टंडन मिलने आये थे। 'नेशनल हेराल्ड' में उनके पत्र का जवाब चौधरी साब ने दिया था। टंडन तो जैसे गद्‌गद् हो उठे थे। अखबार में धन्यवाद का पत्र छपवा दिया था। टंडन द्वारा अपने परिचय दिये जाने पर वे हंस पड़े। साथ ही कलम रखते हुए बोले, ''अच्छा, तो आप हैं मि. पी. के. टंडन?''

टंडन ने विनम्रता से हामी भरी।

''भई तुम शहर के रहने वाले हो। गांव और किसान की समस्याओं से तुम्हारा क्या वास्ता? लेकिन तुम तो किसान नेता बन गये।''

पी. के. टंडन, सामने बैठे चौधरी साब की सौम्यता और सादगी से विस्मित रह गये, बोले, ''हूं तो शहर का रहने वाला ही, लेकिन शुरू से ही किसान सभा में रहा हूं अत: जानकारी मिलती रही। अब आपका आशीर्वाद मिलेगा तो और भी सीख जाऊंगा।''

टंडन बाहर निकलते सोच रहे थे, कैसा सीधा-सादा है यह असाधारण व्यक्तित्व। किसान के लिए तड़फ का कोई अन्त नहीं था।

यहां उल्लेखनीय है कि 1957 के चुनाव में चन्द्रभानु गुप्ता की हार हो चुकी थी। तब वह संगठन के कार्य में हस्तक्षेप कर अपना अलग गुट बनाने के प्रयास में थे। राज्य स्तर पर कांग्रेस पार्टी में दो तीन गुट सक्रिय थे। मेरठ की जिला कमेटी में चौधरी साब का कोई विकल्प नहीं था। अन्य गुटों ने यहां सैंध लगाने की असफल कोशिश की थी। लेकिन संगठन के चुनावों में चौधरी साब के समर्थक ही जीते। तब विरोधियों ने खीझकर पंडित नेहरू को चौधरी साब के विरुद्ध फुसलाना शुरू कर दिया।

उस दिन, जब वे दिल्ली में थे, नेहरू ने उन्हें बुलाया। संगठन के चुनावों बाबत चर्चा चल रही थी। सहसा पंडित नेहरू ने हंसकर कहा, ''मेरठ में आपने जाटपन दिखा दिया है।''

वे समझ नहीं सके कि नेहरू का यह मजाक है या व्यंग्य। उन्हें अनुभव हुआ कि यह तो अत्यंत घटिया व्यवहार है। वे चुपचाप चले तो आये लेकिन नेहरू के मुंह से जाटपन सुनकर उन्हें अत्यन्त क्षोभ हो रहा था। प्रान्तीय नेताओं का व्यवहार तो वे देख ही चुके थे। लेकिन वे उनकी योग्यता के आगे पंगु बन जाते। उसी भावना का क्या नेहरू में भी प्रवेश हो गया? वे सीधे गृहमंत्री

पंत के पास गये। दु:खी होकर बोले, ''पंडितजी, नेहरूजी भी ऐसा कह सकते हैं, मैं कभी सोच ही नहीं सकता था।''.

पंडित पंत मुस्कराये। उनके कंधो पर हाथ रखते हुए बोले, ''चौधरी साब चिंता मत करो, मैं समझा दूंगा नेहरूजी को।''

''कभी आपने ऐसा देखा कि मेरे में जाति भावना उत्पन्न हई हो।'' चौधरी साब ने स्पष्ट उत्तर जानना चाहा।

पंत बोले, ''मैं तो वर्षों से जानता हूं आपको। नेहरूजी की गलतफहमी दूर कर दूंगा।''

वे लखनऊ चले तो आये, लेकिन उन्हें चैन न था। तब तक कुमायूं में जमींदारी उन्मूलन विधेयक पंडित पंत की इच्छा-विरुद्ध पास करवा चुके थे। उन्हें लगा, पंडित पंत पहले की तरह उनका पक्ष नहीं लेंगे। हो सकता है, वे नेहरू जी से कुछ भी न कहें। तभी रात को उन्होंने पंडित नेहरू को एक पत्र लिखा-

लखनऊ,
6 अक्टूबर, 1958

''प्रिय पंडित जी, यह पत्र मेरी और आपकी नई दिल्ली में मुलाकात के समय आपके द्वारा की गई टिप्पणी के संदर्भ में लिख रहा हूं। आपने कहा था कि मेरठ जिले में कांग्रेस के संगठनात्मक मामलों में मेरे द्वारा प्रदर्शित 'जाटपन' को आप पसंद नहीं करते।

मैं यह नहीं जानता कि आप के दिमाग में क्या था, वास्तविकता तो यह है कि मेरठ जिले में जाट समुदाय के अधिकांश लोग गैर-साम्प्रदायिकता के आधार पर ही वोट देते रहे हैं। इस जिले में तमाम परेशानियों एवं दिक्कतों के रहते हुए और इस समाज में सबसे ज्यादा राजनैतिक रूप से प्रतिष्ठित होने के नाते, मैं हमेशा जातिवाद का लगातार विरोध करता रहा हूं। शायद आप भी इस बात को मानेंगे कि उत्तर प्रदेश के इस पश्चिमी भाग में मेरठ जिला ही कांग्रेस का सब से ज्यादा मजबूत गढ है। इसका श्रेय, यदि आप क्षमा करें, तो मैं यह भी कहूंगा कि मुझे भी है। यद्यपि दूसरी जातियों की तुलना में (शायद चमारों को छोड़कर) जाट सर्वाधिक हैं, लेकिन उत्तर प्रदेश से उनका प्रतिनिधित्व विधान सभा एवं राज्य सभा में, 22 सदस्यों में से केवल तीन का ही है और इन सारे विधायकों को मेरे सुझाव पर ही कांग्रेस का टिकिट दिया गया था। वैश्य, त्यागी, और ब्राह्मणों को उनकी आनुपातिक शक्ति से परे जाकर, जाट जाति की तुलना में बहुत अधिक प्रतिनिधित्व मिला है। मैं पूरे विश्वास के साथ दावा कर सकता हूं कि पूरे प्रान्त में, किसी बाहुल्य समाज को इतना कम प्रतिनिधित्व विधान सभा में नहीं मिला होगा, जितना मेरठ में जाट जाति को मिला है। मेरे सार्वजनिक जीवन में ऐसा कोई भी उदाहरण नहीं है, जिससे मेरे ऊपर 'जाटवाद' का आरोप प्रमाणित हो। फिर भी पंडित जी, मैं आपकी और उन तमाम लोगों की नजर में एक जाट किसान के घर पैदा होकर बड़ा नहीं बन सकता। आखिर क्यों?

इसका कोई कारण दुर्लभ नहीं है। जब किसी प्रकार से असयंमता, अयोग्यता, परिश्रमहीनता, सम्भावित अर्थों में चरित्र हीनता या अलोकप्रियता के आरोप मुझ जैसे व्यक्ति पर नहीं लगाये जा सके, तब सबसे अच्छा तरीका अस्तित्व समाप्त करने का निकाला गया, बदनामी का बिल्ला बिना किसी जांच पड़ताल के चिपका दो।

इस बेमतलब प्रचार से जाटों का नाम बदनाम हुआ है। उदाहरणार्थ सन् 1954-55 में जब राज्यों के पुनर्गठन की बात चल रही थी, उस समय भी ऐसा ही अनर्गल प्रचार एक विशिष्ट वर्ग द्वारा चलाया गया था कि प्रस्तावित दिल्ली राज्य और कुछ नहीं, 'जाटिस्तान' ही होगा। इस मन घड़ंत झूठे प्रचार का जिसमें लेशमात्र भी सत्य नहीं, कोई खंडन नहीं किया गया। वे अशिक्षित हैं, गांव में रहते हैं, देश के आर्थिक एवं प्रशासनिक जीवन से, यहां की जनता से उनका कोई रिश्ता नहीं है, इन सबके बाद भी वे समाज में अपने को छोटा मान कर चलने को कदापि सहमत नहीं होंगे। असरदार ग्रामीण क्षेत्रों में व्यंग्यात्मक रूप से 'जाट' कहे जाने को भी वह स्पष्टत: महसूस

करने लगे हैं और अब वे इसे बर्दाश्त नहीं करेंगे। यही कारण था कि पंजाब जहां 56 प्रतिशत हिन्दू जाट थे, केवल 40 वर्षों के अन्तराल में (1891-1931) ही अपने पुराने मत को छोड़, सिख एवं मुसलमान बन गये, ताकि भविष्य में कोई इस प्रकार के व्यवहार से उनकी मानहानि न कर सके। इस नैतिक दायित्व को छोड़ने या इस परिवर्तन ने ही पाकिस्तान बनने में प्रमुख भूमिका निभाई थी, और अब इन्हीं कारणों से पंजाबी सूबे की मांग उठ रही है।

जन्म के आधार पर बनी जातिय व्यवस्था, सदियों से राजनैतिक दासता का एक मात्र प्रबल कारण रही है, और इसी के कारण देश का विभाजन तक हुआ। हम को यह बात आगे समझ में आयेगी कि हमने इतिहास से कोई सबक नहीं लिया है। देशभर के जन-जीवन के महत्वपूर्ण उच्च पदों पर बैठे हुए लोग आज भी इस कमजोरी को त्याग कर ऊपर नहीं उठा पा रहे हैं।

मैंने 22 मई, 1954 को आपको एक पत्र के माध्यम से सुझाव दिया था कि संविधान में इस आशय का संशोधन किया जाये कि राज्य या केन्द्र में भविष्य में किसी भी नौजवान को राजपत्रित पद पर उस समय तक प्रविष्ट नहीं किया जायेगा जब तक उसने अपनी जाति के बाहर किसी अन्य जाति में (या अपनी मातृभाषा के अलावा किसी अन्य भाषाई से) विवाह किया होने या करने की इच्छा व्यक्त न की हो। लेकिन आप सहमत नहीं हुए।

मैं आशा करता हूं कि जिस वेदना से मैंने यह पत्र लिखा है, उसे दृष्टिगत रखते हुए आप मुझे क्षमा करेंगे। मुझे बड़ा गहरा दु:ख इस बात से पहुंचा है, और मैंने अपनी भावनाओं से पंतजी को भी सूचित कर दिया है और मुझे उम्मीद है कि उन्होंने आपको इससे अवगत भी करा दिया होगा।

अभिवादन सहित,
आपका ही
चरणसिंह'

सेवामें,
श्री जवाहरलाल नेहरू,
प्रधानमंत्री भारत सरकार, नई दिल्ली।

6 अक्टूबर का चौधरी साब का पत्र पंडित नेहरू को पता नहीं कौनसी तारीख को मिला, लेकिन उन्होंने 10 अक्टूबर को उत्तर दिया-

नं. 2470-पी. एम. एच/58
प्रधानमंत्री निवास
नई दिल्ली अक्टूबर 10, 1958
प्रिय चरणसिंह,

मुझे आपका 6 अक्टूबर का पत्र प्राप्त हुआ।

मैंने आपसे वार्ता के बीच जब 'जाटपन' शब्द का प्रयोग किया था, तब मैं जाति या उस प्रकार के किसी और संदर्भ के बाबत नहीं सोच रहा था। मेरे दिमाग में गुट हेतु कुछ कड़ेपन के बाबत ही बात थी। गुट में जरूरी नहीं है जाट या कोई भी जातीय ग्रुप हो।

जहां तक जाटों का सम्बन्ध है, मैंने उन्हें बहुत पसन्द किया है और उनमें कई गुणों का प्रशंसक भी रहा हूं। मेरे मस्तिष्क में इस शब्द को लेकर व्यंग्य का कोई सवाल ही नहीं।

सद्भाव पूर्ण,
आपका जवाहरलाल नेहरू''

प्रति:-
चरणसिंह मंत्री
उत्तर प्रदेश सरकार लखनऊ (उ. प्र.)

कबीरजी ने स्वयं के लिए लिखा है-

'जाति जुलाहा मति को धीर। हरषि हरषि गुन रमै कबीर।

अथवा

तू बाहमन में काशी का जुलाहा।

तथा

सरग लोक में क्या दुख पड़िया, तुम आई कलिमाहीं।
जाति जुलाहा नाम कबीरा, अजदु पती जौ नाहीं॥''

दु:खी चरणसिंह ने बार बार कहा है, ''यदि मैं ब्राह्मण कुल में जन्म लेता और वह भी कश्मीरी पंडितों के घर में तो कभी का प्रधानमंत्री बन जाता। मेरा दुर्भाग्य है कि मैं जाट के घर जन्मा।'' और इस वेदना को कलम के पंडितों ने, कुर्सी के भूखे दलालों ने मजाक के रूप में लिया। तब उन्हें रातोंरात घोर जातिवादी करार दे दिया। पंडित नेहरू का पत्र रंगेहाथों पकड़े गए चोर का जवाब जान पड़ता है। उनके मुंह से वही शब्द निकले, जो वस्तुत: उनके मस्तिष्क में थे। चरणसिंह के पत्र को पढ़कर पंडित नेहरू क्या चौंके नहीं होंगे? उनके दिल की बात का क्या पकड़ी नहीं गई थी? क्या चौधरी साब को दोष दिया जाये कि क्यों उन्होंने नेहरू की संकीर्ण भावना को पकड़ लिया? आदर्शवादी नेहरू की बात को उन्होंने इस अर्थ में ग्रहण ही क्यों किया? इसलिए, कि वह स्वयं जातिवादी थे? इन प्रश्नों का कोई अन्त नहीं है। इन सबका उत्तर भी एक प्रश्न में निहित है। जब पंडिन नेहरू स्वीकार करतेहैं कि गुट में यह जरूरी नहीं कि कोई जातीय ग्रुप हो तो फिर इस गुजबाजी को जाटपन कहा ही क्यों गया? और वह भी जाट चरणसिंह को? अन्य सवर्ण नेता गुटबाजी करके चरणसिंह को स्वयं के जिले में ही उन्हें मात देना चाह रहे थे, तब तो जातीय भावना नहीं थी। जब वे विशिष्ट नेता देहाती चरणसिंह को परास्त नहीं कर सके या अपनी बात उनसे नहीं मनवा सके तो यह 'जाटपन' हो गया। वस्तुत: नेहरू वही शब्द प्रयोग में ला रहे थे जैसा उन्हें सिखाया गया था। लेकिन यह सब अपने उतर में चरणसिंह ने नहीं कहा। उनका तो एक ही आग्रह था कि गांव के व्यक्ति को जो ऊंची जात में नहीं पैदा हुआ, बराबरी का अधिकार मिलना चाहिए। उन्होंने कभी नहीं कहा कि ब्राह्मणवाद फैला रहे हो।

चौधरी साब ने अपने पत्र में, मेरठ जिले के जाटों के व्यापक दृष्टिकोण की बात कही है, वह तथ्यों पर आधारित है। जैसे सन् 1952 के आम चुनाव में चरणसिंह के मुकाबले में तीन और प्रत्याशी खड़े थे। उनमें एक जाट, एक ब्राम्हण और एक हरिजन थे।

लोकसभा के लिए खुशीराम शर्मा कांग्रेस के टिकिट पर चुनाव लड़े थे। छपरौली इसी क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। इनके मुकाबले में एक मात्र जाट प्रत्याशी, सेवा निवृत्त जिला न्यायाधीश एवं प्रतिष्ठित नागरिक डा. हुकुमसिंह थे। चुनाव परिणामों से प्रकट हुआ कि इनको उतने ही वोट मिले जितने चरणसिंह के मुकाबले खड़े जाट प्रत्याशी रघुवीरसिंह शास्त्री को मिले थे। खुशीराम शर्मा को वे समस्त वोट मिले जो अन्य तीन प्रत्याशियों-चरणसिंह, ब्राह्मण एवं हरिजन प्रत्याशियों को कुल मिलाकर मिले थे। इससे स्पष्ट है कि जिन जाटों ने चरणसिंह को वोट दिया था, उन्होंने खुशीराम शर्मा को भी अपना वोट दिया। यही क्रम हमेशा रहा। लेकिन इस क्षेत्र के एक भी ब्राह्मण ने अपना वोट चरणसिंह को नहीं दिया। जबकि 1967 तक वे कांग्रेस प्रत्याशी के रूप में चुनाव लड़ते थे। उनके साथ पत्रकारों के दल हमेशा रहते थे। कभी किसी ने नहीं सुना कि आम सभाओं में उन्होंने कभी अपनी जाति का नाम भी लिया। बाद में एक पत्रकार ने अपने संस्मरण में भी लिखा, ''मैं चौधरी साब के साथ उनके तुफानी चुनावी-दौरे में तीन दिन लगातार रहा। विशाल आम सभाओं में किसानों की भरमार रहती। लेकिन मुझे एक शब्द भी सुनने को नहीं मिला कि वे 'जाट कार्ड' को भुनाते हैं।

संयोग है कि इन पंक्तियों को लिखते समय 1996 को लोकसभा चुनावों की रिपोर्टिंग आ रही है। कल ही 'जनसता' के मेरठ संवाददाता (मनोज मिश्र) ने जिले की राजनीति का विश्लेषण

कते हुए लिखा कि इस जिले के ब्राह्मणों और गूजरों ने कभी चरणसिंह को भी वोट नहीं दिया। संवाददाता स्वयं ब्राह्मण जान पड़ते हैं। फिर बात वहीं आती है कि चरणसिंह ने इस बात की शिकायत कभी पंडित नेहरू से नहीं की लेकिन ब्राह्मण उम्मीदवार को वोट दिलाने वाले चरणसिंह पर 'जाटपन' का लेबल पंडित नेहरू ने चिपका दिया था।

7.

जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानून में यह व्यवस्था थी कि 'गांव समाज' के दस या इससे अधिक भूमिधारी या सीरदारी अधिकार वाले सदस्य, यदि चाहें तो एक सहकारी फार्म का निबन्धन हो जाने के बाद भूमिधर, सीरदार या उनके अधीनस्थ असामियों की जोतों समेत गांव की सारी जोतों की जमीन सहकारी फार्म को समर्पित समझी जायेगी।

सहकारी फार्म खोलने के सम्बन्ध में यह प्रावधान महज कागजी रह गया था। राज्य सरकार इस सम्बन्ध में कभी गंभीर नहीं रही। सिर्फ केन्द्रीय नेतृत्व की सनक-तुष्टि के लिए ही विधि पुस्तिका में स्थान दिया था। तभी आया जनवरी 1959 का नागपुर अधिवेशन। कांग्रेस इस अधिवेशन को ऐतिहासिक कहकर प्रचारित कर रही थी, क्योंकि एक क्रांतिकारी कदम उठाया जाने वाला था। नेहरू के समाजवाद की ओर एक और कदम-सहकारी कृषि का प्रस्ताव पेश होने वाला था। कार्य समिति उत्साह से प्रस्ताव के मसौदे को तैयार करने में जुटी हुई थी। पंडित नेहरू की एक और छलांग कहकर अखबारों में चर्चा हो रही थी। प्रस्ताव के अनुसार भूमि को एकत्रित करके संयुक्त रूप से खेती की जाये और अपने स्वामित्व के अनुपात से हिस्सा लेने की बात थी। काम करने वाले भी अपना हिस्सा प्राप्त करेंगे। इसके लिए देश भर में सेवा-सहकारियां गठित की जानी थी। इस क्रांतिकारी अधिवेशन में राजस्वमंत्री चरणसिंह ने भी भाग लिया।

पंडित नेहरू की लोकप्रियता शिखर पर थी। इस प्रस्ताव के कारण भारत के कम्युनिस्टों ने तो नेहरू को दूसरा 'लेनिन' करार दे दिया था। कांग्रेसी-सदस्यों को पता था कि यह प्रस्ताव नेहरू की ओर से है तो विरोध की गुंजायश ही कहां थी? सभी वक्ता एक एक करके प्रस्ताव के समर्थन में क्रांतिकारी भाषण पिलाये जा रहे थे। तब नाम पुकारा गया चौधरी चरणसिंह, राजस्वमंत्री उत्तर प्रदेश। तब हवा पूर्व से पश्चिम की ओर बहने लगी।

कबीर के बारे में डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है, "संसार में भटकते हुए जीवों को देखकर करुणा के अश्रु से वे कातर नहीं हो जाते थे बल्कि और भी कठोर होकर उसे फटकार बताते थे।... संसार में भरमाने वालों पर दया कैसी, मुक्ति के मार्ग में अग्रसर होने वालों को आराम कहां, करम की रेख पर मेख न मार सका तो संत कैसा?" और इस संत ने जग को भरमाने वालों पर ज्ञान का कोड़ा बरसाना शुरू कर दिया। 'तुम कहते कागज की लेखी, मैं कहता हूं आंखिन देखी' के अन्दाज में नेहरू के सहकारी कृषि प्रस्ताव की धज्जियां उड़ा दी। कांग्रेसी मठाधीश और पंडित नेहरू अवाक! बिना झिझक, बिना लाग लपेट के और नि:संकोच चौधरी के भीतर बैठे कबीर ने जैसे ऐलान किया-

'आसमान का आसरा छोड़ प्यारे,
उलटि देख घट अपना जी।
तुम आप में आप तहकीक करो,
तुम छोड़ो मन की कल्पनाजी।'

कहा जाता है कि जब चरणसिंह का भाषण समाप्त हुआ और पंडाल तालियों से गूंज उठा

तो हतप्रभ नेहरू ने समीप बैठे नेता से पूछा, ''यह कौन है?''

''राजस्व मंत्री-उत्तरप्रदेश, चौधरी चरणसिंह।'' उन्हें बताया गया। लेकिन यह सही नहीं लगता है। इससे पूर्व ही चौधरी साब नेहरू से कई बार मिल चुके थे। उत्तर प्रदेश में भूमि सुधारों के लिए वे देशभर में विख्यात हो चुके थे। पंडित नेहरू से कई समस्याओं पर चर्चा कर चुके थे। उनसे 'जाटपन' का तगमा ले चुके थे। इसलिए विश्वास नहीं होता कि चौधरी चरणसिंह का चेहरा नेहरू भूल जायें।

एक घंटे के धारा प्रवाह भाषण को पंडित नेहरू ने दतचित होकर सुना। पंडाल में अजीब सन्नाटा छा गया था। उनके तर्क और तथ्य सुनकर पंडित नेहरू बीच बीच में मुस्कराते भी रहे। उस समय की स्थिति का वर्णन करते हुए दिवंगत राष्ट्रपति ज्ञानी जेल सिंह ने लिखा है, ''मैं तो चौधरी साहब के भाषण को सुनकर मंत्र मुग्ध हो गया। पंडित जी के प्रस्ताव पेश करते समय अधिवेशन के पंडाल में जो धड़ाधड़ तालियां बज रही थी, चौधरी साब के भाषण के बाद ऐसा लगता था कि पासा ही पलट गया है। पंडितजी ने भोजनावकाश के बाद चौधरी साब की बात का उत्तर दिया। हम लोगों को तो पंडित जी का, उनकी बात से सहमत न होते हुए भी समर्थन करना पड़ा, क्योंकि पंडित जी की पर्सनैलिटी का असर ही ऐसा था। हां, इतना मैं जरूर कहूंगा कि यदि पंडित जी की जगह मैं होता, तो चौधरी साब के सामने अपना बचाव नहीं कर पाता। ''

उस समय अखबारों में क्या छपा था, यह पढकर ही चौधरी साब के बारे में प्रामाणिक रूप से जाना जा सकता है। 'करंट' बंबई के 14 जनवरी 1959 के अंक में प्रकाशित समाचार यों था-

'प्रस्ताव के आधार-मूलक सिद्धान्तों के कुछ विरोधियों का नेतृत्व उत्तर प्रदेशमें राजस्वमंत्री श्री चरणसिंह ने किया, जिन्होंने आग्रह किया कि सहकारी कृषि को लाया जाना भारतीय लोकतंत्र के लिए मृत्यु का संदेश होगा।

इस अधिवेशन में चरणसिंह ने 'विपक्ष के नेता' की भूमिका निभाई और साफ साफ प्रतिनिधियों से कहा कि सहकारी कृषि सफल नहीं होगी और यह कि खाद्यान्नों का राज्य-व्यापार बिल्कुल ही अव्यावहारिक है। अत्याधिक राष्ट्रीयकरण की नीति की उन्होंने जब भर्त्सना की तब प्रतिनिधियों ने करतल ध्वनि की। मगर जब प्रस्ताव पर मत लिये गये तब मुश्किल से आधे दर्जन हाथ विरोध में उठे।

वह दिन श्री नेहरू का रहा। प्रतिनिधि जानते थे कि प्रधानमंत्री उनके मत इसके पक्ष में चाहते हैं और उन्होंने दिये।

चोटी के नेताओं और कार्य समिति के सदस्यों समेत जिन अनेक कांग्रेसियों से मैं मिला, वे पूरे प्रस्ताव को लेकर खुलै तौर पर संशय ग्रस्त थे। उन्होंने कहा कि सहकारी कृषि और राज्य द्वारा खाद्यान्नों का व्यापार दोनों की विफलता निश्चित है।

''उन्होंने प्रस्ताव का विरोध क्यों नहीं किया?'' मैंने पूछा।

विशिष्ट उत्तर मुझे केन्द्रीय मंत्री मंडल के एक सदस्य से मिला।

''हमें पता है कि हमारा विरोध प्रधानमंत्री को पसंद नहीं। हम दरअसल उन्हें ना खुश नहीं करना चाहते थे।''

18 जनवरी 1959 के 'नेशनल हेराल्ड' में प्रमुख शीर्षक के साथ निम्न प्रकार छपा-

'चरणसिंह द्वारा सहकारी कृषि का विरोध: राज्य व्यापार से असंतोष बढने की संभावना।

अभयंकर नगर, जनवरी:-उत्तर प्रदेश के राजस्व मंत्री चरणसिंह ने आज कांग्रेस की विषय समिति में प्रस्ताव पर बहस के दौरान कृषि ढांचे से सम्बन्धित पूरे प्रस्ताव का, सेवा सहकारियों के गठन और पुन: प्राप्त की गई भूमि पर सरकार द्वारा खेती वाँले प्रावधानों को छोड़ते हुए, विरोध किया।

श्री चरणसिंह ने कहा कि वह बड़ी-बड़ी जोतों को तोड़ने और भूमिहीनों में उनके वितरण

के विरुद्ध नहीं थे। वह चाहते थे कि यह काम सरकार के सीधे सामने आये बिना सम्पन्न हो। इसलिए उन्होंने कह दिया कि सरकार को बड़ी जोतों के लिए एक कराधान कार्यक्रम इस तरह से तैयार करना चाहिए कि अपने जोत-क्षेत्र में कमी लाना उनके लिए आवश्यक हो जाये। उन्होंने कहा कि अगर ऐसी पद्धति नहीं अपनाई गई और सरकार ने भूमि वितरण की जिम्मेवारी अपने ऊपर ले ली, तो लोगों में असंतोष फैलेगा ही और विपक्षी दल उस स्थिति का पूरा लाभ उठायेंगे।

श्री चरणसिंह इस तरह की सहकारियों के पीछे दिये जाने वाले इस मूल तर्क से असहमत थे कि भूमि के एकत्रीकरण से उत्पादन बढ़ाने में सहायता मिलेगी।कृषि उत्पादन में वृद्धि का रास्ता संसाधनों का एकत्रीकरण है, भूमि का नहीं। सेवा-सहकारियों के विचार का उन्होंने समर्थन किया, क्योंकि उन्हें संसाधनों का एकत्रीकरण नहीं करना पड़ेगा।

सहकारी फार्म

श्री चरणसिंह ने कहा कि सहकारी फार्म भारत में सफल नहीं होंगे। उन्हें विश्व में कहीं भी सफलता नहीं मिली है, इजरायल को छोड़कर, जहां की स्थितियां भिन्न थी। चीन तक में सहकारी फार्म एक अस्थाई दौर साबित हुए और अन्ततः सामूहिक फार्मों और कम्यूनों ने उनकी जगह ली।

उन्होंने कहा कि एक इस तथ्य का अवश्य ही यथार्थवादी ढंग से सामना किया जाना है कि सारी वैज्ञानिक उपलब्धियों के बावजूद मनुष्य का मन अभी तक उसी दंग नाले में विचर रहा है, जहां दो हजार साल पहले विचरता था। अगर स्वामीत्व को तुरन्त समाप्त कर दिया गया तो किसान सहकारी में शामिल होंगे ही नहीं, अगर स्वामित्व अधिकार बना रहे तो किसान एक या दो मौसम तक सहकारी खेती करेंगे, लेकिन उसके बाद उससे निकलने की कोशिश करेंगे। अगर यह समझ लिया जाये कि जोतदार इस तरह का स्वार्थी जीव नहीं और वह खेती के सहकारी मार्ग को पूरा समर्थन देगा, तो वह 'सन्यासी' हो जायेगा और खेतीहर नहीं रह जायेगा।

राज्य व्यापार

श्री चरणसिंह ने कहा कि अगर सरकार ने खाद्यान्नों के थोक व्यापार को अपने हाथ में ले लिया तो तर्कपूर्ण कदम यह होगा कि खुदरा व्यापार को भी हाथ में ले ले। अगर खुदरा व्यापार निजी व्यापारियों के पास रहने दिया गया तो राज्य मशीनरी खुदरा व्यापारियों को लाइसेंस देगी, जिसका अर्थ होगा-पक्षपात की गुंजाइश।

खाद्यान्नों के थोक और खुदरा व्यापार को हाथ में लेते हुए सरकार कारोबार की एक बहुत ही बड़ी जिम्मेदारी हाथ में ले रही होगी तथा नौकरशाही तंत्र का विस्तार होगा। अनाजों के भंडारण के लिए गोदाम कहां हैं? उन्होंने पूछा। उन्हें आशंका थी कि खाद्यान्नों के राज्य-व्यापार से देश में असंतोष की भावना का व्यापक विस्तार होगा।''

'दैनिक हिन्दुस्तान' का शीर्षक था-

'कृषि पुनर्गठन सम्बन्धी प्रस्ताव विषय समिति में स्वीकृत'

''उत्तर प्रदेश के मालमंत्री श्री चरणसिंह ने प्रस्ताव के विरोध में तर्कपूर्ण दलील देकर विषय समिति का दिल और दिमाग तो जीत लिया, किन्तु जबान नहीं जीत सके।

श्री चरणसिंह के विचारों का सदस्यों तथा हजारों श्रोताओं ने बार बार जोरों की तालियां बजाकर स्वागत किया। उनकी दलीलों का उत्तर देने के लिए चार मंत्रियों केन्द्रीय मंत्री श्री अजीत प्रसाद जैन और एस. एन. मिश्र तथा मध्य प्रदेश के मंत्री श्री गंगवाल और मद्रास के वित्त मंत्री श्री सुब्रह्मण्यम ने प्रयत्न किया, किन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि वे उनकी एक भी तर्कपूर्ण दलील का उत्तर नहीं दे सके। श्री अजीत प्रसाद जैन को यह स्वीकार करना पड़ा कि चरणसिंह की दलीलें, भावपूर्ण नहीं, तर्कपूर्ण हैं।''

इसी अखबार में 19.1. 19959 को प्रकाशित हुआ-

'नागपुर कांग्रेस अधिवेशन: एक सिंहावलोकन'

'विषय समिति की बैठक में योजना सम्बन्धी प्रस्ताव पर बहस के समय हस्तक्षेप करते हुए नेहरू जी ने प्रस्ताव के आलोचकों का इतना अधिक मजाक उड़ाया और उन पर इतने क्रुद्ध हो गये कि विषय समिति के सदस्य तथा अधिवेशन के प्रतिनिधि इस हद तक डरे हुए थे कि उन्हें समूचे अधिवेशन में कांग्रेस कार्यसमिति के प्रस्तावों की आलोचना करने की हिम्मत ही नहीं हुई। उत्तर प्रदेश के मंत्री चौधरी चरणसिंह ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति निकले, जिन्होंने नेहरूजी की उपस्थिति में भी प्रस्ताव का जबरदस्त विरोध किया और प्रभावशाली भाषण दिया। कांग्रेस के इस अधिवेशन में गये व्यक्तियों से यदि आप पूछें कि इस अधिवेशन में किसका भाषण सबसे अधिक जोरदार था, तो उनका उत्तर होगा, 'चौधरी चरणसिंह का।'

नवभारत टाइम्स में 22.1.59 को छपी रिपोर्ट इस प्रकार थी-

'चरणसिंह द्वारा कृषि प्रस्ताव का विरोध'

'इस प्रस्ताव पर हुए सारे ही विवाद में प्रस्ताव के विरोध में यदि कोई तगड़ा भाषण हुआ, तो उत्तर प्रदेश के मालमंत्री श्री चरणसिंह का था। उन्होंने सेवा-सहकारिता समिति तथा परती जमीन, इस विषय से सम्बन्धित प्रस्ताव के दो अंशों को छोड़कर प्रस्ताव की हर बात का विरोध किया। उनके विरोध में न हिचकिचाहट थी और न संकोच। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि वह प्रस्तुत विषय से इतने परिचित थे कि अपने पक्ष के समर्थन में उन्होंने जो तर्क प्रस्तुत किये, वे ऐसे ठोस आंकड़ों पर आधारित थे कि उनके बाद प्रस्ताव के पक्ष में बोलने वाले वक्ताओं में से किसी ने उनकी प्रामाणिकता को चुनौति नहीं दी।''

तो ये थी प्रतिनिधि अखबारों में छपी कुछ रिपोर्ट। इनसे अधिक और क्या प्रामाणिक ब्यौरा हो सकता है? तत्कालीन माहौल का अनुमान लगाया जा सकता है। यू. पी. के बाहर राष्ट्रीय मंच पर यह चौधरी साब का प्रथम तहलका था। राष्ट्रीय अखबारों में नेहरू के साथ साथ चरणसिंह का नाम छा गया था। वस्तुत: यह हवाई विचारों और यथार्थ का संघर्ष था। आजादी आये 12 साल बीत चुके थे। एक आर्थिक लाईन देश को तेजी से पकडनी चाहिए थी, उसका अभाव था। पंडिन नेहरू, वस्तुत: स्वप्नदृष्टा थे। वे रूस के प्रचार से तो प्रभावित थे, किन्तु भारत की जमीन से कटे हुए थे। चौधरी साब की यही चुनौति थी। पंडित नेहरू की हर बात को 'सत्यवचन' मानने वाली कांग्रेस में यह एक विस्फोट था। कुर्सी के लिए आंख मूंद कर जयजय कार करने वाले नेताओं का अहं इससे चकनाचूर हो गया था। एक विरोधाभास था कि प्रशंसा चरणसिंह की, मत प्रस्ताव के पक्ष में।

और तब, 'यस सर' सुनने वाले पंडित नेहरू बहुत क्षुब्ध और कुपित हुए थे। उनके बादशाही मिजाज को यह स्वीकार नहीं था। यह उनके मसीहापन का मखौल उड़ाना समझा गया। तब, पंडिन नेहरू के मन में चौधरी साब के प्रति फांस बन गई। एक हीन ग्रन्थी का निर्माण हो गया कि एक राज्य का राजस्व मंत्री, देहाती पृष्ठभूमि का, विश्व नेता पंडित नेहरू को चुनौति कैसे दे सकता है? अखबारों में चरणसिंह के पक्ष में जो रिपोर्ट और सम्पादकीय लिखे गये थे, नेहरू को लगा कि इससे चरणसिंह राष्ट्रीय हीरो बनते जा रहे हैं। गांधीजी और पटेल के बाद, उनकी धारा को नेतृत्व देने वाला जैसे अवतरित हो चुका था। वे मन ही मन चरणसिंह के प्रति ईर्ष्यालू बन गये। अधिवेशन समाप्ति पर जब सदस्य जाने लगे तो उन्होंने चरणसिंह को बधाई दी थी। उन्हें वे लोग घेरे रहते। निकटता से बातचीत करने की होड़ लगी हुई थी। अनेक ने बातचीत में प्रस्ताव का समर्थन करने की मजबूरी भी बताई। जब ये रिपोर्टें पंडिन नेहरू के पास पहुंची तो वे और भी नाखुश हो गये।

8.

नागपुर से लौटने के बाद चौधरी साब अत्यधिक आत्मविश्वास से भरे हुए थे। उनका अध्ययन, अनुभव और आत्मविश्वास एक साथ जुड़कर जैसे एक राह की तलाश में लगे हुए थे। इन दिनों उनके पास सिंचाई और बिजली विभाग भी थे। राजस्व मंत्रालय के अतिरिक्त अन्य विभाग आश्चर्यजनक रूप से जल्दी जल्दी बदले जा रहे थे। इससे पूर्व वित्त मंत्रालय उनके पास सिर्फ 6 महीने ही रहा। बार बार क्यों बदले जा रहे थे, इसका कोई कारण नजर नहीं आ रहा था। शायद उन्हें निराश या उकसाने के लिए ऐसा किया जा रहा था। राजस्व विभाग तो उनका पर्याय बन चुका था इसलिए शायद बदला नहीं जा रहा था। विभाग बदलने के पीछे 'खालिस चिंतक' और बुद्धिजीवी कहे जाने वाले मुख्यमंत्री सम्पूर्णानन्द के द्वारा हो रहा था। नागपुर के अधिवेशन के पश्चात् तो सम्पूर्णानन्द और भी व्यक्तिगत कुंठाओं से त्रस्त हो गये थे। उनका अहं और इमामी रूप चौधरी साब के प्रति बढता जा रहा था.

बिजली विभाग तो भ्रष्टाचार के लिए कुख्यात था। ज्यों ही चौधरी साब ने चार्ज सम्भाला, अधिकारियों के कान खड़े हो गये। फाइलों की औपचारिकताएं पूरी की जाने लगी। चौधरी साब की यह विशेषता थी कि चाहे वे किसी भी विभाग में कार्यरत हों, सभी उच्चअधिकारी उनसे छुपे हुए नहीं थे। तत्कालीन मुख्य अभियंता भ्रष्टाचार में लिप्त था। आते ही उन्होंने उसे लम्बी छुट्टी पर भेजँ दिया। आत्म-मुग्धता में व्यस्त रहने वाले मुख्यमंत्री सम्पूर्णानन्द को यह पसंद नहीं था। वह अवसर की ताक में जैसे घात लगाये बैठे थे।

उन्हीं दिनों पंडित नेहरू ने लखनऊ की यात्रा की। चौधरी साब ने भी मुलाकात की। अब वे सम्पूर्णानन्द से बिल्कुल निराश हो चुके थे। उन्होंने पंडित नेहरू से स्पष्ट कहा, "सम्पूर्णानन्द राज्य को एक साफ-सुथरा और सक्षम प्रशासन देने में असमर्थ हैं तथा उन्हें पता नहीं कि जनता, विशेष कर गांवों में रहने वाली जनता किन समस्याओं से जूझ रही है। सबसे बड़ी बात, भ्रष्टाचार या नौकरशाही की अयोग्यता की तो उन्हें बिल्कुल परवाह नहीं।"

उन्होंने पंडिन नेहरू को एक सौलह पृष्ठ का पत्र भी दिया जो तथ्यों और तर्कों से भरा हुआ था। नेहरू से कहा, "आप इस पत्र के साथ मुख्यमंत्री से बातचीत कर सकते हैं।"

यह पंडित नेहरू की 'गुरूता' को जैसे कम आंकना था। चौधरी साब को विश्वास था कि जब पंडित जी को प्रमाण सहित आरोप पत्र सौंपा है तो मुख्यमंत्री से बात करते समय उन्हें भी बुलाया जायेगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। पंडिन नेहरू चिंतन की मुद्रा ओढे रहे और उनसे कुछ बोले नहीं। कुछ दिन बाद पंडित नेहरू का पत्र उन्हें मिला, जिसके प्रमुख अंश इस प्रकार थे-

"हम एक ऐसे देश में कार्यरत हैं जो अपने अनेक गुणों के होते हुए भी, सामाजिक और आर्थिक तौर पर पिछड़ा हुआ है, और इन सभी पिछड़ेपन के परिणाम हम भुगतते हैं, चाहे जो भी कहें,......डा. सम्पूर्णानन्द की विफलताएं एक बुद्धिजीवि की विफलताएं हैं, जो कभी कभी उनके रास्ते में आ जाता है। उनका वही गुण व्यक्तियों और समूहों से दूर रखने की कोशिश में उनकी राह में आता है। मैं उनके या किसी अन्य व्यक्ति की अच्छी बातों या कमियों के बारे में सरलतापूर्व लिख सकता हूं। इससे अधिक मदद नहीं मिलेगी। हमें व्यक्तियों को वैसे ही लेना है जैसे वे हैं और परिस्थितियां जैसी हैं, उसी पर निर्णय लेना है।"

उपरोक्त पत्र से स्पस्ट है कि पंडित नेहरू और सम्पूर्णानन्द का चिंतन धरातल नितांत समरूप था। पत्र से यह ध्वनि निकलती है कि गांवों में यदि कोई कार्य नहीं हो रहा है तो उसके लिए सम्पूर्णानन्द जैसा बुद्धिजीवि जिम्मेदार नहीं है। इसके लिए गांवों के पिछड़े और गंवार लोग ही जिम्मेदार हैं। सम्पूर्णानन्द की विफलता जैसे उनके बौद्धिक दिमाग की एक विशेषता हो सकती है, कमी नहीं। पंडित नेहरू और सम्पूर्णानन्द जैसे लोग सत्ता के शीर्ष पर बैठे थे तो यह उनका

अधिकार था। देश को उनके लिए एहसानमंद होना चाहिए। भारत के प्रधानमंत्री का इस प्रकार का पत्र पाकर चौधरी साहब विस्मित थे। तब उन्होंने पंडित नेहरू के पत्र का उत्तर देते हुए लिखा-

"......... अब, मैं अगर आप के 21 मार्च के पत्र में उतर प्रदेश सरकार के मामले में कुछ नहीं करने और डा. सम्पूर्णानंन्द को उनकी मर्जी के अनुसार कार्य करने देने के लिए दी गई दलीलों का संक्षिप्त उत्तर दे रहा हूँ तो इसके लिए क्षमा किये जाने की मुझे उम्मीद है। ऐसा लगता हैकि आपके अनुसार व्यक्ति जबकि महत्वपूर्ण है तो प्रशासन में अक्षमता और दृढता की कमी का असली कारण देश के सामाजिक और आर्थिक पिछड़ेपन में निहित है। मैं मतभेद अर्ज करता हूँ, मेरी राय में असली कारण व्यक्तियों में निहित है, अथार्त इसमें कि सरकार के सदस्य स्वयं सक्षम हैं या नहीं और उनके निजी आचरण नुक्ताचीनी से ऊपर हैं या नहीं तथा जनता को ऊपर उठाने के लिए समर्पण भावना उनमें कूट-कूट कर भरी हुई है या नहीं। व्यक्ति उतने ही परिस्थितियों के सर्जक हैं जितने कि वे उनकी देन हैं।

यह सच है कि हममें से सर्वोतम के विरूद्ध किसी किस्म का आरोपण किया जा सकता है लेकिन डा. सम्पूर्णानन्द के विरूद्ध जो आरोपण मैंने किया है, वह महज किसी या साधारण किस्म का आरोपण नहीं है। ऐसे आरोपण उनके पूर्ववर्ती के विरूद्ध या बंबई और मद्रास के मुख्य मंत्रियों के विरूद्ध नहीं किये जा सकते थे। भारत की कांग्रेसी सरकार के सिवाय अन्य किसी भी देश की लोकतांत्रिक सरकार ऐसे आरोपण की एक चौथाई से ही बीहड़ों में ठोकरें खाने के लिए भेज दी गई होती और उस पर अफसोस जताने के लिए कोई भी नहीं होता। सार्वजनिक आचरण का अच्छा स्तर नहीं कायम कर पाने के लिए या किसी देश द्वारा अपने प्रतिनिधियों से जो अपेक्षा की जाती है, उसके घोरतम उल्लंघन को माफ कर देने के लिए यह बहाना नहीं चल सकता कि हमारा देश सामाजिक और आर्थिक तौर पर पिछड़ा हुआ है। ...."

पंडितजी, मुझे क्षमा करें अगर मैं यह अनुभव करूं कि कोई ऐसी बात है जिसका गुण-दोष से कुछ लेना देना नहीं, लेकिन जो उत्तर प्रदेश में सही सही कुछ करने से आपको रोकती है। मैं ईमानदारी से यकीन करता हूँ और इस यकीन के पिछे समुचित तर्क हैं कि संयुक्त खेती अव्यवहारिक है, यह लोकतंत्र को क्षति पहुंचायेगी, उत्पादन में कमी लायेगी और बेरोजगारी का कारण बनेगी। ये विचार सिर्फ मेरे नहीं बल्कि कम से कम 90 प्रतिशत कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं के हैं जो मूलतः किसान हैं या देहाती क्षेत्र की स्थितियों के बारें में हर बात की जानकारी रखते हैं। लेकिन किसी में साहस नहीं कि खुले तौर पर इससे असहमति जाहिर करें। यही महारोग है, जिससे आज कांग्रेस संगठन ग्रस्त है......।

पंडितजी में महसूस करता हूँ कि कुछ सवालों पर अपने विचारों के चलते पासा मेरे विरूद्ध है और यह आने वाला समय ही बतायेगा कि मैं सही हूं या गलत।"

तब पंडित नेहरू ने चरणसिंह को लिखा था-

"आपने अपने पत्र के अंत में अपनी इस भावना का हवाला दिया है कि कुछ सवालों पर अपने विचारों के चलते आप असुविधाओं के बीच संघर्षरत रहे हैं। मैं समझता हूँ कि आप का मतलब संयुक्त सहकारी खेती से है। मैं नहीं सोचता कि इसी खास बात ने वास्तव में किसी निर्णय को प्रभावित किया, हालांकि यह हो सकता है कि अनजाने में इसकी छाप पड़ी हो ।"

पंडित नेहरू के पत्र की अंतिम पंक्ति इस बात का संकेत करती है कि जो चौधरी साब, नेहरूजी के बारे में जो दृष्टिकोण रखते थे, वह सही था। और इसका कारण सहकारी खेती के प्रस्ताव का जोरदार विरोध था। इस विरोध ने बौद्धिकता का सहारा लेकर हवाई उड़ान भरने वाले पंडित नेहरू को जमीन पर ला पटका था। वे अपमानित एवं पराजित अनुभव करने लग थे। इस वैचारिक महासमर में चौधरी साब की विजय हमेशा के लिए हो चुकी थी। इसका प्रमाण है कि आज तक सहकारी खेती एवं खाद्यान्नों का राज्य व्यापार हो ही नहीं पाया। किन्तु पंडितजी के दिल में चरणसिंह के प्रति फांस बन चुकी थी। सम्पूर्णानन्द को बदलना पंडित नेहरू के अहं के

विरुद्ध था और उन्हें सहन करना चौधरी साब के लिए त्रासदी थी। यही उन्हें बैचेन किये था। सता को वे सुख-सुविधा का साधन मानने को तैयार न थे। उन्हें यह समझ में नहीं आ रहा था कि गरीब जनता का दु:ख दूर करने में इतनी आनाकानी क्यों? शीर्ष सता पर बैठे नेताओं को अपनी व्यक्तिगत कमजोरियां स्वीकार करनी ही चाहिए। ऐसे ही क्षणों में चौधरी साब की सहिष्णुता दांव पर लग जाती थी।

तभी एक घटना और घटी। उनके पास बिजली विभाग की एक फाइल आई। मिर्जापुर में बिड़ला की अल्यूमिनियम फैक्ट्री को, लागत मूल्य से भी बहुत कम मूल्य पर राज्य सरकार ने बिजली देने का निश्चय किया था। फाइल देखते ही वे चौंक उठे। उन्होंने तुरन्त सचिव को बुलाया।

"यह क्या मामला है?"

"सर, यह बिड़ला फैक्ट्री को बिजली देने की स्वीकृति बाबत है।"

"लेकिन, यह तो लागत मूल्य से भी बहुत कम रेट है। बिड़ला कोई गरीब व्यक्ति तो नहीं। इसका नुक्शान तो आम जनता को होगा।"

सचिव चुपचाप खड़ा रहा। चौधरी साब की नजरों ने जैसे पुन: प्रश्न किया।

"सर, मुख्यमंत्री ऐसा चाहते हैं।"

"क्या?" चौधरी साब अवाक रह गये।

उन्होंने फाइल का पुन: अध्ययन किया। सचिव से विचार विमर्श हुआ। रिहांड योजना से उपलब्ध कुल बिजली का आधा भाग बिड़ला की फैक्टरी को देने का प्रस्ताव था। बिजली की लागत प्रति यूनिट 33.16 रुपये थी जबकि बिड़ला को दो रुपये पर 25 साल के लिए दी जानी थी। उनके सामने किसान का चेहरा घूम गया। बेचारों को खेती के लिए बिजली कहां से मिले? तभी उनकी कलम चली और लिख दिया। 'अस्वीकृत'। सचिव फाइल लेकर चला गया।

दूसरे दिन वे दौरे पर चले गये। वापस आने पर पता लगा कि मुख्यमंत्री ने स्वयं फाइल मंगाकर स्वीकृति के आदेश जारी कर दिये। 1963-64 की आडिट रिपोर्ट में यह कहा गया था कि इससे राज्य को प्रतिवर्ष 50-55 करोड़ रुपये का घाटा हुआ था।

चौधरी साब को महसूस हुआ कि मुख्यमंत्री ने अपने समाजवादी लबादे को उतार फैंका है। उनका चिंतन, दार्शनिकता, समता के सिद्धान्त सब जैसे छल थे। यह तो स्पष्ट पाखण्ड था। उनके भीतर का कबीर मानो मुखर हो उठा-

"कबीर माया पापिणी, हरि सूं करै हराम।
मुख कड़ियाली कुमति की, कहण न देही राम॥"

उनका हरि किसान था। गांव का गरीब, मजदूर उनके देव थे। उनकी हित की बात करने पर पंडित नेहरू ने उन्हें पिछड़ा, गंवार बताकर एक 'बुद्धिजीवि, मुख्यमंत्री' का बचाव किया था। और अब, उन सबका हक मारकर एक धनाड्य सेठ को हानि, बल्कि भारी हानि उठाकर बिजली दी जा रही थी। ऐसी बौद्धिकता किस काम की। कबीर ने भी तो फटकार लगाई थी-

"वेद-पुरान पढत अस पांडे खर चंदन जैसे भारा।
राम नाम तत समझत नाहीं, अंति पड़े मुखधारा॥"

क्या यह वैसा नहीं है कि पुस्तकों का बोझ ढोने वाले तो घर घर में मौजूद हैं, वन वन में तपस्वियों के झुंड वर्तमान हैं लेकिन ईश्वर को कौन प्राप्त कर सका? वेद-पुराणों को लेकर बहस करने वाले समाज का क्या भला कर सकते हैं? जो स्वयं मुक्त नहीं, वे दूसरों को मुक्त होने का उपदेश देने वाले कौन होते हैं? जो व्यसन के लिए सता का उपयोग करता है, वह इस कबीर के सामने कैसे टिका रह सकता है। तब सचिवालय के कमरे में बैठा कबीर मानों गुनगुना उठा-

"मेरा-तेरा मनुआ कैसे इक होई रे।
मैं कहता हूं आंखिन देखी, तू कहता कागज की लेखी।
मैं कहता सुरझावनहारी, तू राख्यौ उरझाई रे।

मैं कहता तूं जागत रहियो, तूं रहता है सोई रे।
मैं कहता निर्मोही रहिये, तू जाताहै मोही रे।
जुगन जगन समुझावत हारा, कही न मानत कोई रे।''

ऐसी कुर्सी किस काम की जो उन्हें, उनके हरि (किसान) से हराम करे। उन्हें निर्णय लेने में जरा भी विलम्ब नहीं हुआ। इस्तीफा लिखकर भिजवा दिया। निजी सचिव को बुलाया, ''कोई पेंडिंग काम है तो अभी ले आओ; मैं घर जाऊँगा।''

राजस्व सचिव और अन्य अफसर एकत्रित हो गये। उन्होंने एक भरपूर नजर अपने सहयोगियों पर डाली। मुस्कराकर बोले,

''किसी के साथ दुर्व्यवहार हो गया हो तो माफ कर देना भाई।'' सभी पर जैसे एक साथ घड़ों पानी गिर गया।

''क्या बात करते हैं सर! सभी एक साथ बोल उठे।

उन्होंने आदेश दिया, ''सरकारी गाड़ी में मैं नहीं जाऊंगा। ड्राईवर को सूचना कर दो।'' कमरे में गहरा सन्नाटा छा गया था। वे तपाक से खड़े हुए और बाहर चल पड़े। तब तक निजी सचिव बाहर दौड़ गया था। एक विधायक दिखाई दिये, जिनकी स्वयं की गाड़ी थी। निजी सचिव ने तुरन्त उन्हें सारी बातें समझाई।

विधायक चौधरी साब के पास आये, ''चौधरी साब, मैं उधर ही जा रहा हूं। आइये मेरी गाड़ी में।''

वे एक बार ठिठके, निजी सचिव पर नजर दौड़ाई। सचिव की आंखें भर आई थी। वे पुनः मुस्कराये। उसके कंधे थपथपाये और जीप में बैठ गये। राजस्व सचिव से लेकर चपरासी तक सभी अवाक खड़े अपने इस दबंग नेता की विदाई देख रहे थे। यह कितने भावुक क्षण थे?

राज्यपाल थे वी. वी. गिरी। उन्होंने मुख्यमंत्री से बातचीत की। समझौते का प्रयास किया। किन्तु सफल नहीं हुए। तब भरे मन से इस्तीफा स्वीकार करने की घोषणा की।

पूरे उत्तर प्रदेश में तहलका मच गया। अखबारों के प्रतिनिधि भाग खड़े हुए। एक अनहोनी घटना घट गई थी जो शायद अप्रत्याशित नहीं थी। दूसरे दिन अखबार समाचारों और सम्पादकीय लेखों से अटे पड़े थे। लखनऊ का 'नेशनल हेराल्ड' पंडित नेहरू का अखबार था। उसके सम्पादक चलपतिराव ने इस्तीफे पर 23 अप्रेल 1959 के अंक में लिखा-

''श्री चरणसिंह के इस्तीफे में वैयक्तिक और सांगठनिक दोनों ही तरह की त्रासदी निहित है। उनका जाना उत्तर प्रदेश प्रशासन के लिए एक क्षति है और डा. सम्पूर्णानन्द ने भी एक ऐसे योग्य, अति उत्साही और घोर परिश्रमी सहयोगी को खो दिया है, जो अपनी सत्य निष्ठा के लिए प्रसिद्ध है, जबकि ऐसी प्रसिद्धि आज दुर्लभ है। ऐसे बहुत से अवसर थे जब नीति को लेकर चरणसिंह से हमारा गंभीर मतभेद रहा, लेकिन उद्देश्य के प्रति उनकी ईमानदारी, संबद्ध विषय की उनकी जानकारी और कर्तव्य के प्रति उनकी निष्ठा पर कोई प्रश्नचिन्ह नहीं लगा सकता था। अपने अंतिम कार्यकाल के दौरान वह विद्युत और सिंचाई जैसे बहुत ही बदनाम, उन दो विभागों में व्याप्त भ्रष्टाचार की जांच का व्यापक रूप से प्रशंसित कार्य कर रहे थे, जो ताजा खबरों के अनुसार अब उनके इस्तीफे की मंजूरी पर जश्न मनाने के लिए तैयार बैठे हैं, लेकिन खोजी जांच से बच नहीं सकते। कहानी का यह हिस्सा फिर भी पूर्ण नहीं है और चरणसिंह के वर्तमान इस्तीफे को अवश्य ही उस इस्तीफे के क्रम में लेना चाहिए जो उन्होंने नवम्बर 1957 में, उन्हीं के वक्तव्य के अनुसार, ''प्रशासन में मितव्ययिता, ईमानदारी, दक्षता, सार्वजनिक आचरण में ऊँचे मानदंड और जनता को ऊपर उठाने के लिए वास्तविक प्रयासों के मुद्दे पर दिया था। ऐसा लगता है कि मुद्दे इस वर्तमान इस्तीफे से भी जुड़े हैं, लेकिन इन मुद्दों पर वह विस्तार से वक्तव्य विधान सभा की आगामी बैठक में देना चाहते हैं। फिलहाल तो वह अंतरिक आरोप लगा ही चुके हैं, जिन्हें जनता अगर स्वीकार नहीं करती तो उतर देने के लिए कुछ जिम्मेदार व्यक्तियों को सामने आना है। कुप्रशासन सबसे

बड़ा आरोप है, जिसका ताजाचित्र है, रिहन्द बांध की बिजली का आवंटन इस तरीके से होना कि व्यवहारत: जनता के लिए बहुत ही कम बिजली बचे। रिहन्द बांध की बिजली के बंटवारे के बारे में सरकार चुप बैठी नहीं रह सकती, क्योंकि उससे जनता का व्यापक हित जुड़ा है।''

चेलापति राव के सम्पादकीय से स्पष्ट है कि नवम्बर 57 में भी चौधरी साब ने इस्तीफा दे दिया था। क्यों? सार्वजनिक जीवन में स्वच्छ छवि के लिए तथा गरीबों के लिए तत्परता से काम करने हेतु। तब नागपुर अधिवेशन नहीं हुआ था। पंडिन नेहरू से सवाल-जवाब नहीं हुए थे। इसलिए सम्पूर्णानन्द की हिम्मत नहीं हुई थी कि इस्तीफा स्वीकार कर लें। लेकिन उसके बाद भी चरणसिंह को चैन नहीं मिला था। मानों उन्हें अपराध बोध होता कि जिस जनता ने हमें चुनकर भेजा, उसके विश्वास को हम बनाये रखने में असफल सिद्ध हो रहे हैं। सम्पूर्णानन्द के दार्शनिक लबादे से जनता को रोटी तो नहीं मिल रही थी।

'गंगा तट पर घर करै, पीवै निर्मल नीर।
इकनाम बिना मुक्ति नहीं, कह गए दास कबीर।''

प्रशासन में बेईमानों की बन आई थी। लगता है, अफसरों की वजह से ही इनके विभाग बार बार बदले जा रहे थे। महंत बने सम्पूर्णानन्द सिर्फ कुर्सी की शोभा बढा रहे थे। चौधरी साब बार बार पुकार रहे थे-जनता के प्रति जबाबदेह बनो नहीं तो हमारी मुक्ति नहीं।

उत्तर प्रदेश के पुर्व राज्यपाल एवं केन्द्रीय मंत्री के. एम. मुन्शी ने जो टिप्पीणी चौधरी साब के इस्तीफे पर की थी, उसे यहां उद्धत करना अप्रासंगिक नहीं होगा-

''श्री चरणसिंह, जिन्हें आप सब अच्छी तरह जानते हैं, देश के एक बहुत ही योग्य और ईमानदार मंत्री के रूप में जिन्हें मैंने जाना है, भूमि सुधार के सबसे बड़े विशेषज्ञों में से एक हैं। सहकारी कृषि की उन्होंने निन्दा की है। स्वभावत: नागपुर प्रस्ताव के विरोध के आरोप उन पर लगे हैं। क्योंकि जो लोग सहकारी कृषि का विरोध करते हैं, वे हमारे जन कल्याण-विशेषज्ञों की निगाह में धोखेबाज अविवेकी और लोकतंत्र विरोधी है-हां साम्यवादी सर्वहारावाद के तरीके से।

वे पूछते हैं, विकल्प क्या है? और 'पिलेट' की तरह किसी जबाब का इंतजार नहीं करते। कोई भी व्यक्ति, जो सोचने में असमर्थ नहीं और साम्यवादी नियोजन की तकनीक का आग्रह नहीं रखता, उसे लगेगा कि भारत जैसी मुक्त अर्थ में व्यवस्था तकनीक का आग्रह नहीं रखता, उसे लगेगा कि भारत जैसी मुक्त अर्थ व्यवस्था में आर्थिक आजादी सिर्फ कृषि आधार को मजबूत बनाने पर मिल सकती है, कि विदेशी रोटी से मुक्ति को ही आर्थिक मुक्ति की सर्वोपरि शर्त होना है, कि आहार और कच्चे माल ही किसी औद्योगिक ढांचे को सुनिश्चित आधार उपलब्ध करा सकते हैं। लेकिन हमारे निकट साम्यवादी जनकल्याण-विशेषज्ञों को नहीं।'

इससे स्पष्ट है कि चरणसिंह के इस्तीफे को स्वीकार करने में पंडित नेहरू का हाथ रहा है। शायद वे चौधरी साब को विरोधी होने की सजा देना चाहते थे। किन्तु इस कबीर का तो जैसे मन हल्का हो गया था।

जब घर पहुंचे, तो बगल में कागज दबाये, निराले ही ढंग से अपने कमरे में प्रविष्ट हुए। गायत्री देवी को शंका हुई। सचिवालय से तो रात से पहले कभी नहीं आते थे। आज सरकारी गाड़ी नहीं थी। वे कमरे में आई और आंखों ही आँखों में पूछा, ''कहो, क्या हुआ?''

वे मुस्कराये थे। गायत्री देवी बैठकर उन्हें देखने लगी। चौधरी साब तो कोई उत्तर नहीं दे सके किन्तु उनका कबीर गुनगुना उठा-

''संतो भाई आई ज्ञान की आंधी,
रे भाई, आई ज्ञान की आंधी।
भ्रम की टाटी सबै उड़ानी, माया रहै न बांधी॥
हित चित की है थूनी गिरानी, मोह बलीड़ा टूटा।
त्रिसना छानि परि घर उपरि, दुरमति भांडा फूटा॥

जोग जुगति करि संतौं बांधी निरचू चुबै न पाणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाणी॥
आंधी पाछै जो रूल बरसै, तिहीं तेरा जन भींना।
कहै कबीर मनि भया प्रशासा, उड़े भानु जब चीनां॥"

गायत्री देवी के कुछ समझ में नहीं आया। वे थोड़ी रुष्ट सी होकर बोली, "कबीर ही बने रहोगे, या दुनियादारी की भी कोई खबर है?"

वे मुस्कराकर बोले, "आज जी हल्का हो गया है। इस्तीफा देकर आ गया हूं।"

गायत्री देवी को कुछ दिनों से ऐसा आभास हो रहा था। नागपुर अधिवेशन के बाद उन्हें लगा था, वे किसी भी दिन इस्तीफा दे सकते हैं। जेब में हर समय इस्तीफा तैयार रखने वाले के प्रति और क्या सोच हो सकता है?

ग्रामीणजन, उनका असली भारत, तो खबर सुनकर हतप्रभ रह गया था। गांवों में किसान समूह में एकत्रित हो, यही चर्चा करने लगे। सभी के चेहरों पर चिंता की स्पष्ट लकीरें खींच गई थी। अब उनकी आवाज कौन सुनेगा? अब उनके चौधरी क्या करेंगे?

दूसरे ही दिन से, प्रदेश भर से आने वालों की बाढ़ आ गई थी। 'चरणसिंह जिन्दाबाद' के नारों से लखनऊ शहर हिल उठा। थोड़े थोड़े अंतराल के बाद वे लॉन में बैठे जन समूह के बीच आ रहे थे। उन्हें देख कुछ किसानों की आंखें नम हो उठी। तब वे मुस्कराकर ढांढस बंधाते, "अरे, तुम रो रहे हो? किसान यदि ऐसा करेगा तो देश भूखा मर जायेगा भाई। तुम तो वो चट्टान हो जो, वर्षा, सरदी, गर्मी और पतझड़ में अटल खड़ी रहती है।" सचमुच ही तब भरी आंखों वाले लोग मुस्कराने की कोशिश करते। तभी गगन भेदी आवाज गूंज उठती, 'चौधरी चरणसिंह-जिंदाबाद।' नारे लगाने वालों को वे रोककर कहते, "देखो भाई, अपना समय और पैसे वर्बाद मत करो। अपने खेतों में जुटे रहो। सब ठीक होगा।"

लेकिन आने वालों का क्रम रुक नहीं रहा था। चौधरी साब कई बार झुंझला उठते, "क्यों मुझे तंग करते हो? मैं मरा तो नहीं जा रहा।" आने वाले झेंप जाते। वे आश्चर्य से अपने चौधरी को निहारते।

तब चौधरी साब नॉर्मल हो कहते, "मेरे ऊपर कोई संकट आयेगा, तो किसानों, मैं स्वयं आपके पास खेत में आऊंगा। यह संघर्ष तो लम्बा चलेगा भाई। लेकिन जीत इस देश के किसानों की होगी।"

तब फिर सैकड़ों कंठ एक साथ जयघोष करते। यह सिलसिला कई दिनों तक चलता रहा। उधर सचिवालयों में भी जैसे सन्नाटा छा गया था। पंडित पंत के दिल्ली जाने के बाद और अब चौधरी साब के इस्तीफा देने से मानो यह भवन बौना हो गया था। आजकल अक्सर कहा जाता है कि राजब्यूरोक्रेट्स चला रहे हैं। अफसरशाही और लाल फीताशाही का रोना मंत्री भी रोते हैं। लेकिन चौधरी साब के साथ ऐसा नहीं था। उनके निजी सचिव तिलकराम शर्मा ने लिखा है कि उनके मंत्रालय के अतिरिक्त भी दूसरे सचिवों को कई बार वे फोन से बुलाते थे। अफसरों को निश्चित समय दे दिया जाता। उस समय यदि उनका स्वयं का मंत्री भी बुलाते तो सचिव क्षमा मांग लेते-"सर, मुझे चौधरी साब ने याद किया है। उनसे मिलकर आता हूँ।" और वे निश्चित समय पर पहुंचते ही।

कोई भी अधिकारी चाहे वह कितना भी बड़ा क्यों न हो, उनके सामने सिगरेट पीने की तो कल्पना ही नहीं कर सकता था। बल्कि कमरे में प्रविष्ट होने से पहले स्वयं पर नजर डालकर सुनिश्चित कर लेता कि कोई बटन खुला तो नहीं है। पैंट की जेब में हाथ डालकर या हाथ पीछे रखकर बात करने का साहस कोई नहीं कर पाता था। जिस विषय पर बात करनी होती, उसकी सम्पूर्ण जानकारी चौधरी साब को अंगुलियों पर रहती। इसलिए आई. एस. अधिकारी भी सचेत हो उनके सामने उपस्थित होते। दूसर विभागों को जाने वाली जनता की शिकायत पत्रों पर वे स्वयं

हस्ताक्षर करते थे। ज्यों ही वह डाक सम्बन्धित सचिव के पास जाती, वह चौकन्ना होकर उसे पढता और आवश्यक कार्यवाही करता। कार्यवाही से चौधरी साब को सूचित किया जाता।

इसका यह अर्थ नहीं कि वे अधिकारियों को डांट पिलाते थे। कभी ऊंची आवाज में भी उन्हें बोलते नहीं सुना गया। बस, उनकी तीक्ष्ण दृष्टि ही ऐसी थी कि कोई अधिकारी उनसे कुछ छुपा नहीं पाता था। राजस्व अभियान के दौरान राजस्व सचिव जहुरूल हसन की उन्होंने भूरी भूरी प्रशंसा की थी। उनका मानना था कि यदि ऐसा राजस्व सचिव नहीं मिलता तो भूमि सुधार का अभियान अपने लक्ष्य को पहुंच ही नहीं सकता था। अक्सर ही जब किसी सचिव को बुलाना होता तो वे फोन पर पूछते, "क्या आपके पास समय है, मेरे पास आने के लिए?" भला सचिव कैसे इन्कार करता। तब कहते, "ठीक है, आप अमुक समय आने का कष्ट करें।"

जो भ्रष्ट अधिकारी थे, उनकी जान निकलती थी। कभी सामने नहीं पड़ते। वही, अब इस्तीफे के बाद सबसे अधिक खुश थे। गुरू गंभीर डा. सम्पूर्णानन्द तो बुरी तरह असफल मुख्यमंत्री साबित हो चुके थे। सामन्ती और अभिजात्य विचारों वाले मंत्री और अफसरों को कोई टोकने वाला नहीं बचा था। हां, ईमानदार और ग्रामीण पृष्ठ भूमि के नेता और अफसर निराश हो उठे। वे मिलने पर एक ही चर्चा करते, "अब क्या होगा?"

9.

जैसा कि लिखा जा चुका है, 1957 के चुनाव में चन्द्रभानु गुप्ता चुनाव हार चुके थे। गुप्ता के बारे में पंडित नेहरू ने टिप्पणी की थी कि गुप्ता वस्तुत: पूंजीपतियों का नुमाइन्दा है। इस समय गुप्ता सता से जुड़ने के लिए हाथ-पांव मार रहे थे। गुप्ता सम्पूर्णानन्द से अत्यधिक नाराज थे। कुछ मध्यस्थों ने मिलकर चौधरी साब और गुप्ता में समझौता करा दिया। दोनों में वैचारिक असमानता स्पष्ट तौर पर थी। किन्तु गुप्ता फतवा जारी करने वाली राजनीति के शाही इमाम तो नहीं थे। वे गुरूता के बोझ से दबे हुए नहीं थे। इसी परिप्रेक्ष्य में दोनों असंतुष्ट नेताओं की मित्रता हो गई।

और तब पासा ही पलट गया था। डा. सम्पूर्णानन्द सरकार के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव विपक्ष ने रख दिया था। चौधरी साब ने 90 विधायकों की एक सूचि राज्यपाल को सौंपदी। इसमें कहा गया था कि हम सम्पूर्णानन्द मंत्रीमंडल के समर्थक नहीं हैं लेकिन व्हिप के कारण हम विरुद्ध में मत नहीं दे सकते। वह अविश्वास प्रस्ताव तो गिर गया लेकिन कुछ समय बाद ही सम्पूर्णानन्द को इस्तीफा देना पड़ा।

यह दिसम्बर 1960 के दिन थे। पंडिन नेहरू की भविष्यवाणी सच साबित हुई कि चरणसिंह के बिना यू. पी. में कोई सरकार नहीं चल सकती। सम्पूर्णानन्द के जाने के बाद लगभग तैय लग रहा था कि अब चौधरी साब ही मुख्यमंत्री बनेंगे। उनके समकक्ष अन्य कोई नेता नहीं था। चन्द्रभानु गुप्ता काफी वरिष्ठ थे, किन्तु वे किसी भी सदन के सदस्य नहीं थे। लोकप्रियता में भी चरणसिंह का कोई मुकाबला नहीं था। उस समय एक अखबार की टिप्पणी थी, "आज यदि विधायकों को स्वतंत्र रूप से मतदान करने दिया जाये तो 80 प्रतिशत विधायक चौधरी साब के पक्ष में मिलेंगे।"

यह चन्द्रभानु गुप्ता से छुपा हुआ नहीं था। जोड़-तोड़ में माहिर गुप्ता दिल्ली दौड़ गये। पंडिन नेहरू ने उसी 'पूंजीवादी नुमाइन्दे' को मुख्यमंत्री बनाना स्वीकार कर लिया। दूसरे दिन तो गुप्ता ने मुख्यमंत्री पद की शपथ ले ली।

यह चौधरी साब के साथ ज्यादति थी। जनता और अखबारों में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई।

एक ऐसे व्यक्ति को मुख्यमंत्री बनाया गया जो विधान सभा का चुनाव हार चुका था तथा विधान परिषद का भी सदस्य नहीं था। अखबारों में तीखे सम्पादकीय लिखे गये कि यह सब इसलिए हुआ कि चौधरी साब ने पंडित नेहरू के प्रस्ताव का विरोध किया था। जिस चन्द्रभानु गुप्ता को चन्दा एकत्रित करने वाला, पूंजीपतियों का एजेंट पंडित नेहरू ने बताया था, उसी को मुख्यमंत्री बना दिया। गुरूता ने यथार्थता को एक बार फिर नकार दिया। ग्रामीण सत्य पर शहरी अभिजात्य वर्ग का वर्चस्व स्थापित करने का षडयंत्र था। किन्तु चौधरी साब मूक बने देखते रहे।

तब देश में पहली बार एक चौंकाने वाला उदाहरण स्थापित हुआ। मुख्यमंत्री गुप्ता ने राज्यपाल से सिफारिश की कि उन्हें ही विधान परिषद के सदस्य के रूप में नियुक्त किया जाये। यह प्रजातंत्र और नैतिकता के सिद्धान्तों के विरुद्ध था। लेकिन ऐसा हुआ। आज तक भी यह पहला रिकार्ड है कि एक मुख्यमंत्री ने स्वयं को ही नियुक्त करवाया और वह भी, संसदीय प्रजातंत्र के सबसे बड़े हिमायती कहलाने वाले पंडित नेहरू के शासन में। चन्द्रभानु गुप्ता के साथ साथ पंडित नेहरू भी उपहास के पात्र बने।

इस बार चरणसिंह को गृह, कृषि एवं पशुपालन विभाग का मंत्री बनाया गया। राजस्व मंत्रालय जानबूझ कर नहीं दिया गया। वे चाहते थे कि जिस असली भारत को पिछड़ा और गरीब होना नियति मान लिया गया था, उसे बराबर के धरातल पर लायें। इसलिए उनकी इच्छा थी कि राजस्व विभाग मिले। किन्तु अब तो केन्द्रीय नेतृत्व उनसे भयग्रस्त था। उनकी लोकप्रियता सबको खाये जा रही थी। गृह मंत्रालय देने के पीछे दो कारण थे। एक तो, ग्रामीण समाज से उन्हें अलग-थलग करना, दूसरा गृह विभाग में उनको असफल करार देना। नेतृत्व का विश्वास था कि गृह विभाग को संभालना उनके बुते की बात नहीं होगी। तब वे अलोकप्रिय साबित हो जायेंगे। यह माना जायेगा कि सिर्फ राजस्व विभाग ही संभाल सकते हैं।

लेकिन अखबारों में दूसरा ही नजारा था। मंत्रीमंडल में वापसी और वह भी गृहमंत्री के रूप में, अखबारों में स्वागत के समाचार छपने लगे। लगभग प्रत्येक अखबार ने सम्पादकीय छापकर उनसे यह अपेक्षा की थी कि वे इस बेलगाम विभाग को काबू में कर लेंगे। भ्रष्टाचार का बोलबाला था। पुलिस पर से जनता का विश्वास उठ चुका था। कानून व्यवस्था चरमरा गई थी। सभी अखबारों में पाठकों के पत्र छप रहे थे। सभी में गृहमंत्री के रूप में चरणसिंह का स्वागत किया गया था और उनमें असीम विश्वास प्रकट किया गया था। संवाददाताओं की विशेष टिप्पणियां प्रकाशित हुई थी जिनमें रिक्शा चालक से लेकर बड़े अफसर तक में चौधरी साब चर्चा के विषय बने हुए थे। सभी का विश्वास था कि चौधरी साब ही इस विभाग का सुधार कर सकते हैं। यह उनकी सबसे बड़ी शक्ति थी।

गृहमंत्री बने एक दो दिन ही हुए थे कि उनके निवास पर कानपुर से एक सज्जन मिलने आये।

चौधरी साब ने पूछा, "कहो, कैसे आना हुआ?"

वह सज्जन बोले, "कम कुछ नहीं था। सिर्फ आपके दर्शन करने आ गया।" चौधरी साब की जैसी आदत थी, बोले, "मैं कोई देवता तो नहीं हूं। क्यों खर्चा किया?"

सज्जन गद्गद् हो बोले, "हमारे लिए तो आप देवता हैं। मेरी लड़की कॉलेज पढने जाती थी। पिछले दिनों गुंडागर्दी बहुत बढ गई थी। कोई अनुशासन नहीं रहा। मैंने अपनी बेटी को घर में ही बैठा दिया। आपके गृहमंत्री बनते ही गुण्डागर्दी समाप्त हो गई। अब तो प्राचार्य ने विश्वास दिलाया है कि बदमाशी नहीं होने दी जायेगी। तब मैंने लड़की को कॉलेज भेजना शुरू कर दिया है। तभी सोचा, आपके दर्शन करके आऊँगा।"

चौधरी साब मुस्कराये। इतना ही कह सके, "अभी तो मैंने कुछ किया ही नहीं।"

लेकिन यह जादू सिर पर चढकर बोला, राजस्व मंत्री से भी अधिक गृह मंत्री चरणसिंह लोकप्रिय हो गये। पुलिस विभाग का कायापलट हो गया। सचमुच यह उनका स्वर्णकाल था। एक प्रशासक के रूप में उनकी धाक जम गई और 'चौधरी' शब्द सार्थक हो गया। आने वाले भविष्य

की नींव मानों इसी समय पड़ गई थी। इसी बुनियाद पर वे बाद में मुख्यमंत्री, केन्द्रीय गृहमंत्री, वितमंत्री और अन्तत: प्रधानमंत्री बने। बहरहाल...

चौधरी साब का विश्वास था कि भ्रष्टाचार ऊपर से नीचे की ओर फैलता है। गृहमंत्रालय की फाइलों का अवलोकन करने पर पाया कि आई. जी. पुलिस का कार्यकाल गैर कानूनी रूप से बढाया गया है। सफाई तो ऊपर से शुरू होनी है। उन्होंने तुरन्त आई. जी. को बुलाया–

''आपकी तो आयु कभी की पूरी हो गई।''

''यस सर।''

''अब और नहीं। रिटायरमैंट की तैयारी करो।''

''ओ. के. सर।''

सचिवालय के गलियारों और गृह विभाग की रोबीली दीवारों के पार तुरन्त यह खबर फैल गई–''आई. जी. को हटाया जा रहा है।'' फिर क्या था? जिला मुख्यालयों और प्रत्येक थाने तक चर्चा होने लगी–

''सुना तुमने?''

''क्या?''

''आई. जी. को चौधरी साब हटा रहे हैं। अब सावधान हो जाओ। पहले की तरह सुस्ती नहीं चलेगी।''

''जो हुक्म।''

और पूरा पुलिस महकमा रातों रात बदल गया। फाइलों के वाउचर पूरे किये जाने लगे। रिश्वतखोरी स्वत: बन्द हो गई। थाने मानों दु:खीजन के लिए मंदिर बन गये। गृह मंत्री चरणसिंह के बारे में अनेक दंतकथाएं प्रचलित हो गई। कभी कहा जाता कि वे फरियादी बनकर थाने दार के पास गये और उसे रिपोर्ट लिखने की विनती की। थानेदार ने धमका दिया। तब चरणसिंह ने अपना परिचय पत्र पेश किया। तत्काल थानेदार को निलंबित होना पड़ा। ऐसी कहानियों से जनता में निर्भयता और पुलिस में कर्तव्यनिष्ठा फैली। पुलिस विभाग में तो खलबली मची ही रहती। पता नहीं किस भेष में चौधरी साब आ धमकें। उन्होंने विभाग को आश्वासन दिया, ''कर्तव्य पालन में किसी प्रकार का सरकारी या राजनैतिक हस्तक्षेप नहीं होने देंगे। ईमानदारी से ड्यूटि करने पर कोई डर नहीं रहना चाहिए।''

पुलिस के निचले स्तर पर मनोबल बहुत बढा। सिपाहियों को महसूस हुआ, चौधरी साब के रहते उनकी नौकरी को कोई खतरा नहीं है। पुलिस प्रशासन में व्यापक सुधार प्रारम्भ किये गये। थानों में पहली बार वायरलैस सैट और गाड़ियों की व्यवस्था की गई। हथियारों और वरदी में सुधार किया गया। जो सिपाई ऊंचे अफसरों की मनमानी से अपना नैतिक साहस खो चुके थे, उनमें स्वाभीमान जाग उठा। ऐसे गृहमंत्री की कल्पना नहीं की थी जो कठोर तो हो किन्तु कर्मचारियों के कल्याण को सर्वोपरि रखे। इससे वे ख्याति के शिखर पर पहुंच गये। जनता उनमें सरदार पटेल का चेहरा देखने लगी। यह अजीब बात थी कि जनता और पुलिस दोनों उनका गुणगान करने लगी।

उन्हीं दिनों, आगरा, मैनपुरी, इटावा आदि क्षेत्रों में दस्युओं का भारी आतंक था। डाकुओं का ही शासन चल रहा था। जनता भय से त्रस्त थी। तब उन्होंने घोषणा की, ''मैं इन बीहड़ इलाकों में पैदल यात्रा करूंगा।''

आई. जी. से लेकर सिपाई तक, सभी चकित थे। रिक्शा चालक, कुली, चपरासी से लेकर अफसर, सभी विस्मित थे। डाकुओं को प्रत्यक्ष चुनौति थी। वे जंगल में कई दिनों तक घूमे। जनता को निडर बनने का आह्वान किया। इस क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन किया। यह देश में पहला उदाहरण था और है। डकैत यू. पी. के जंगलों से भाग छूटे। डकैती के मामले इने-गिने ही रह गये। तब पुलिस का भी हौसला बढा। अखबारों की सुर्खियों में वह छा गये। विपक्षी दलों ने भी चौधरी साब को सिर आंखों में बैठा लिया।

दंगा-फसाद करने वाले विद्यार्थियों की शामत आ गई। उनके विरुद्ध पंजीकृत मुकदमों को वापस लेने से इन्कार कर दिया। एक विधायक डकैती के केस में फंस गया था। उसकी सिफारिश करने एक मंत्री आये। चौधरी साब क्रोध में उबल पड़े, "जो विधायक होकर डकैती में लिप्त हो, वह तो आम डाकू से भी खतरनाक है। तुम किसकी सिफारिश करने आये हो?"

मंत्री ने अनुनय-विनय की किन्तु चौधरी साब को टम से मस नहीं कर सके। एक अन्य विधायक के विरुद्ध फौजदारी मुकदमा था। इसमें भी हस्तक्षेप करने से उन्होंने स्पष्ट इन्कार कर दिया। इसे बाद में कत्ल के आरोप में सजा मिली। प्राय: इन्हीं कारणों से चौधरी साब के लिए कहा जाता था कि वे अभिमानी हैं और किसी की बात मानने को तैयार नहीं होते। भला राजनीति में ऐसा व्यक्ति कैसे सफल होगा?

इन्हीं दिनों, एक ट्रेफिक पुलिस के सिपाही की, तीन चार छात्रों ने मिलकर पिटाई कर दी थी। छात्रों के विरुद्ध मुकदमा बन गया था। संयोग से उनमें से एक छात्र का राजपत्रित पद पर चयन हो गया। चरित्र के बाबत जांच-पड़ताल के कागज शुरू हो गये। तब एक मंत्री ने चौधरी साब से उक्त छात्र को माफ कर देने का निवेदन किया।

"देखेंगे।" कहकर उन्होंने टाल दिया।

दूसरे दिन लड़के की विधवा मां और उसका नाना चौधरी साब के पैरों में गिर पड़े।

"अरे..रे...ये क्या हो रहा है भाई?"

एक विधवा महिला और बुजुर्ग के ऐसे व्यवहार से वे लज्जित हो गये। यह तो उनके संस्कार के विरुद्ध था। छात्र के भविष्य का भी सवाल था। उन्होंने प्रस्ताव रखा, "तुम्हारा बेटा पुलिस लाईन में सबके सामने उक्त सिपाई से माफी मांगै और वह छोड़ दे तो मैं भी क्षमा कर सकता हूं।"

ऐसा ही किया गया। पुलिस-सिपाहियों में चौधरी साब के प्रति इज्जत और बढ गई थी। एक विद्यार्थी और विधायक के प्रति चौधरी साब के दृष्टिकोण को समझा जा सकता है।

एक समय एक केन्द्रीय नेता लखनऊ आये हुए थे। व्यस्त कार्यक्रम था। दिन भर के बाद शाम को केन्द्रीय नेता का काफिला हवाई अड्डे की ओर चल पड़ा। ड्यूटि पर तैनात सिपाही का, एक मंत्री की कार का फाटक बन्द करते समय हाथ फंस गया था। ऊपर की चमड़ी पूरी तरह कट गई थी। हाथ लहूलुहान हो गया था। केन्द्रीय मंत्री को विदाई देने के चक्र में सभी गाड़ियां हवाई अड्डे की ओर दौड़ रही थी। किसी के पास फुर्सत नहीं थी कि हाथ से घायल सिपाई को कोई पूछे भी। गृहमंत्री चरणसिंह की कार भी सामने से गुजरी। सहसा ही सिपाही ने देखा कि चौधरी साब ने अपनी गाड़ी एक ओर रुकवादी है। सिपाई को बुलाया गया। चौधरी साब ने उसकी चोट का कारण पूछा। सिपाई ने बताया कि मंत्री की गाड़ी का फाटक बन्द करते समय ऐसा हो गया।

"ठीक है, तुम मेरी गाड़ी में बैठो।" चौधरी साब का आदेश था। उन्होंने अपनी गाड़ी को काफिले से अलग कर ली। सिपाई को तुरन्त अस्पताल ले गये। अपने सामने उसका इलाज कराया। तब तक केन्द्रीय मंत्री जा चुके होंगे, इसलिए वे हवाई अड्डे गये ही नहीं। यों अनेक लोगों ने अपनी गाड़ियां रोककर सिपाई से सहानुभूति प्रकट कर अस्पताल जाने की सलाह दी थी लेकिन केन्द्रीय मंत्री की विदाई के सामने इस तुच्छ कार्य को महत्व नहीं दिया। तब राज्य के गृहमंत्री चरणसिंह ने रस्म तोड़कर एक सिपाही के दर्द को महसूस किया।

यह करुणा और कठोरता साथ साथ चलती। भ्रष्ट अफसरों के प्रति कड़ाई का कोई अन्त नहीं था। स्थानान्तरण या प्रमोसन के मामले में उन्होंने किसी की मानी। प्रत्येक अधिकारी की गतिविधियों का विवरण मानो उनके दिमाग में सुरक्षित था। समस्त जिला अधिकारियों और पुलिस अधीक्षकों के नाम उन्हें याद रहते। कोई अधिकारी बार बार किसी नेता से स्वयं के लिए सिफारिश करवाता तो चौधरी साब नाराज हो जाते। तब ऐसे अधिकारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करते। इससे पुलिस दल में यह संकेत मिल गया कि नियम विरुद्ध किसी भी व्यक्ति को शह नहीं मिलेगी। ईमानदारी और परिश्रम की कद्र होगी। यह वह समय था जब यू. पी. में सब-इन्सपेक्टर

के चुनावों में सिफारिश और रिश्वत पूर्णत: बन्द हो गई थी।

यदि एक ही प्रकार की गलती सिपाही या बड़ा अधिकारी करता तो बड़े अधिकारी को वे अधिक सजा देने के पक्ष में थे। उनका मानना था कि उच्च स्तर पर बैठे अधिकारी आदर्श प्रस्तुत करें तभी नीचे के कर्मचारी सुधरेंगे। नेताओं के लिए तो बार बार कहा था, ''सार्वजनिक जीवन वाले व्यक्ति का व्यक्तिगत जीवन कोई नहीं होता। उसे खुली किताब और दर्पण की तरह रहना चाहिए जहां कोई भी पढ सके और कोई भी देख सके।''

थानों में कड़े आदेश जारी किये गए थे। प्रथम सूचना रिपोर्ट सही दर्ज की जाने लगी। पहले इसमें हेरा-फेरी हो जाती थी। उन्हें यह ज्ञात था कि पुलिस झूठी गवाही भी दिलाती है। वे बार बार कहते, ''भगवान के लिए झूठे केस मत बनाओ। याद रखो, एक दिन सबको जाना है। वहां क्या जबाब दोगे?'' अपने गृहमंत्री की तीक्ष्ण नजरों के आगे अधिकारी कांप उठते।

बलिष्ठ शरीर पर हमेशा जोर देते। स्वयं का स्वास्थ्य तो हमेशा बिगड़ा रहता लेकिन दूसरों को अच्छे स्वास्थ्य की हिदायत देना न भूलते। कहते, ''किसान और जवान हष्ट पुष्ट नहीं होंगे तो देश की रक्षा कौन करेगा?''

इसीलिए सब-इन्सपेक्टर की भर्ती में शारीरिक क्षमता में प्राप्त अंकों को लिखित परीक्षा में जोड़ने का आदेश जारी कर दिया। इससे भर्ती में रिश्वत या सिफारिश का कुप्रभाव समाप्त प्राय: हो गया। तगड़े जवान भर्ती होने लगे। पुलिस ट्रेनिंग कॉलेज में प्रशिक्षण के दौरान एक हजार रुपये अग्रिम राशि जमा करने के नियम को समाप्त कर दिया। 80रु. प्रतिमाह अनुदान देने का आदेश दिया। तब गरीब और हरिजन लड़कों को जो फायदा पहुंचा, इसकी कल्पना की जा सकती है।

गृहमंत्री बनने के बाद पुलिस बजट में काफी परिवर्तन किया गया। यह घोषणा की गई कि कर्तव्य पालन करते हुए कोई अराजपत्रित पुलिस वाला मुठभेड़ में मारा जाता है तो उसके रिटायरमैंट तक का पूरा वेतन उतरजीवि को मिले और बाद में पेंशन हो। प्रमुख शहरों मे रेडियो यंत्र पुलिस के चलते-फिरते दस्ते कायम किये गए। यह सेवा 24 घंटे उपलब्ध थी। सूचना मिलते ही पहुंचने के आदेश थे। जन साधारण में सुरक्षा के प्रति विश्वास बढ गया। असामाजिक तत्व दुष्कर्म करने से पूर्व दो बार सोचते। पुलिस विभाग की चौकसी अब चुस्त नजर आ रही थी। जो पुलिस पहले सता का अंग नजर आ रही थी, वह अब जनता की रक्षक बन गई थी। गृहमंत्री से जनता और पुलिसे दोनों खुश नजर आ रहे थे। सड़क चलते आमतौर पर सुनाई दे जाता कि यदि कुछ उल्टा-पल्टा किया तो चौधरी साब को शिकायत कर दी जायेगी। मानों चौधरी साब हर किसी के दरवाजे पर तैनात थे।

पुलिस सिपाई के प्रति उन्हें अत्यधिक सहानुभूति थी। यह बेचारा कितना शोषित है? कम वेतन और लम्बी ड्यूटि। न इसे जनता से प्यार मिलता है, न अधिकारियों से, मिलती है घृणा और घुड़की। अक्सर मंत्री मंडल की बैठकों में चर्चा कर देते, ''सब इन्सपेक्टर और नीचे के कर्मचारियों को हम क्या दे रहे हैं? वही अंग्रेजी राज की रीति-नीति चल रही है। यदि भ्रष्टाचार मिटाना है तो इनकी तनख्वाह बढानी होगी।''

उस दिन वे मुरादाबाद के गेस्ट हाउस में रुके हुए थे। ज्यों ही बाहर निकले, ड्यूटि पर तैनात सिपाई ने उन्हें विदाई सलामी ठोंकी। सलामी स्वीकार करते हुए उनकी दृष्टि सिपाई की जर्सी पर पड़ गई। जर्सी जगह जगह से फटी हुई, बदरंग सी।

चलते चलते वे ठिठक गये। सिपाई से पूछा,''तुम्हारी जर्सी कब से नहीं बदली गई?''

''पांच साल हो गये सर।''

उन्हें आश्चर्य हुआ। नियमानुसार तीन साल से जर्सी बदल देनी चाहिये थी। उनके कदम वापस गेस्ट हाउस की ओर मुड़ गये। तत्काल लखनऊ में गृहसचिव को फोन किया-''दो दिन में नियमानुसार सब सिपाहियों को नई जर्सी दी जाये।'' ऐसा ही हुआ।

उन्होंने बार बार कहा, ''पुलिस का सिपाई सरकार और जनता का नौकर होता है, किसी

में लिख रहा हूं अत: सकारात्मक प्रस्ताव नहीं दे रहा बल्कि मैंने अभी तक कोई सोचा भी नहीं है।

चरणसिंह
9.8.61

गृहमंत्री,

शायद गृहमंत्री को इस मामले में केन्द्र सरकार के रवैये की जानकारी नहीं है। भारत सरकार ने सतत् पिछड़ी जातियों की इस मांग का विरोध किया है। अत: हम इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं कर सकते। अत: प्रस्ताव वापस लेने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

च. भा. गुप्त
9.8.61

इस प्रकार जब वे गृह मंत्री नहीं रहे तो यह सुविधा गृह मंत्रालय से भी हटा ली गई थी।

इसके बाद पुन: चन्द्रभान गुप्ता एक और मोर्चे पर चौधरी साब से उलझ गये। 1952 में जब जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानून बना था तो यह व्यवस्था थी कि अगले 40 सालों तक भूमि कर में कोई परिवर्तन नहीं होगा। किन्तु किसान विरोधी चन्द्रभानु गुप्ता ने 10 साल बाद ही 1962 में भूमि कर में 50 प्रतिशत की वृद्धि का प्रस्ताव किया।

कृषि मंत्री चरणसिंह ने इसका जोरदार विरोध किया। उन्होंने 29 सितम्बर 1962 को एक गोपनीय रिपोर्ट प्रस्तुत की, जो निम्न प्रकार है-

''तीसरी पंचवर्षीय योजना के लिए धन जुटाने की दृष्टि से राज्य सरकार ने जोत-भूमि कर विधेयक प्रस्तुत किया है जिसका उद्देश्य जोतदारों द्वारा आज चुकाये जा रहे भू राजस्व में 50 प्रतिशत की वृद्धि करना है। राज्य सरकार को यह कदम नहीं उठाना चाहिए, क्योंकि इसके निम्न ठोस कारण हैं:-

(1) किसानों की आर्थिक स्थिति उनके वितीय बोझ को बढाने की अनुमति नहीं देती।

(2) उत्तर प्रदेश में भूमि पर पहले से ही करों का भारी बोझ है तथा ग्रामीण या कृषक कर चुकाने के प्रयास में पीछे नहीं रहे हैं।

(3) कर आवश्यक नहीं हैं क्योंकि अन्य तरीकों से धन जुटाया जा सकता है और वांछित फल प्राप्त किये जा सकते हैं।

(4) राजनैतिक दृष्टि से यह विधेयक कांग्रेस के लिए बहुत ही नुक्शानदेह कदम सिद्द होगा।

(5) भू-राजस्व में कोई वृद्धि जनता को विधिवत दिये गये उस आश्वासन और जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानून 1952 में समाविष्ट इस प्रावधान के विरुद्ध होगा कि अगले 40 साल तक राज्य की राजस्व मांग में वृद्धि नहीं होगी।

इसके लिए चौधरी साब ने उत्तर प्रदेश के आर्थिक गुप्तचर्या और सांख्यिकी विभाग द्वारा प्रस्तुत एक वक्तव्य संलग्न किया। जिसमें 1948-49 से अब तककी राज्य की कुल आय और प्रतिव्यक्ति आय के ब्यौरे थे तथा ग्रामीण और शहरी क्षेत्र में अलग अलग दिखाये गए थे। उन्होंने प्रमाणित किया कि ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति आय में कोई वृद्धि नहीं हुई। शहरी क्षेत्र में आय सीधे 20 प्रतिशत बढ गई। दोनों आयों के बीच की असमानता कम होने की बजाय बढ़ती ही गई। उन्होंने लिखा,

''किसी किसी क्षेत्र में यह धारणा घर किए हुए हैं कि चूंकि कृषि उत्पादनों की कीमतें बहुत ऊंची हैं इसलिए किसानों के लिए तो इतना बढिया समय कभी नहीं था। यह धारणा दो मिथ्या अवधारणाओं पर आधारित है।

(1) कि हर किसान के साथ बेचने के लिए फालतू अनाज होता है। जबकि वस्तुत: हमारे आधे किसानों के पास बाजार में बेचने के लिए कुछ नहीं होता।

(2) कि कृषि उत्पादनों की कीमतें गैर-कृषि वस्तुओं की तुलना में अपेक्षाकृत ऊंची हैं।

किन्तु सांख्यिकी विभाग की रिपोर्ट इसे झुठलाती है। रिपोर्ट के अनुसार जहां गैर कृषि उत्पादकों को आज उन्हीं वस्तुओं के लिए 1948-49 की अपेक्षा 5.3 प्रतिशत कम भुगतान करना पड़ता है, वहीं किसानों को 26.4 प्रतिशत ज्यादा भुगतान करना पड़ता है।''

इसके अतिरिक्त अन्य अकाट्य तर्क देते हुए चौधरी साब ने 20 पृष्ठों की यह टिप्पणी मुख्य मंत्री को भेजी। किन्तु शहरी लॉबी गुप्ता पर हावी थी। गुप्ता ने पुन: मंत्रीमंडल की बैठक बुलाई। चौधरी साब ने अपने नोट का हवाला देते हुए प्रस्ताव का जोरदार विरोध किया। चन्द्रभानु गुप्ता ने उत्तर दिया कि प्रस्ताव पर लगभग सहमति है। आप भी एक दो दिन और विचार कर लें।

दूसरे ही दिन संवाददाताओं को खुश खबरी देते हुए मुख्यमंत्री ने ऐलान कर दिया कि भूमि पर लगान बढाने का प्रस्ताव मंत्रीमंडल में आम सहमति से हुआ है। चौधरी साब ने यह खबर पढी तो चकित रह गये। उन्होंने तुरन्त मुख्यमंत्री को विरोध स्वरूप पत्र लिखा। मुख्यमंत्री गुप्ता का उतर आया कि हम सबने बहस कर ली थी। आपके प्रश्नों का जवाब दे दिया गया था। आप संतुष्ट हो गये होंगे, यही मैंने सोचा था। पत्र पर जो पता चौधरी साब का लिखा, वह इस प्रकार था-

सेवामें,
चौधरी चरणसिंह, एम. ए., बी. एस. सी., एल. एल. बी.
कृषि मंत्री लखनऊ।''

इतनी शैक्षिक डिग्रियां मुख्यमंत्री गुप्ता द्वारा लगाने के पीछे भी उनकी मानसिकता समझी जा सकती है। एक चतुर नेता की तरह वे चौधरी साब को खुश करना चाहते थे। किन्तु चरणसिंह इससे फूलने वाले न थे। उन्होंने पुन: गुप्त जी को लिखा-

''मंत्री मंडल के साथियों के बीच बहस चल रही थी कि किन्तु हम किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचे थे। बाद में मुझे काफी सहयोगियों ने अपनी असहमति जताई थी। भूमिकर में वृद्धि के खिलाफ बहुत ज्यादा मित्र हैं। अत: आप इस प्रस्ताव को वापस ले लें।''

इससे पूर्व तत्कालीन केन्द्रीय मंत्री लाल बहादुर शास्त्री को भी 23 जुलाई 1962 को चौधरी साब पत्र लिख चुके थे।

गुप्ताजी को पुन: लिखा, ''आपने लिखा है कि भूमि कर बढाने के पक्ष में नेहरू जी भी हैं। यदि आप इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कर कर सकते तो कृपया मेरा नोट पंडित जी को भेज दें। मुझे नहीं लगता कि प्रधानमंत्री इस पक्ष में हैं।''

इसके उत्तर में चन्द्रभानु गुप्ता ने लिखा-''मैं तो भू राजस्व बाबत अधिक जानता नहीं हूं। आपके पत्र के साथ ही मैंने वित सचिव को भी लिख दिया है। आप उनसे सम्पर्क कर लें, वे समझा देंगे कि क्यों भूमि कर बढाना आवश्यक है। जहां तक पंडितजी को आपका नोट भेजने की बात है, मैं इससे असहमत हूं। प्रधानमंत्री को बीच में लाना ठीक नहीं। मैंने ऐसा नहीं कहा था कि पंडितजी ने भूमि कर बढ़ाने को कहा था। उन्होंने आम तौर पर चर्चा करते हुए सभी मुख्यमंत्रियों को इस तरह की चर्चा की थी।''

मुख्यमंत्री का पत्र पढकर चौधरी साब अवाक रह गए। एक वरिष्ठ मंत्री को सचिव समझाये, और वह भी चौधरी साब जैसे कृषि विशेषज्ञ को, यह उन्हें अपमानजनक लगा। उनके पास तो अकाट्य तर्क और तथ्य थे। तब उन्होंने मुख्यमंत्री गुप्ता को 21 पृष्ठ का एक लम्बा पत्र लिखा। इसमें आंकड़े, तर्क और तथ्य पेश किये गये। यह एक तरह से मुख्यमंत्री को इस बात का जबाब था कि सचिव से मुझे कुछ नहीं समझना, आप भले ही सलाह ले लें। पत्र को प्रारम्भ करते हुए लिखा-

''आपका यह कहना कि वित्त विभाग के विशेषज्ञ मुझे आंकड़े देंगे और समझायेंगे कि क्यों भूमिकर बढ़ाना न्यायोचित है, पढ़कर आश्चर्य हुआ है। एक मंत्री क्या सचिव से शिक्षा लेगा? आंकड़े और तथ्य तो मेरी अंगुलियों पर हैं जो मैं आपको लिख रहा हूं...कृपया दृढ़ता से लिखना

चाहता हूं कि प्रस्ताव को वापस लिया जावे।''

उत्तर में मुख्यमंत्री गुप्ता ने जो लिखा, वह दिलचस्प है।''आप बहुत लम्बा पत्र लिखकर भेजते हैं, जबकि मैंने कई बार निवेदन किया है कि मैं इस विषय का विशेषज्ञ नहीं हूं। अच्छा हो, आप मुझसे मिल लें।''

दूसरे दिन चौधरी साब ने लिखा,-आपने लम्बे नोट लिखने की बजाय मिलना उचित बताया। यह सही है कि लम्बे नोट समय और शक्ति लेते हैं किन्तु यह ऐसा मुद्दा है जिसका लिखित रिकार्ड रहना चाहिए। तभी सार्थक बहस हो सकती है। वास्तविकता तो यह है कि इस मुद्दे पर कभी पूर्ण बहस नहीं हुई। भविष्य में लम्बा नोट नहीं लिखुंगा।''

तब एक दिन बाद, मुख्यमंत्री गुप्ता ने भी 11 पृष्ठ का एक लम्बा पत्र लिखा। इसमें उन्होंने वित-विशेषज्ञों की सलाह से तथ्य प्रस्तुत किये। आग्रह भी था कि अब हमें भूमि कर को लागू करना ही चाहिए। इस बार भी पते पर वही भारी भरकम डिग्रियां-एम. ए. बी. एस. सी. एल.एल. बी. कृषि मंत्री, लखनऊ।

कलम का युद्ध जारी रखते हुए चौधरी साब ने पुन: 20 पेज का एक और लम्बा पत्र लिखा। इसमें कुछ अतिरिक्त तथ्य जोड़कर गुप्ता के तर्कों को बिल्कुल नकार दिया।

मुख्यमंत्री गुप्ता ने इस पत्र की पावति तो भेजी किन्तु कोई उत्तर नहीं दिया। तब चौधरी साब ने 26 पृष्ठ का एक लम्बा पत्र वित मंत्रालय में प्लानिंग कमीशन को भेजा और अनुरोध किया कि भूमि कर में वृद्धि नहीं की जावे। कुछ दिन बाद ही कानपुर की एक आम सभा में गुप्ता ने कहा कि शीघ्र ही भूमिकर में 50 प्रतिशत की वृद्धि की जायेगी। इसके लिए सरकार में आम सहमति है।

दूसरे दिन चौधरी साब ने इसे पढा। उन्होंने अनुभव किया कि गुप्ता उनकी अवहेलना करने का प्रयास कर रहे हैं। उन्होंने अपना त्याग पत्र लिखकर मुख्यमंत्री चन्द्रभानु गुप्ता को भेज दिया। मुख्यमंत्री इसे स्वीकार नहीं कर सके। इस्तीफा लौटाकर मंत्रीमंडल की बैठक बुलाई गई। तब सभी सदस्यों को इस विषय में नोट बनाकर चौधरी साब ने वितरित किया। मंत्रीमंडल के अनेक सहयोगी चौधरी साब से सहमत हो गये। उस दिन बिना किसी निर्णय के बैठक समाप्त हो गई।

किसान मसीहा को चैन कहां था? वे अब इसका फैसला ही करना चाहते थे। लिहाजा, 29.9.62 को एक 52 पृष्ठ का विशाल नोट तैयार कर लाल बहादुर शास्त्री, केशवदेव मालवीय और चन्द्रभानु गुप्ता को प्रतियां भेजी गई। यह नोट क्या, एक पुस्तक थी। इसे पढने के लिए जिस धैर्य और एकाग्रता की आवश्यकता थी तो लिखते समय कितना थका देने वाला काम था, इसकी कल्पना ही की जा सकती है। किन्तु यह तो चरणसिंह के ही वश की बात थी।

तभी योजना-आयोग के दफ्तर में फाइलें घूमने लगी। इसका कोई विकल्प नहीं था। अन्तत: इस प्रस्ताव को वापस ले लिया गया। यह चरणसिंह की जीत थी। किसान-मसीहा का जादू था। लेकिन इससे कांग्रेसी नेतृत्व और भी खफा हो गया था। पंडित नेहरू को चुनौति देने वाला कार्य समझा गया। नागपुर अधिवेशन के बाद, पिछड़ों को रियायत और भूमिकर का विरोध, मानो चरणसिंह अपनी एक अलग दिशा पकड़ चुके थे। यह कांग्रेस की संस्कृति के विरुद्ध था। यह चौधरी साब के लिए महंगा साबित हुआ।

कुछ दिनों बाद ही तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष कामराज के नाम से 'कामराज योजना' लागू हुई थी। इसके अन्तर्गत यू. पी. के मुख्यमंत्री चन्द्रभानु गुप्ता को हटना पड़ा। यह तैय था कि अब चौधरी चरणसिंह ही मुख्यमंत्री बनेंगे। लेकिन ऐसा कहां होने वाला था?

11.

चन्द्रभानु गुप्ता के जाने के बाद विधायकों का जमघट चौधरी साब के निवास पर लगना शुरू हो गया था। अखबारों में भी उनके मुख्यमंत्री बनने के प्रयास लगाये जा रहे थे। अब तो उत्तर प्रदेश में कोई ऐसा नेता था ही नहीं जो चौधरी साब से वरिष्ठ या योग्य हो। राजस्वमंत्री और गृहमंत्री के रूप में उनकी ख्याति प्रान्त की सीमाओं को लांघ चुकी थी। अब किसी को कोई शक ही नहीं था। बार बार टेलीफोन खड़क रहे थे। उन्हें एक तरह से बधाइयां दी जा रही थी। सहसा ही पासा पलट गया। केन्द्रीय सरकार ने श्रीमती सुचेता कृपलानी को यू. पी. के मुख्यमंत्री की गद्दी सौंप दी थी। सभी सकते में आ गये थे। श्रीमती कृपलानी उत्तर प्रदेश के बारे में कुछ नहीं जानती थी। उन्हें किसी भी प्रकार का अनुभव नहीं था।

तब चौधरी साब टूट गये थे। पंडित नेहरू ने उनके जले पर नमक छिड़का था। वस्तुत: सम्पूर्णानन्द के जाने के बाद चौधरी साब ही एकमात्र मुख्यमंत्री पद के योग्य थे। किन्तु उस समय भी गुप्ता को बनाने पर वे अपमान की घूंट पीकर रह गये। 1962 के चुनावों के बाद भी उन्होंने नेता पद की इच्छा प्रकट नहीं की। किन्तु अब तो मानों जानबूझकर उन्हें अपमानित किया जा रहा था।

उस रात चौधरी साब सो नहीं सके। उनके मुंह से निकल गया-"यह राजनीति कितनी गन्दी हो गई है? मुझे इससे अब बहुत घृणा हो गई है। यदि अजित प्रतिमाह कुछ पैसे भेज दे तो मैं राजनीति से सन्यास ले लूं। मेरे वश की बात नहीं है।" उस समय उनकी आंखों में आंसु जैसे टपकना ही चाहते हों। समीप बैठे विधायकों में से एक जने को क्रोध आ गया। वह बोला-"चौधरी साब, पंडित नेहरू आपको कभी नहीं आने देंगे। आज आपके साथ 80 प्रतिशत विधायक हैं। आप कांग्रेस छोड़ क्यों नहीं देते?"

तब 60-61 वर्ष का यह शेर जैसे चौंक उठा। "कांग्रेस छोड़ दूं? यह कैसे हो सकता है? कांग्रेस तो गांधीजी ने बनाई थी। नेहरू की बपौति तो नहीं।" फिर थोड़ा रुककर बोले, "नेहरू को ही क्या दोष दें? इतने विधायक हैं, खुलकर विरोध करने वाले कितने हैं? कुर्सी के लिए आत्मा को दबा लेते हैं।" यह पीड़ा उन्हें वर्षों तक सालती रही।

बाद में वे इस सम्बन्ध में पंडित नेहरू से मिले भी। उन्होंने पंडित जी से स्पष्ट कहा कि विचारधारा में मतभेद होने के कारण दो बार मुख्यमंत्री बनने से रोक दिया। उस समय पंडित नेहरू चौंके थे। बातचीत से पता चला कि नेहरू को सही तथ्य नहीं बताये गये थे। चौधरी साब के विरुद्ध लॉबी ने पंडित नेहरू के कान भर दिया थे। चौधरी साब को कुर्सी का लालची बताने वालों को हैरत होगी कि स्वयं के लिए उन्होंने कभी नेतृत्व के पास दौड़ नहीं लगाई। आज जिस तरह से नेता छीना-झपटी करके कुर्सी पर कब्जा करते हैं, यदि चौधरी साब अपने लिए थोड़ा सा भी प्रयास करते तो डा. सम्पूर्णानन्द के इस्तीफे के बाद ही मुख्यमंत्री बन सकते थे।

सुचेता कृपलानी मंत्रीमंडल में उन्हें कृषि एवं पशुपालन मंत्रालय दिया गया। कुछ दिनों बाद ही वन मंत्रालय भी दे दिया। सुचेता कृपलानी एक कमजोर मुख्यमंत्री साबित हुई। सता के दलालों ने उन्हें घेर लिया था। चरणसिंह के विरुद्ध लगी लॉबी ने उनके दिमाग में यह बैठा दिया था कि चौधरी साब उन्हें कभी भी पद-च्युत कर सकते हैं। इससे सुचेता कृपलानी चौधरी साब के भय से त्रस्त थी। चौधरी साब के लिए ये दिन निराशा के थे।

उन्हीं दिनों अर्थशास्त्री डब्ल्यू. ए. लेडजिन्सकी ने योजना आयोग को अपनी रिपोर्ट दी थी, "उत्तर प्रदेश को छोड़कर देश के अन्य किसी भी भाग में जमींदारी प्रथा समाप्त नहीं हुई है और किसानों को उनकी काश्त की जा रही जमीनों को मालिकाना हुकूक नहीं दिये गये हैं...केवल उत्तर प्रदेश में एक सुविचारित और व्यापक कानून बना है और एक कारगर ढंग से लागू किया

गया है....भारत में बहुत से अच्छे कृषि सुधार कानून बेजान ही रहे, लेकिन उत्तर प्रदेश में यहलागू भी हुए और इनकी महत्वपूर्ण उपलब्धियां भी रही। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि करने की इच्छा हो तो यह काम किया जा सकता है।''

यह रिपोर्ट केन्द्रीय और राज्य स्तर के नेताओं, दोनों को करारा जबाब थी। हीन बोध से त्रस्त कथित बड़े नेताओं को भयभीत करने वाला रिकार्ड था। यह सब किसान मसीहा चरणसिंह की देन थी। तब वे और अधिक चौधरी साब से आतंकित थे। सुचेता कृपलानी को तो जैसे सपने में भी कुर्सी खिसकती दिखाई दे रही थी। चौधरी साब को इससे बल मिला। तब वे अपने सिद्धान्तों के प्रति और भी मुखर हो उठे थे।

वे पंडित नेहरू से अक्सर मिलते रहते और देश की आर्थिक स्थिति और कृषि समस्या पर चर्चा करते रहते। उस दिन चौधरी साब का पंडित नेहरू से मुलाकात का दिन था। 15 मिनट का समय तैय हुआ था। वे अन्दर गये और 15 की बजाय 50 मिनट तक नेहरू से विचार-विमर्श करते रहे। इसी दौरान भारत के तत्कालीन गृहमंत्री गुलजारी लाल नंदा दो बार फाइल लिये पंडितजी से मिलने आये। दोनों ही बार प्रधानमंत्री के सचिव का उतर था-''चौधरी साब अन्दर हैं।'' नन्दा वापस लौट गये।

प्रधानमंत्री से मिलने के बाद, वे मेरठ लौट रहे थे। रास्ते में निजी सचिव ने याद दिलाया, ''जब आप प्रधानमंत्री से बातें कर रहे थे, तो दो बार गृहमंत्री वापस लौटकर गये।''

चौधरी साब ने स्वीकार किया कि बातचीत काफी लम्बी खींच गई। पंडित नेहरू ने पहले राजनैतिक मुद्दों पर चर्चा की, फिर कृषि समस्याओं पर लम्बी बहस चली। इस बातचीत बाबत चौधरी साब ने पूरा ब्यौरा नहीं लिखा। कई क्रम में चली मुलाकातों में यह अंतिम विचार विमर्श था। प्राय: ही चौधरी साब ने कहा है कि पंडित नेहरू अपने अंतिम समय में उनकी आर्थिक लाईन से प्रभावित हुए थे। स्वप्न दृष्टा नेहरू भारी उद्योग की लाईन को त्यागना चाहते थे। किन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी थी। पंडित नेहरू उतने शक्तिशाली नहीं बचे थे। यह दुर्भाग्य रा या दोनों का अहं आड़े आया, किन्तु यदि चरणसिंह नागपुर अधिवेशन के बाद ही नेहरू से निकट सम्पर्क कर पाते और उन्हें अपनी लाईन समझा सकते तो चौधरी साब के साथ साथ इस देश को भी फायदा होता। पंडित नेहरू को 'ना' सुनना पसन्द नहीं था और चौधरी साब को 'जी हां' कहना आता नहीं था। यह 'हां-ना' के चक्कर में सता के दरबारी बीच में दीवार बनकर खड़े हो गये। तब इस धरती पुत्र का, उस आकाश-दृष्टा से मोह भंग हो गया था।

इसका कारण प्रमुख रूप से यह भी रहा कि चौधरी साब पेशेवर राजनीतिज्ञ नहीं थे। सता के लिए उठा-पटक, जो-तोड़ करना उनके वश की बात नहीं थी। अपने सिद्धान्तों पर वे अडिग रहे। यदि इसमें कोई आड़े आया, तो उसकी उन्होंने कभी परवाह नहीं की। एक झटके में उससे सम्बन्ध विच्छेद किया और चल पड़े अपने डगर पर। सता मिलेगी या नहीं, कौन साथ देगा, कौन नहीं, यह कभी नहीं सोचा। दृष्टि गांव, किसान और गरीब पर रही और अन्त तक यही सिलसिला चलता रहा। इसीलिए कहा जा सकता है कि इस राजनीति के कबीर में कूटनीति नहीं थी बल्कि अक्खड़ता के साथ अपनी राह पर चलने की जल्दी थी। इसी कारण सम्पूर्णानन्द, चन्द्रभानु गुप्ता और सुचेता कृपलानी तो मुख्यमंत्री बन गये और यू. पी. में क्रांति के अग्रदूत चौधरी साब दूर हटते चले गये। बहरहाल...

कृषि मंत्री के रूप में वे अपने विभाग की मांगें पेश करने वाले थे। बजट तैयार कर लिया था। संवाददाताओं को वितरण करने हेतु निजी सचिव के पास प्रतियां आ गई थी। तभी उन्होंने पी. ए. को बुलाकर पूछा, ''क्या तुमने मेरा बजट-भाषण पढा है?''

''जी हां, पी. ए. ने उत्तर दिया।

''तुम्हें कैसा लगा?'' उत्सुकता से चौधरी साब ने पूछा।

''ठीक ही है।'' यह उत्तर चौधरी साब को जंचा नहीं। पूछा-

"शायद तुम कुछ कहना चाहते हो? नि:संकोच कहो।"

"तब ठीक है सर,।" पी. ए. तिलकराम शर्मा निश्चिंत हो गये। कहा,

"मैं भाषण के ऊपर के तीन पृष्ठ से सहमत नहीं हूं।"

"वह क्या हैं?" चौधरी साब ने मुस्करा कर पूछा।

"आपने उसमें नौकरशाही के बारे में टिप्पणी की है और इसे सुधारने पर बल दिया है।"

"हां, लेकिन इसमें गलत क्या है?"

" हो सकता है सर, लेकिन सच्ची बात कड़वी हो तो कई बार नहीं कहनी चाहिए। यदि नौकरशाही से आपको कोई शिकायत है तो उन्हें आप अपने चेम्बर में बुला कर कह सकते हैं। यों भी अफसर आपका सबसे ज्यादा सम्मान करते हैं। सदन में आपको उनका समर्थन ही करना चाहिए।"

"यह तो तुम्हारा निराशावादी दृष्टिकोण है।" चौधरी साब ने कहा।

"आपने पूछा, तो मैंने कह दिया सर।" तिलकराम शर्मा का जवाब था।

इसके बाद वे लंच के लिये चले गये। जब आये, असेम्बली की घंटी बज चुकी थी। दो बजे ही उन्हें मांगें पेश करनी थी। चौधरी साब सीधे असेम्बली हाल में चले गये। निजी सचिव ने देखा कि चौधरी साब का सुरक्षा अधिकारी चुस्ती से उनके पास आ रहा है।

"कहो, क्या बात है?" निजी सचिव ने पूछा।

"चौधरी साबका आदेश है कि उनका बजट भाषण गोपनीय आलमारी में रख दें और एक भी प्रति किसी को नहीं दी जाये।" सुरक्षा अधिकारी कह कर लौट गया। ऐसा ही किया गया।

किंतु ज्यों ही चौधरी साब बोलने खड़े हुए, सदस्यों ने जोरदार मांग की कि भाषण की प्रतियां बांटी जायें क्योंकि वे छप चुकी हैं। तब चौधरी साब ने आदेश दिया कि पहले तीन पेज हटा दिये जायें और बाकी का भाषण वितरित कर दिया जाये। यह 24 पेज का भाषण था। तब प्रतियां बंट गई तो पूछताछ की जाने लगी कि भाषण के पहले के तीन पृष्ठों का क्या हुआ? चौधरी साब ने यह कहकर शांत किया कि पहले तीन का मैटर सिर्फ उनके उपयोग का था। इस प्रकार यह मामला शांत हुआ।

एक बुजुर्ग सरकारी कर्मचारी ने चौधरी साब से बजट भाषण की सम्पूर्ण प्रति लेने की सहमति ले ली। निजी सचिव से प्रति मांगी तो उन्होंने देने से इन्कार कर दिया। उसने लौटकर चौधरी साब से शिकायत कर दी।

तब पी. ए. को बुलाकर पूछा, "क्या अमुक अफसर...मेरे भाषण की पूरी प्रति के लिए पूछ रहा था?"

"हां सर।"

"तुम्हें उसे कॉपी देनी चाहिए थी।"

"हां, लेकिन सर, मैंने जान बूझकर ही नहीं दी।"

"क्यों?"

"आप उसे सिर्फ चेहरे से जानते हैं सर। लेकिन मुझे उन पर सन्देह हैं। वे प्रति लेकर किसी की मार्फत पंडित नेहरू के पास भेजना चाहते थे। यह दिखाना चाहते थे कि यू. पी. में विरोधपक्ष की आवश्यकता नहीं है। चौधरी साब ही इस रोल को अंजाम दे रहे हैं। मंत्रीमंडल में रहते हुए भी प्रशासन की बुराई कर रहे हैं।" कुछ सोचकर चौधरी साब बोले, "आपने अच्छा किया।"

यही चौधरी साब की विशेषता थी। कोई चपरासी भी उनकी भूल को रेखांकित करता तो वे तुरन्त मान जाते।

उस दिन अजीब घटना हो गई। घर में किसी बात पर वे क्रोधित हो गये और बिना नास्ता किये दनदनाते हुए सचिवालय चले आये। चेम्बर में आकर भी उन्हें चैन नहीं था। निरन्तर उस बारे में सोचते रहे। तब दिमाग स्थिर हुआ। एक घंटे बाद उन्होंने घर पर फोन किया कि गलती

उनकी ही थी। तब लगता, ये कितने निर्मल, निश्छल व्यक्ति हैं।

1965 की बात है। उनकी नजदीकी रिश्तेदार दिल्ली के पास से बच्चों सहित लखनऊ आ गई। पाकिस्तान से युद्ध शुरू हो गया था। पति ने दो दिन पहले ही बच्चों को सुरक्षित स्थान पर भेज दिया। पाकिस्तानी विमानों ने उनके पुराने निवास पर उड़ान भरी थी। बाद में भारत की जीत की खुशी में उन्होंने अपने रिश्तेदार का मजाक उड़ाया कि वे डरपोक निकले। एकान्त देखकर पी. ए. ने टोका–

"यह आप क्या कह रहे हैं, सबके सामने।"

"इसमें झूठ क्या है?" चौधरी साब ने भोलेपन से पूछा।

"झूठ तो नहीं है लेकिन पति-पत्नि की बात को जग-जाहिर करना भी ठीक नहीं।"

"क्या करूं, मैं किसी बात को पेट में नहीं रख सकता।" चौधरी साब का उत्तर था। शायद इसी कारण वे आम जनता के दिलों में पैठ कर सके थे।

निहायत ही सीधे-सादे स्वभाव वाले चौधरी साब; लेकिन सुचेता कृपलानी के लिए तो जैसे चुनौति थे। सुचेता कृपलानी के साथ भी कम संघर्ष नहीं करना पड़ा। मुख्यमंत्री को भूमि सुधार से परहेज था। उन्होंने आते ही दो प्रस्ताव किये। एक, सभी सीरदारों और भूमिधरों को अपनी जमीनें पट्टे पर देने की अनुमति दी जा सकती है, दूसरा, भविष्य में किसी भी व्यक्ति को कम से कम बाग लगाने के लिए 12.5 एकड़ से अधिक भूमि अर्जित करने की अनुमति रहे।

राजस्व सचिव ने कृषि मंत्री चरणसिंह की राय मांगने हेतु फाइल भेजी। चौधरी साब ने फाइल पर नोट लिखा–

"मुझे भय है कि मैं असहमत हूं। देहाती अर्थ-व्यवस्था में ऐसा कोई बदलाव नहीं आया है कि कानून में परिवर्तन करना पड़े। मैं राजस्व सचिव या कृषि सचिव की टिप्पणियों को स्वीकार नहीं करता, किन्तु यहां ब्यौरे में नहीं जाना चाहता। शिकमी देने या इससे सम्बंध बातों के पक्ष में कुछ तर्क हैं और हमेशा रहे हैं। लेकिन किसी निर्णय पर पहुंचने से पहले हमें समस्या के दोनों ही पहलुओं के गुण दोषों पर बारीकी से विचार करना है। मेरा दिमाग इस मामले में बिल्कुल साफ है कि कानून में प्रस्तावित संशोधन मौजूदा कानून की अपेक्षा अधिक बड़ी समस्याएं उपस्थित करेगा। सम्बन्ध भूमि का प्रतिशत उतना अधिक है ही नहीं और कृषि उत्पादन में वृद्धि के नाम पर हमें ऐसा कुछ नहीं करना चाहिए जो हमारे भूमि सुधारों के पूरे आधार को उलट-पुलट कर डाले। हमारा ध्यान कानून के बेहतर ढंग से अमल पर जाना चाहिए। योजना आयोग की राय या किसी पंचवर्षीय योजना का हवाला देना मेरे लिए कोई वजन नहीं रखता। जमींदारों द्वारा रैय्यतों की जमीनों के बारे में हमने उनकी वह सलाह ठुकरादी थी, जिसके कारण अन्य राज्यों में केई परेशानियां उठानी पड़ी थी। पैकेज जिलों में काश्तकारी की दशाओं के बारे में वुल्फ लैंडजिंस्की की जो रिपोर्ट योजना आयोग को दी गई थी, उसके अनुसरण से मेरे विचार की पुष्टी होगी। अत: हमें गुणों के आधार पर फैसला करना है, न कि इस आधार पर कि योजना आयोग क्या कहता है?"

चरणसिंह

25 जून 1964

राजस्वमंत्री थे ठाकुर हुकुमसिंह। उन्होंने अपना एक नोट लगा कर फाइल पुन: चौधरी साब के पास भेज दी। उनकी टिप्पणी दुबारा इस प्रकार थी–

"मुख्यमंत्री,

मुझे खेद है कि मैं इस फाइल को इतने लम्बे समय तक अपने पास रोके रहा। फिर भी में नहीं समझता कि इससे जनहित को जरा भी क्षति पहुंची है। मैं सहमत था कि कृषि उत्पादन से सम्बन्धित मंत्री मंडलीय उप समिति की बैठक की कार्य-सूचि में इस विषय को शामिल किया जाये, क्योंकि विशेष सचिव ने मुझे कहा था कि राजस्व विभाग यही चाहता है।

इस प्रस्ताव से मैं बहुत ही बैचेन हूं। मुझे पता नहीं कि क्या क्या बातें सामने आने वाली हैं। खेती के लिए अपनी भूमि दूसरों को शिकमी पर देने का भू-स्वामी का यह अधिकार ही है जो अन्ततः जमींदारी प्रथा की ओर ले जाता है। यही कारण है कि काफी सोच-विचार के बाद ऐसे भूमिधरों और सीरदारों को यह अधिकार नहीं दिया गया जो शरीर और मन से पूरी तरह स्वस्थ थे। उन्हीं को अब यह अधिकार प्रदान किये जाने का मतलब वह सब कुछ कर देना होगा जो स्वाधीनता के उदय के साथ ही बड़े जोश-खरोश से हमने शुरू किया था।

मैं यह समझ पाने में भी असमर्थ हूं कि भूमिघर या सीरदार के अपनी अपनी भूमि शिकमी पर देने के अधिकार को मान्यता देने के फलस्वरूप उत्पादन में वृद्धि कैसे होगी? दुनियां भर में मान्यता है कि जितना मालिक उपजाता है, उतना किसान नहीं। भू-स्वाम को शिकमी करने का अधिकार प्रदान कर हम विश्वव्यापी आर्थिक सत्य के विरुद्ध जा रहे हैं। अपने पिछले नोट में जैसा कि पहले ही कह चुका हूं, आवश्यकता कानून के प्रासंगिक प्रावधान को सख्ती से लागू करने की है, जिसका उल्लंघन 5 प्रतिशत से अधिक भूमिधर और सीरदार कर रहे हैं-न कि प्रावधान को ही रद्द कर देने की, जिससे हमारी पूरी भूमि-व्यवस्था मजाक बनकर रह जायेगी।

चरणसिंह

11 जनवरी 1965

फलों के बाग लगाने सम्बन्धी प्रस्ताव को मुख्यमंत्री सुचेता कृपलानी ने इस तरह आगे बढ़ाया-"मुख्य सचिव, यह सज्जन मुझसे मिलने आये और फलोद्यानों की समस्याओं की तरफ मेरा ध्यान आकर्षित किया। इनका यह कहना सही है कि 12.5 एकड़ की हदबंदी के तहत फलोद्यानों के विकास की उम्मीद रखना मुश्किल है। मैं हैरान हूं कि इस मामले में हम क्या कर सकते हैं? मुख्य सचिव शायद इस पर सोच विचार करें।"

-सुचेता कृपलानी

20 जुलाई 1965

मुख्य सचिव ने फाइल चरणसिंह के चेम्बर में भेजी। तब चौधरी साब ने लिखा-

"मुख्यमंत्री,

सवाल यह है कि फलोद्यानों को ६ ा उस कानूनी प्रावधान से मुक्त रखना चाहिए कि भविष्य में किसी को भी इतन भूमि अर्जित करने की छूट नहीं रहे, जिससे उसकी कुल जोत मिलाकर 12.5 एकड़ से अधिक हो जाये। यह तर्क कि कोई फलोद्यान इससे छोटे क्षेत्र में विकसित नहीं किया जा सकता, वैद्य नहीं है, अर्थात् तर्क या अनुभव के आधार पर इसके औचित्य को सिद्ध नहीं किया जा सकता। यह फलोद्यान और फलोद्यान का फर्क है। फलोद्यान आमतौर पर साधारण फसलों की खेती से ज्यादा उपज देते हैं। इसलिए यदि फलोद्यानों के लिए छूट दिया जाना जरूरी समझा जाता है तो कोई कारण नहीं कि हदबंदी के प्रावधान को एक बारगी रद्द ही क्यों नहीं कर दिया जाये।

वह मैं ही था जो प्रावधान को लागू किये जाने के लिए जिम्मेदार था। जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानून (1952) में आवश्यक संशोधन जब किया जा चुका था, तब भारत सरकार द्वारा कृषि के अध्ययन के लिए चीन और जापान भेजे गये एक प्रतिनिधि मंडल की रिपोर्ट मुझे देखने को मिली। रिपोर्ट में कहा गया था कि जापान में भावी प्राप्तियों के लिए 7.5 एकड़ की हदबंदी निश्चित की गई है। जैसा कि हममें से बहुतों को पता है कि जापान में औसत जोत 2.5 एकड़ या इसी के आसपास है। इसलिए वहां औसत जोत को तीन गुना बराबर हदबन्दी तैय की गई है। उत्तर प्रदेश में औसत जोत मुश्किल से 4 एकड़ होती है, इस तरह हमारी 12.5 एकड़ की हदबन्दी बिल्कुल ठीक और समुचित है तथा एक ऐसे देश के उदाहरण द्वारा समर्थित है जो प्रति एकड़ कृषि उत्पादन के मामले में दुनिया के ज्यादातर देशों को सही रास्ता दिखा रहा है।

एक बात और विचारने की है। इस प्रावधान के पीछे भावना यह थी कि भूमि के गिने-चुने

लोगों के हाथ में सिमट जाने पर रोक लगी रहे। हदबन्दी का आंकड़ा जितना ऊंचा रहेगा, उतने ही कम लोग होंगे, जिनके हाथों में भूमि धीरे धीरे सिमट आयेगी और जिसके फलस्वरूप ज्यादा से ज्यादा लोग नीचे श्रमिक दर्जे पर चले जायेंगे, जैसा कि शायद हममें से कोई नहीं चाहता।

राज्य में इधर जो नई प्रवृत्तियां उभर रही हैं, उन्हें देख कर मुझे पीड़ा होती है। यहीं पिछले दिनों मैं ऐसे प्रस्ताव से रूबरू हुआ था कि सभी किसानों को अपनी जोत की जमीनें जिसे चाहें शिकमी पर देने की इजाजत दे दी जाये-ऐसे किसानों को भी जो किसी भी तरह से विकलांग नहीं हो। अब दूसरे शब्दों में यह जमींदारी प्रथा को पूरी तरह से लाने का उपक्रम है, जिसे कांग्रेसियों ने कभी पसन्द नहीं किया था। इसका मतलब है कि जमींदारी के उन्मूलन के लिए जितन सारी भावनाएं थी और जितने सारे प्रयास हमने किये थे, वे सब व्यर्थ गये। मेरा दिमाग इस मामले में बिल्कुल साफ है कि शिकमी वाले प्रस्ताव के साथ साथ विचाराधीन प्रस्ताव भी पीछे की ओर ले जाने वाला कदम है।

–चरणसिंह

22 मार्च 1965

यहां यह लिखना प्रासंगिक होगा कि मुख्यमंत्री बनने के बाद श्रीमती कृपलानी ने लखनऊ जिले में बाराबांकी मार्ग के किनारे फलों का एक निजी बाग लगवाया था। अंततः मुख्यमंत्री ने 17 नवम्बर 1965 को राजस्वमंत्री ठाकुर हुकुमसिंह, कृषि मंत्री गेंदासिंह और वनमंत्री चरणसिंह के साथ बैठकर इस प्रस्ताव पर चर्चा की। (इन दिनों चौधरी साब के पास सिर्फ वन विभाग था) राजस्वमंत्री और कृषिमंत्री दोनों मुख्यमंत्री के प्रस्ताव के घोर समर्थक थे। मुख्यमंत्री ने चौधरी साब को संकेत किया कि वे प्रस्ताव को वापस ले रही हैं। तब फाइल पर वनमंत्री चरणसिंह ने निम्न टिप्पणी दर्ज की–

"फाइल में नीचे दो टिप्पणियां मेरे द्वारा दर्ज की गई थी। इनका सम्बन्ध जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानून में संशोधन के एक प्रस्ताव से था, इस प्रभाविता के साथ कि कृषि उत्पादन में वृद्धि के हित में सीरदारों और भूमिधरों को अपनी जमीनें शिकमी पर उठाने की इजाजत दे दी जाये। प्रस्ताव पर मुख्यमंत्री सुचेता कृपलानी ने आज ठाकुर हुकुमसिंह, श्री गेंदासिंह और मेरे साथ चर्चा की। राजस्व व कृषि मंत्री, दोनों ने प्रस्ताव का जोरदार समर्थन किया। स्वयं मुख्यमंत्री का जबरदस्त झुकाव प्रस्ताव के पक्ष में ही था, लेकिन मुझे सुन लेने के बाद उन्होंने इसे वापस लेने का फैसला किया।

–चरणसिंह

17 नव. 65

लेकिन पांच दिन बाद ही मंत्री मंडल की बैठक आयोजित की गई। उस दिन चौधरी साब दौरे पर गये हुए थे। बैठक में इस प्रस्ताव की पुनः चर्चा की गई। एक अन्य मंत्री हरगोविन्द ने भी प्रस्ताव का समर्थन किया जो वस्तुतः भूमि सुधारों के विरुद्ध रहे थे। चौधरी साब जब दौरे से वापस आये तो उन्हें मुख्य मंत्री का इस सम्बन्ध में एक नोट मिला। यह भी सलाह थी कि वे चर्चा करनी चाहें तो मुख्य सचिव एवं राजस्व सचिव को बुला सकते हैं। चौधरी साब इस मसले पर सचिवों से क्या बात करें? वे तो इस मुद्दे को दस वर्ष पूर्व ही निपटा चुके थे। उन्होंने मुख्यमंत्री को लिखा–

"मुख्यमंत्री,

मैं उस दिन यह प्रभाव लेकर लौटा था कि मुख्यमंत्री प्रस्ताव को वापस ले लेने के लिए रजामंद हो चुकी हैं। फिर भी लगता हैं मैं गलत था। बहरहाल, ऐसा कुछ भी नहीं है कि उपयोगी ढंग से मैं मुख्य सचिव और राजस्व सचिव के साथ चर्चा कर सकूं। निश्चित मामलों को छोड़कर शिकमी पर रोक एक नीतिगत निर्णय था। जैसा कि मैं दोनों टिप्पणीयों में कह चुका हूं, उस निर्णय को उलट देना जनहित में घातक होगा। यह जमींदारी उन्मूलन के प्रभावों को बहुत ही बड़े पैमाने

पर व्यर्थ कर देगा।"

-चरणसिंह
4 फरवरी 66.

इस पर सुचेता कृपलानी ने लिखा-"यह विषय अभी स्थगित रहे।"

-सुचेता कृपलानी
10 फरवरी 66
-चरणसिंह
22 फरवरी 66.

तो यह था इस किसान मसीहा का संघर्ष। सता के पाये पर बैठे लोग भूमि सुधारों में आये दिन सैंध लगाने का उपाय खोजते रहे और चौधरी साब मानो लट्ठ लेकर उनकी चौकीदारी करते रहे। गांव, किसान और गरीब के हितों के चौकीदार। इस चौकीदारी में उन्होंने सब कुछ गंवा दिया था। कहां तो वे मुख्यमंत्री बनने वाले थे, लेकिन इन दिनों उन्हें धकेल धकेल कर नीचे सरका दिया गया था। वे मात्र वन मंत्री रह गये थे। बाद में फरवरी 66 में स्वायत शासन मंत्रालय भी सौंपा गया था। इसलिगए कि उनकी कुछ समस्याओं का निदान करवाना था। भगवान शंकर की तरह वे अपमान के जहर को मौन रहकर निगल रहे थे- सिर्फ इसलिए कि लक्ष्य उनके सामने था। किसान का कल्याण, देहाती के स्वाभिमान की रक्षा, उनके असली भारत का मंगल होना चाहिए। इस कार्य में वे कोई समझौता नहीं कर सकते थे। इसीलिए कुर्सी उनसे दूर सरकती गई किन्तु वे अपने दरिद्रनारायण के और करीब आते गये। उन्हें चाहिये भी क्या था? सादा खान, सादा पहनावा, सादा रहन-सहन। इसके लिए क्या चाहिये? जो चाहिए, उनके पास था। चट्टान की तरह अभेद्य ईमानदारी, कठोर अनुशासन और निर्मल आत्मा। इस कबीर ने काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह सबको परास्त कर दिया था। बहरहाल...

सुचेता कृपलानी के साथ हुए पत्र व्यवहार के साथ साथ हम बहुत आगे बढ गये। अनेक प्रसंग छूट गये हैं। 1964 की जनवरी में अब हमें पहुंचना है।

तब वे कृषि मंत्री भी थे। केन्द्र की तरफ से त्रिवेन्द्रम में एक सेमीनार का आयोजन किया गया था। समय बचाने की दृष्टि से वे हिन्द फ्लाइंग क्लब लखनऊ के जहाज से गये। 5 सीट के इस जहाज में 2 सीटें उनके व्यक्तिगत स्टाफ के लिए सुरक्षित थी। लेकिन चौधरी साब की बेटी-दामाद भी उनके साथ त्रिवेन्द्रम गये। इस कारण से निजी स्टाफ के दोनों कर्मचारियों को ट्रेन से यात्रा करनी पड़ी। वापस आने के बाद चौधरी साब इसी चक्र में पड़ गये। दोनों का खर्चा सरकार क्यों वहन करें? उन्होंने फाइल पर पी. ए. को टिप्पमी लिखी-

"मेरा विचार है कि इन दोनों पर जो भी खर्चा हुआ है, वह मैं स्वयं वहन करूं। श्री जे. पी. वर्मा (निजी स्टाफ के सदस्य) इसमें दूसरा दृष्टिकोण रखते हैं। उनका कहना है कि यह आवश्यक नहीं है कि मंत्री अपने निजी स्टाफ को उसी साधन से ले जाये, जिसमें वे स्वयं सफर करते हैं। दूसरा, निजी स्टाफ के लिए भी यह विकल्प है कि वह मंत्री के साथ सफर करे या अलग से। विशेषकर, ज़ब मंत्री हवाई यात्रा कर रहा हो। वर्मा का कहना है कि निजी स्टाफ के लिए आवश्यक नहीं कि वह हवाई यात्रा का खतरा मोल ले। मैं सोचता हूं कि शायद अन्य भी कारण हो जिससे उसकी बात का वजन हो। जैसे कि वह मुझसे यह रकम नहीं लेना चाहता हो। वर्मा का कहना है कि ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब इस तरह के केस में निजी स्टाफ ने दूसरे साधन से यात्रा की है तथा सरकारी बिल प्रेसित किया है।

मेरा विचार यहां अलग है। श्री जे. पी. वर्मा और श्री कर्तारसिंह ने ट्रेन से यात्रा अपनी इच्छा से नहीं की। ऐसी परिस्थितियों में यह प्रश्न नहीं पैदा होता कि वे ट्रेन से यात्रा करते या जहाज से। यह तथ्य है कि उनके लिए जहाज में दो सीटें खाली नहीं थी। ये दोनों सीटें मेरे दामाद और बेटी ने रोक ली थी। यह भी कि चाहे नियम हो या न हो, मेरी आत्मा मुझे कहती है कि यह एक

जनप्रतिनिधि के आचरण के लिए अच्छा नहीं है कि इस व्यय को सरकारी खाते से भुगतान करे। मैं तो एक जन प्रतिनिधि हूं, न कि एक अधिकारी। मुझे नियमों को अपेक्षा स्वयं की आत्मा के अनुसार करना चाहिए।

अत: पी. ए., कृपया जे. पी. वर्मा और कर्तारसिंह से कहें कि वे सम्बन्धित अधिकारी से अपने बिल में वहीं चार्जेज करेंगे जो वस्तुत: उन्हें हवाई यात्रा से करने पर करना पड़ता। शेष, ट्रेन से यात्रा करने पर जो भता उन्हें मिलना चाहिए था, वह मेरे खाते से भुगतान किया जावे, यदि जो नियमानुसार भता वे मेरे से नहीं लेना चाहें तो वास्तविक खर्चा जो उन्होंने किया है, उसे लेने में तो कोई दुविधा नहीं होनी चाहिए। यदि इस पर भी वे सहमत नहीं होते हैं तो तिलकराम (निजी सचिव) कृपया हिन्द प्लाइंग क्लब को दो सीट का पूरा किराया उनके खाते में मेरे खाते से जमा करें। ट्रेन या प्लेन से दो जने यात्रा करने पर जो समस्त खर्चा अधिक हो, वही जमा कराया जावे।

यह कार्य आज या कल अवश्य हो जाना चाहिये। मैं यह सब औपचारिक नोट में इसलिए लिख रहा हूं, कि मैंने मौखिक रूप से मेरी सलाह मानने को श्री वर्मा से कई बार कह चुका हूं। मैं अब यह आदेश जारी कर रहा हूं ताकि पी. ए. मेरी इच्छा की और अधिक समय तक अवहेलना न कर सके।

-चरणसिंह
4.264
कौंसिल चेम्बर 1.05 सायं.

कृषिमंत्री,

की इच्छानुसार आदेश की अनुपालना की गई है। श्री जे. पी. वर्मा और कर्तारसिंह के यात्रा भत्ते बिल एस. ए. डी. (ए.). को भेजे जा रहे हैं। उनके द्वारा कोई रेल यात्रा भाड़ा सरकार से नहीं लिया जायेगा। इसे वे कृषि मंत्री के निजी खाते से वसूल करेंगे। वास्तव में वे ऐसा बहुत अनिच्छा से कर रहे हैं। ऐसी अवस्था में शायद और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है।

-तिलकराम शर्मा
4.2.64
चरणसिंह
5.2.64

ऐसी ही एक घटना और घटित हो गई। जब वे वनमंत्री थे, उनकी जेष्ट बेटी अपने बच्चों के साथ आगरा से लखनऊ पहुंची। बातचीत के दौरान उन्हें ज्ञात हुआ कि बेटी वन विभाग की जीप से आई है, यदपि उन्होंने पेट्रोल के पैसे दे दिये हैं। घर पर तो वे कुछ नहीं बोले। 10 बजे सचिवालय पहुंचते ही तुरन्त निजी सचिव को बुलाया-"देखो, वे लोग वन विभाग की जीप से आए हैं। भले ही पेट्रोल के पैसे उन्होंने दे दिये हैं, लेकिन मैं इससे सन्तुष्ट नहीं हूं। आप पता लगायें कि सरकारी वाहन का निजी काम में प्रयोग लेने के क्या नियम हैं? निर्धारित खर्चे की गणना करके, उसमें से भुगतान किया गया धन घटाकर बाकी रकम के लिए मेरे नाम से चैक जारी कर दो। ध्यान रहे, यह काम आज लंच से पहले हो जाना चाहिए।"

निजी सचिव ने तुरन्त यह कार्य करके उन्हें रिपोर्ट दी, तभी उन्हें चैन आया।

हैरत होती है, कि यह किसान मसीहा किस माटी का बना हुआ था। शायद कबीर ने ही कहीं लिखा है कि फकीरी का राग अलबेला होता है। फकीरी को कोई कायर व्यक्ति नहीं झेल सकता। फकीरी में मस्त व्यक्ति ही इसका आनन्द उठा सकता है। वही फक्कड़ तब अक्खड़ बनकर ढोंगी मठाधीशों पर प्रहार कर सकता है जो वस्तुत: कहते कुछहैं और करते कुछ हैं। हाथ में कुंडी, बगल में सोटा लिये, जब चारों दिशाओं को अपनी जागीर मान लेता है तो उसे चन्द टुकड़ों पर फिसलने वाले लोग रोक नहीं सकते तभी तो चौधरी साब मानो नाचनाच के गाते-

"कबीर माया पापणी, फंद ले बैठी हाटि।

सब जग तौ फंदे पडूया, गया कबीरा काटि॥"

कभी कभी भय लगता है, कि 21वीं सदी में कोई पाठक यह न पूछ ले, "क्या सचमुच चौधरी साब ऐसे थे?"

12.

उस दिन, अप्रेल 1964 का रविवार था। कार्यक्रम के अनुसार चौधरी साब को हवाई जहाज से जौनपुर जाना था। निजी सचिव तिलकराम शर्मा छुट्टी के मूड में घर में आराम कर रहे थे। तभी घर में टेलीफोन की घंटी बज उठी। सामने से आवाज आई, "चौधरी साब पी. ए. से बात करना चाहते हैं।"

"मैं बोल रहा हूं।" तिलकराज शर्मा ने कहा।

"मुझे दिल्ली जाना है।" चौधरी साब की आवाज थी।

"कब, सर।"

"आज ही।"

"ठीक है, आवश्यक रिजर्वेशन रात की ट्रेन से करवा देता हूं।"

"नहीं भाई, मुझे दोपहर तक तो वहां पहुंचना है।"

"तब बेहतर हो कि आप जौनपुर की अपेक्षा दिल्ली का जहाज पकड़ लें।"

"लेकिन मैं तो पार्टी सम्बन्धी कार्य से जा रहा हूं। राज्य सरकार का जहाज इसके लिए उपयोग में नहीं ले सकता। आप एयरलाइन्स के जहाज के समय का पता लगाओ। वैसे बहुगुणा भी प्रयास कर रहे हैं।..."

"मेरे साथ इस बार ट्यूर में कौन जायेगा?" क्षणभर रुककर चौधरी साब ने पूछा।

"अमुक श्री..." तिलकराम ने नाम बताया।

"नहीं, या तो श्रीराम अग्रवाल या तुम साथ चलो। हम करीब 9 बजे यहां से कानपुर के लिए चलेंगे और वहां से जहाज पकड़ लेंगे।"

पी. ए. ने घड़ी की ओर देखा, "लेकिन समय तो हो गया सर! मैं कैसे...."

"तुम तुरन्त तैयार हो जाओ! मैं गाड़ी भेज रहा हूं।"

वे कानपुर पहुंचे और वहां से दिल्ली। यू. पी. निवास में डेढ बजे पहुंचे। चौधरी साब व्यस्तता से कार्य में जुट गये। रात को मेरठ में पहुंचना था। अत: पी. ए. ने जिला मजिस्ट्रेट मेरठ को फोन कर दिया कि रात को चौधरी साब आ रहे हैं। उधर चौधरी साब, कामराज, नन्दा, केशवदेव मालवीय आदि नेताओं से मिलते रहे। रात को 12 बजे यू. पी. निवास पहुंचे। जाने का प्रोग्राम निरस्त कर दिया था। निजी सजिव ने मेरठ कलेक्टर को फोन से इसकी जानकारी दे दी।

दूसरे दिन सुबह पुन: कलेक्टर मेरठ को फोन कर दिया कि चौधरी साब दोपहर तक पहुंच रहे हैं। चौधरी साब की व्यस्तता को देखकर तिलकराम ने पुन: फोन किया-"प्रोग्राम बदल गया है। चौधरी साब रात को पहुंच रहे हैं।" लेकिन उनकी व्यस्तता का अंत नहीं हुआ। अत: तिलकराम ने रात को फ़िर सूचित किया-"चौधरी साब आज भी नहीं आ रहे हैं।" दो दिन चौधरी साब खूब व्यस्त रहे। तीसरे दिन तिलकराम से कहा गया कि आज चौधरी साब दोपहर तक मेरठ के लिए रवाना हो जायेंगे।

पिछले दो दिन का अनुभव निजी सचिव के लिए कटु रहा था। वह कई बार कलक्टर को फोन कर चुके थे और समय आगे सरकाते रहे थे। अब वह और झूठा नहीं बनना चाहते थे। यही

सोचकर कलेक्टर को फोन नहीं किया। अजीब संयोग, कि उस दिन सचमुच मेरठ के लिए चल पड़े। वहां पहुंच कर देखा कि सर्किट हाउस बन्द था। कोई अधिकारी या पुलिस आसपास नहीं दिखाई दी। यह देखक चौधरी साब चकित। तिलकराम से पूछा, "क्या तुमने कलक्टर को सूचित कर दिया था?"

"नहीं सर।" उत्तर मिला।

"क्यों?" चौधरी साब ने दृष्टि गड़ा कर पूछा।

"क्योंकि, तीन दिन से कलक्टर को समय देकर आगे बढाया जा रहा था। आप को फुर्सत नहीं मिल रही थी। इससे मैं हंसी का पात्र बन गया था। आज भी मुझे विश्वास नहीं था कि आप मेरठ के लिए चल पड़ेंगे। जब आप अचानक चलने को तैयार हुए तो मैं अन्य कार्यों में व्यस्त हो गया।"

चौधरी साब काफी खिन्न हो गये। फिर भी तिलकराम को समझाया, "ऐसे अवसर पर अन्य अधिकारियों जैसे यू. पी. निवास के इन्चार्ज को कहना चाहिए था कि वह मेरठ फोन कर देते। भविष्य में ध्यान रखना।"

उपरोक्त घटना उनके अत्यधिक व्यस्त रहने एवं उनके साथ रहने वाले निजी सहायक की मुशीबत का प्रमाण है। किन्तु वे जानते थे कि हर कोई व्यक्ति उनके पास नहीं टिक सका। हां, निजी स्टाफ को उन्होंने जितनी इज्जत दी, शायद ही किसी मंत्री ने दी हो।

एक बार वे हापुड़ ट्रेन द्वारा पहुंचे। अगवानी में आये हुए विधायक ने उनका सामान कार में रखवाने के बाद पूछा, "चौधरी साब, क्या टाइप बाबू भी आया है?"

चौधरी साब सुनकर खीझ उठे। कहा, "श्रीमानजी, आप बहुत पुराने विधायक हैं। क्या तुम नहीं जानते कि मंत्री के साथ 'टाइप बाबू' नहीं बल्कि प्रायवेट सेक्रेटरी या प्रायवेट असिसटेंट होते हैं।" एक विधायक के मुंह से ऐसी बात उन्हें बहुत अभद्र महसूस हुई। वे इतने नाराज़ हुए कि हापुड़ से बुलन्दशहर तक की यात्रा में विधायक से कोई बात नहीं की।

एक बार की यात्रा में तिलकराम शर्मा मेरठ के सर्किट हाउस में रुके रहे और चौधरी साब दिन में छपरौली निकल गये। रात को लौटकर मेरठ में एक मित्र के साथ उन्हें भोजन करना था। रात को तिलकराम के पास घंटी आई कि खाने के लिए वहीं पहुंचो जहां चौधरी साब थे। तिलकराम ने उत्तर दिया, "धन्यवाद, मेरे खाने की व्यवस्था हो जायेगी।"

तब दूसरे ही क्षण चौधरी साब के मेजबान का फोन था-"चौधरी साब आपकी प्रतिक्षा कर रहे हैं। जब तक आप नहीं पहुंचेंगे, वे खाना शुरू नहीं करेंगे।" कुछ मिनट बाद ही देखा कि एक कार लेने आ गई है। जब तिलकराम शर्मा पहुंचे तो देखा कि चौधरी साब एवं अन्य लोगों के आगे खाना परोसा हुआ है। खाना तभी शुरू हुआ, जब तिलकराम अपनी जगह बैठ गये। अपने निजी स्टाफ के प्रति स्नेह का, इज्जत का यह ज्वलंत उदाहरण है। बाद में भी अनेक अवसर आये, जब अपने स्टाफ को उन्होंने उपकृत किया।...बहरहाल....

13.

मई का अंतिम सप्ताह। और तभी एक दिन उन्होंने सुना, पंडित नेहरू नहीं रहे। वे स्तब्ध रह गए। पंडित नेहरू से उनकी कभी नहीं बनी किन्तु नेहरू से लड़ने में भी उन्हें मानो आनन्द आता था। विचार-विमर्श से वे दो बातें अपनी कहते, दो नेहरू की सुनते। पंडित नेहरू एक बिन्दू थे जहां रुककर चौधरी साब पीछे मुड़कर देख सकते थे। पंडित नेहरू का वे आदर भी करते थे।

बेशक उनकी विचारधारा में दिन रात का अन्तर था।

नेहरू स्वप्नदृष्टा थे तो चौधरी साब यथार्थ के धरातल पर खड़े थे। वे आकाश पुत्र थे तो ये धरती पुत्र। नेहरू देश के अभिजात वर्ग के प्रतीक थे तो चौधरी साब गांव की झौंपड़ी के। इस बात को चौधरी साब सदैव समझते थे। उन्हें पक्का यकीन था कि नेहरू इस देश की गरीबी दूर नहीं कर सकते। वे अच्छी अच्छी कहानियों वाली पुस्तक तो थे, जिसमें सुन्दर सुन्दर चित्र थे किन्तु भूख मिटाने की कोई युक्ति नहीं सुझा सकते थे। उनके मन-मस्तिष्क में रूस का समाजवादी आदर्श छाया हुआ था। नेहरू भारतीय अंग्रेज थे तो चौधरी साब ठेठ देहाती। इतनी लंबी दूरी को पाटना आसान तो न था। लेकिन चौधरी साब नेहरू की इस मायने में कद्र करते कि वे प्रजातंत्रवादी थे। चरणसिंह की बात ध्यान से सुनते थे। उनके प्रत्येक पत्र का उत्तर देते थे। पंडित नेहरू उनकी योग्यता की कद्र करते थे।

1959 के नागपुर अधिवेशन के पश्चात दोनों के बीच की खाई और चौड़ी हो गई थी। सम्पूर्णानन्द, चन्द्रभानु गुप्ता और कमलापति त्रिपाठी जैसे मठाधीशों ने इसका फायदा भी उठाया। फिर भी चरणसिंह के लिए नेहरू एक विश्वास-बिन्दु थे। उनसे बार बार भारत की कृषि और ग्रामीण जनता के बारे में तथ्यों सहित बहस की। इसका परिणाम यह हुआ कि अंतिम वर्षों में चौधरी साब से अत्यधिक प्रभावित भी हुए। लेकिन तब नेहरू शक्तिशाली नहीं रहे थे और देश आंख मूंद कर किसी के पद चिन्हों पर चलने की नकल कर रहा था। अचानक सब कुछ समाप्त हो गया था। उस दिन वे चुपचाप काफी देर तक सोचते रहे। अब क्या होगा? गांधी, पटेल के बाद एक और सेनानी जा चुका था।

लाल बहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बने थे। उन्हें इस बात की तसल्ली थी कि शास्त्री गरीबी में पले-बढे हैं। उनसे सम्पर्क भी अच्छा था। सुचेता कृपलानी द्वारा प्रस्तुत दो प्रस्ताव रुकवा सके थे लेकिन उनके संघर्ष का अंत नहीं था। आयु बढती जा रही थी किन्तु परिश्रम कम नहीं हो रहा था। कार्य में जरा भी ढिलाई सहन नहीं होती। इसीलिए निजी स्टाफ में भी इने-गिने लोग ही ठहर सकते थे। एक अवसर पर तो उन्होंने 8 माह तक बिना पी. ए. के कार्य किया। क्योंकि उपलब्ध स्टाफ में उनके मनपसन्द का कोई नहीं था। कई ऐसे अवसर भी आये कि चौधरी साब के ड्यूटि लगाने से कई लोगों ने छुट्टी जाना बेहतर समझा। उन्हें तो ईमानदार, कर्मठ और सादगी पसन्द स्टाफ चाहिये था। उनके प्रिय पी. ए. थे तिलकराम शर्मा। शर्मा मेरठ जिले के रहने वाले थे। पसन्दगी का कारण मेरठ जिले का होना नहीं था। वे स्टाफ में चौधरी साब की प्रतिमूर्ति समझे जाते थे। हर समय कार्य में जुटे रहते थे।

अगस्त 65 में चौधरी साब के पास कोई पी. ए. नहीं था। तिलकराम शर्मा छुट्टियां बिताकर आये थे। वह चौधरी साब के साथ काम तो करना चाहते थे किन्तु कहने का साहस नहीं हो रहा था। लोगों ने समझाया कि यों ही घर पर मिल तो आओ। शर्मा जब पहुंचे तो देखा कि चौधरी साब फाइलों में कागज आदि ढंग से लगा रहे हैं। नमस्कार करके शर्मा भी 'फाइलिंग' करने में सहायता करने लगे। बातों ही बों में चौधरी साब को पता लग गया कि शर्मा खाली हैं। उन्होंने कहा, "ठीक है तुम मेरे पास आ जाओ।"

इसके बाद तो मुख्यमंत्री बनने तक तिलकराम शर्मा साथ रहे। मुख्यमंत्री बनने पर चौधरी साब का कहना था-"तिलकराम वरिष्ठता में नम्बर एक नहीं हैं। यदि मैं रखुंगा तो परम्परा टूटेगी। लोग कहेंगे कि मेरठ जिले का रहने वाला है, इसलिए मैंने नियम तोड़कर रखा है।" हालांकि इससे पूर्व अनेक मंत्री और मुख्यमंत्री इस नियम को तोड़ चुके थे। 1967 में भी रेवेन्यू मंत्री उदित नारायण शर्मा ने किसी खाश पी. ए. के लिए चौधरी साब से कहा, "अमुक को मेरे साथ लगा दो, क्योंकि वह अपना आदमी है।"

चौधरी साब ने नाराजगी से कहा, "शर्मा जी आप क्या कह रहे हैं? सरकारी कर्मचारी किसी के नहीं होते। वे उस मंत्री के प्रति विश्वास पात्र होतें हैं जिसके साथ उन्हें काम करना पड़ता है।

ये सब अब अपने ही हैं। यदि आपको कोई कठिनाई हो तो मुझे बतलाना।" किन्तु यहतो बाद की बातें हैं।

तभी 1965 का भारत-पाक युद्ध शुरू हो गया। एक रात साढे ग्यारह बजे उन्होंने तिलकराम शर्मा को फोन किया-"एक तार लिखो।" शर्मा कलम-कागज लेकर तैयार हो गये। वे लिखाने लगे-"श्री लाल बहादुर शास्त्री, प्रधानमंत्री, नई दिल्ली।
5 अगस्त की स्थिति में वापस नहीं लौटना है। विदेशी ताकतें अपने हित में ऐसा कहेंगी।"

रात को चौधरी साब को ख्याल आया कि सुबह ही संसद में इस विषय पर चर्चा होगी। इसलिए तार देकर अपनी भावनाओं से अवगत कराना आवश्यक समझा। बेशक वे अपने विभाग और राज्य तक सीमित रह सकते थे। लेकिन देश की एकता और अखण्डता का प्रश्न प्रत्येक समय उन्हें घेरे रहता। राष्ट्रीय समस्याओं को हल करने का सुझाव वे समय समय पर पंडित नेहरू और शास्त्री को देते रहते थे। ताशकंद में जब शास्त्री पाकिस्तान से बातचीत करने गये तो चौधरी साब ने सलाह दी थी कि पाकिस्तान से सबसे पहले कश्मीर विषय पर बात करनी चाहिए। दृढ़ता से पाकिस्तान को बता देना चाहिए कि यदि वह वास्तव में शांति चाहता है तो उसे कश्मीर को खाली करना चाहिए। वहां उसने असंवैधानिक रूप से कब्जा कर रखा है। तभी आगे बात की जानी चाहिए। यह अलग बात है कि ताशकंद में ऐसा नहीं हुआ। इसके बाद की लड़ाई में भी इस विषय को नहीं उठाया गया जबकि पाकिस्तान के एक लाख सैनिक भारत के कब्जे में थे। चौधरी साब ने उस समय जो बात कही थी, वही आज 31साल बाद भारत के प्रधानमंत्री कह रहे हैं। लेकिन समस्या ज्यों की त्यों बाकी है। चौधरी साब का राष्ट्रीय दृष्टिकोण कितना समझ भरा था।

1965 का वर्ष युद्ध के लिए ही नहीं, भयंकर सूखे के लिए भी याद किया जाता है। देशव्यापी भयावह सूखा। खरीफ की फसल चौपट हो चुकी थी। अमेरिका ने मनमानी शर्तों पर खाद्यान्न देना स्वीकार किया था। तभी प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने आह्वान किया था-सप्ताह में एक दिन उपवास रखा जाये।"जय जवान जय किसान"का नारा लगाने वाले शास्त्री के यह आत्म सम्मान का परिचायक थ।

सूखे की वजह से पानी बहुत नीचे चला गया था। चौधरी साब के पास इन दिनों सिर्फ वन विभाग था। मख्यमंत्री सुचेता कृपलानी ने मंत्रीमंडल की बैठक बुलाई। चौधरी साब से सम्मिलित होने के लिए विशेष आग्रह किया गया था।

बाजार में खाद्यान्नों का भारी संकट था। जमाखोरों ने अनाज छुपा लिया था। मंत्रीमंडल का प्रस्ताव था कि थोक व्यापारियों का स्टॉक जमा करने के लिए कलक्टरों को तुरन्य वायरलैस से आदेश जारी किया जावे।

प्रस्ताव पर गर्मागर्म बहस काफी देर चली। अनेक कदमों पर विचार किया गया। चौधरी साब चुपचाप सुन रहे थे। सहसाही सुचेता कृपलानी ने पूछा, "चौधरी साब, आप भी तो बोलिए"

"जो कुछ किया जा रहा है, ठीक ही है।" चौधरी साब ने उदासीनता से कहा। मुख्यमंत्री ने पुन: आग्रह किया, "कृपया अपने विचार अवश्य प्रकट करें।"

"ठीक हैं" तब कहते हुए चौधरी साब ने कहा, "कृपया सबसे पहले तो अपना यह आदेश वापस लें जिसके तहत आप सभी कलक्टर को वायरलैस से देना चाहती हैं कि समस्त थोक व्यापारियों का स्टॉक जब्त कर लिया जाये। इससे बाजार में अफरा-तफरी मच जायेगी। जनता में भयानक घबराहट बढ जायेगी। व्यापारी अनाज को छुपा देंगे और मूल्यों में भयंकर तेजी आ जायेगी। इससे जनता में त्राही त्राही मचेगी, वह संभालने में नहीं आयेगी।"

और तभी मंत्रीमंडल की बैठक में गहरा सन्नाटा छा गया था। सुचेता कृपलानी बड़े ध्यान से उन्हें सुन रही थी। कुछ क्षण रुककर चौधरी साब ने खाद्य मंत्री से पूछा, "क्या आपने इस समाचार

की पुष्टि की है कि एक जिले में लोग भूखमरी के शिकार हुए हैं।"

खाद्य मंत्री ने नकारात्मक रूप से गर्दन हिलाई। चौधरी साब क्रोध से भर उठे। उन्होंने ऊंची आवाज में कहा, "श्रीमान, तब आप सुबह की चाय कैसे पी सके? आपने नाश्ता कैसे कर लिया? अखबार में छपी खबर की प्रशासन से जांच करवा कर ही आपको चाय पीनी चाहिए थी। आपको अभी तुरन्त जिलाधीश से सम्पर्क करके सही स्थिति की जानकारी लेनी चाहिए। यदि खबर गलत है तो आपको तुरन्त इसका खंडन करना चाहिए। हमें जिम्मेदारी से कार्य करना चाहिए।"

मंत्री मंडल के सदस्य टकटकी लगाये चौधरी साब को सुन रहे थे। देर रात तक चली बैठक में वे विभिन्न सुझाव पेश करते रहे। ज्योंही बैठक से वे अपने दफ्तर में आये, संवाददाताओं ने उन्हें घेर लिया।

पत्रकार अनाज की ऊंची कीमतों बाबत उनसे अनेक सवाल करने लगे। चौधरी साब ने उत्तर दिया, "ऐसा नहीं है।"

एक पत्रकार ने जोर से बोल कर कहा, "चौधरी साब; अनाज दो रुपये किलो बिक रहा है और आप कह रहे हैं ऐसा नहीं है?"

चौधरी साब ने उत्तर दिया,"भैया अनाज 1.50 रु. किलो बिक रहा है।"

"कहां?" सबने एक साथ पूछा।

"बाजार की प्रत्येक दुकान पर।" चौधरी साब ने तपाक से उतर दिया। संवाददाताओं ने व्यंग्य से हंसकर कहा, "चौधरी साब, बाजार में गेहूं दो रुपये से कम कहीं नहीं बिक रहा है।"

चौधरी साब ने एक की आंखों में आंखें डालकर कहा, "गेहूं क्यों? बाजरा, ज्वार क्या अनाज नहीं है?"

संवाददाता एक साथ हंसे। "लेकिन उन्हें खाता कौन है?"

"गांव के लोग और शहरों के गरीब उन्हें खाते हैं। आप भी अब कोशिश कीजिए। यह अनाज बहुत स्वादिष्ट होता है।" चौधरी साब मुस्कराये। तब सभी संवाददाता भी हंसे। आगे कुछ न पूछ वे चलते बने। यह प्रेस से निपटने का उनका अपना तरीका था।

औरों से हटकर चलना ही तो इस महामानव की विशेषता थी। अलग सोच, अलग राह, लीक को छोड़कर। अफसरों की सहायता से बजट पेश करना, बजट के अनुसार सडक, स्कूल, अस्पताल या कारखाना लगाना कोई बौद्धिक कार्य नहीं है। चर्चा तो वहां होती है जब कोई नया विचार, नई राह, पुराने नियमों में सुधार, या ऐसी समस्या हल करना जिससे लाखों गरीबों का कल्याण होता हो। उत्तर प्रदेश में किसी ने ऐसा किया तो वे चौधरी साब थे। इसके लिए उनकी अकल्पनीय परिश्रम याद की जायेगी। आने वाली पीढ़ी को उत्तर प्रदेश में ही नहीं, सारे भारत को राह दिखाने वाले थे ये युग-द्रष्टा। तब आमजन के तो वे हीरे बन गये किन्तु स्वयंभू नेताओं की नींद हराम हो गई थी। ऐसे सता पिपासु रात दिन उनके विरुद्ध षड्यंत्र रचते रहे। लेकिन असली भारत के इस महानायक ने कभी किसी से मुख्यमंत्री की कुर्सी नहीं मांगी। केन्द्रीय नेतृत्व या राज्य के मठाधीशों से संघर्ष किया तो किसान के लिए, ग्रामीण जन के लिए, गरीब के लिए किया। और तब अपना राजनैतिक जीवन दांव पर लगाने से नहीं चूके। गलत नीतियों के विरुद्ध वे किसी भी हद तक जाने को तैयार रहते। इस्तीफा उनकी जेब में रहता। सन् 1947 से 15-16 वर्ष के अन्तराल में ही उन्होंने कोई एक दर्जन बार इस्तीफा पेश कर दिया। कभी स्वीकार हआ, कभी उनकी बात मानी गई। ये इस्तीफे उनके गांव के आदमी के लिए दिए गये थे।

अपने सहयोगियों के साथ हुए उनके संघर्ष से विदेशी भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। अमेरिकन लेखक पॉल आर. ब्रास ने उन्हीं दिनों एक पुस्तक लिखी थी, 'भारत के एक राज्य में गुटीय राजनीति: उत्तर प्रदेश में कांग्रेस दल।' लेखक ने लिखा, "...चौधरी साब...यह आदरपूर्वक सम्बोधन है जो उनके अनुयायियों द्वारा उपयोग किया जाता है। वह असामान्य रूप से उत्तर प्रदेश

की राजनीति के एक गुट के सफल नेता रहे हैं। चरणसिंह को प्रेरणा देने में सता का मोह तो कम ही रहा है, सर्वाधिक प्रेरणा मिली है उनके अजय विचारों, नीतियों एवं कार्यक्रमों की सच्चाइयों के कारण। चरणसिंह इन्हीं कारणों से न तो मित्रता कर पाते हैं और न ही समर्थन ले पाते हैं। किन्तु अपने विरोधियों को भी कुछ नहीं दे पाते हैं।

"चरणसिंह वास्तविक रूप से राजनैतिक बुद्धिजीवि तो नहीं हैं, लेकिन वह बहुत काफी पढ़े लिखे व्यक्ति हैं। अपनी इस तीक्ष्ण योग्यता को उन्होंने उत्तर प्रदेश की कृषि समस्याओं के सतत अध्ययन में लगाया है। उत्तर प्रदेश में चरणसिंह कृषक हितों में अगृणी चिंतक एवं एक छत्र नेता हैं। उत्तर प्रदेश जमींदारी समाप्ति समिति के प्रमुखों में से होते हुए आपने इस बात का निश्चित अथक प्रयास किया कि इस कानून में कोई ऐसा छोटा सा रास्ता भी न रहे जिसके कारण जमींदारों का वर्चस्व समाप्त होने से रह जाये तथा राज्य की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में जागीरदाराना हस्तक्षेप फिर कहीं से भी सिर न उठा पाये।

"श्री चरणसिंह में भारतीय जनसमूह के एक आदर्श नेता के काफी विशिष्ट गुण हैं। वह अपनी बौद्धिक विशिष्टताओं, गुणों, ईमानदारी और सत्यनिष्ठा के लिए बहुचर्चित रहे हैं। अभी तक उन पर अपने स्वयं के लिए कुछ भौतिक उपलब्धियां प्राप्त करने का कोई आरोप नहीं लगा है। इनकी एक दल के नेता के रूप में प्रमुख आलोचना जिस बात को लेकर होती है, वह है प्रकृति से स्वाभिमानी एवं दूसरों से सम्बन्धों के बीच गैर-समझौतावादी होना।"

"बहुत से गुटीय नेता राजनीतिज्ञों से तालमेल बना कर चलते हैं और अपने समर्थकों एवं सहयोगियों की सहायतार्थ आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। वैसे तो इस प्रणाली में परिवर्तन होता रहता है। मेरठ जिले में श्री चरणसिंह एक अत्यन्त सफल दलीय नेता हैं-ने अपनी प्रतिष्ठा को कुछ इस प्रकार विकसित किया है कि वह आनुपातिक रूप में असमंजनशील, गैर-समझौतावादी सी बन गई है। यह नहीं है कि चरणसिंह आनुपातिक तौर पर इस अर्थ में भी गैर-समझौतावादी या असमंजनशील हो सकते हैं कि वे अपने समर्थकों के लिए निष्ठाशील हैं और वह अपने लिए कुछ भी नहीं चाहते। इससे ही अपने पर निर्भर रहने वालों को वे कुछ नहीं बांट सकते।

"चौधरी चरणसिंह जातीय नेता नहीं हैं। उनके समर्थकों में बहुसंख्या ब्राह्मणों की है। सन् 1962 में मेरठ जिला कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष ब्राह्मण था जो चौधरी साब के विभिन्न मित्रों में से था। 1963 में जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद पर जिस अन्य मित्र को बैठाया, वह वैश्य था...।"

मि. पॉल आर. ब्रास ने उन्हें 'जनता का आदमी' कहा है जिसने कभी भी दिखावा नहीं किया। उनका आचरण, सिद्धातों के प्रति दृढ़ता, कड़ा अनुशासन, ईमानदारी एवं स्पष्टवादिता को राजनीति में सफलता के लिए बाधक माना।

ईमानदारी की चर्चा तो की जाती है लेकिन उसे निभाना सबके बुते की बात नहीं। किन्तु चौधरी साब ने इसे दृढ़ता से अपनाई। वे स्वयं ही नहीं, दूसरों से भी अपेक्षा करते थे कि वे ईमानदार बने। और यही उनके सहयोगियों के साथ संघर्ष का कारण था। वे प्राय: ही कहा करते थे, "वह भी समय था जब बेईमान लोग सिर्प अंगुलियों पर गिने जा सकते थे। आज तो ऐसा समय आ गया है कि ईमानदार लोग ढूंढने में कठिनाई होती है।"

ईमानदारी सोच में गंभीरता, बोलने में कंजूसी और कार्य में दृढ़ता लाती है। चौधरी साब में यह सब ऊंचे दर्जे की थी।

एक दिन एक फाइल उनके पास हस्ताक्षर हेतु आई। वे हस्ताक्षर करने ही वाले थे कि पी. ए. ने उस आदेश में एक कमी की ओर संकेत किया। तब उन्होंने पुन: ड्राफ्ट को पढा और उन्हें कमी समझ में आ गई। नोट शीट पर टिप्पणी लिखाने लगे-

"मेरे पी. ए. ने मेरे ध्यान में लाया है कि..." पी. ए. के हाथ लिखते लिखते ठिठक गये।

चौधरी साब ने पूछा, "क्यों, रुक क्यों गये?"

"सर, मुझे इस मामले में क्यों घसीट रहे हैं?"

"लेकिन आपने ही तो इस गलती को पकड़ा है।"

"ठीक है, लेकिन हमारा तो कर्तव्य है कि जो पेपर आपके सामने आये उसकी गलती को पकड़ें।"

"लेकिन मैंने तो प्रस्ताव को स्वीकृति दे दी थी और गलती को अनदेखी कर गया था। तुम ही इसे मेरे ध्यान में लाए। मैं स्वयं इसकी प्रशंसा नहीं लेना चाहता।"

उन्होंने देखा कि पी. ए. फिर भी सहमत नहीं है। तब बोले, "ठीक है ऐसा लिखो–मैंने अपने पी. ए. को फाइल अध्ययन करने हेतु दी तो उसने ध्यान दिलाया है कि..."

जबकि राजनीति में तो ऐसा होता आया है कि कोई लेख या पुस्तक किसी अधिकारी द्वारा लिखी जाती है और प्रकाशित होती है तो लेखक की जगह मंत्री का नाम होता है। ऐसी बातों को चौधरी साब "बौद्धिक बेईमानी मानते थे।

वन विभाग की जीप का खर्चा हो या हवाई यात्रा का खर्चा आदि ऐसे उदाहरण हैं जो चरणसिंह को अन्य नेताओं से बिल्कुल अलग खड़ा कर देते हैं। अब तो ऐसी चीजों की गिनती कौन करता है? आज तो राजनेताओं में हौड़ लगी हुई है कि कौन एक दूसरे से अधिक सरकारी सुविधाओंका बेजां फायदा उठा सकता है। जो अधिक विलाशिता का जीवन जीता है, वह प्रभावशाली माना जाता है। अभी पिछले दिनों ही एक केन्द्रीय मंत्री विदेश से विलाशिता का कीमती सामान बिना कस्टम चुकाये पकड़े गये थे। यह जांच पड़ताल करने वाली महिला अधिकारी का तबादला करवा दिया गया। यही नहीं, अनेक पूर्व मंत्री भी आज मंहगी सुरक्षा सुविधा ले रहे हैं। सिर्फ चारमाह तक प्रधानमंत्री रहने वाले एक सांसद के साथ आज जब भारी भरकम सुरक्षा का लवाजमा चलता है तो लगता है कि सचमुच में इन्होंने चार महिनों में वह काम कर दिखाया जो चालीस साल में नहीं हुआ। और अभी हवाला कांड के सभी दलों के नेताओं को देखकर तो लगता है कि चौधरी साब की आत्मा बिलख रही होगी। कितने धूर्त लोग भर गये हैं राजनीति में।...बहरहाल...

जिस मिट्टी के चौधरी साब बने हुए थे, वह मानों अब दुर्लभ है। स्वयं की आर्थिक स्थिति कभी ठीक नहीं रही। फिर भी किसी जरूरतमंद या गरीब की सहायता करने से नहीं चूकते। इससे उनकी जेब हमेशा खाली रहती। जो कुछ बचाकर रखा जाता, वह गायत्री देवी के प्रयास से ही बचता। उस दिन एक दिलचस्प घटना हो गई।

चौधरी साब के एक निकटस्थ साथी लोकसभा का उपचुनाव लड़ने जा रहे थे। चौधरी साब ने ही उन्हें चुनाव लड़ने को तैयार किया था। उस सज्जन ने चौधरी साब के सामने असमर्थता प्रकट करते हुए कहा, "लेकिन मेरे पास तो सिक्यूरिटी के 250 रुपये भी नहीं है। फार्म कैसे भरूं?"

चौधरी साब की जेब में तो पैसे थे ही नहीं। घर पर फोन किया। संयोग से, गायत्री देवी की जमा पूंजी भी इतनी नहीं थी। चौधरी साब चिंतित हो गये कि क्या किया जाये। तभी अचानक कुछ कागजों पर हस्ताक्षर करवाने हेतु पी. ए. तिलकराम शर्मा अन्दर आये। चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार ने आंखों ही आंखों में चौधरी साब से पूछा, "इनसे मांगा जाये?"

चौधरी साब ने भी संकेत से स्वीकृति दे दी। उम्मीदवार ने पी. ए. से पैसे मांग लिये। दुर्भाग्य देखिये कि उस समय पी. ए. के पास भी इतने पैसे नहीं थे। उस समय की मानसिक अवस्था की कल्पना की जा सकती है। लेकिन तभी पी. ए. ने कहा, "मैं कहीं से व्यवस्था करके ला देता हूँ।" जब पैसे आ गये, तभी फार्म भरा जा सका।

यह चरणसिंह की आर्थिक स्थिति का एक चित्र उपस्थित करता है। यह उस व्यक्ति का हाल था जो 1947 से सरकार से जुड़ा हुआ था।

डा. स्वरूपसिंह चौधरी साब को यथा-संभव आर्थिक सहायता करते रहते थे। एक अवसर पर, जब वे मंत्री नहीं थे, दिल्ली आये हुए थे। जाते समय डा. स्वरूपसिंह के पास गये और कहा, "मुझे लखनऊ जाना है। किराये-भाड़े की व्यवस्था करो।"

डा. सिंह के आश्चर्य का कोई ठिकाना न था। जो व्यक्ति कल तक मंत्री था, उसकी यह स्थिति कैसे हो सकती है? शायद पाठक इसे अतिशियोक्ति समझें, लेकिन जिन लोगों ने इस फक्कड़ नेता को समीप से देखा है, उनके लिए कोई आश्चर्य नहीं है।

यह भी प्रश्न उठता है कि तब वे चुनाव कैसे लड़ते थे? उसकी चिंता उन्हें कभी नहीं करनी पड़ी। उनके चुनाव क्षेत्र के कार्यकर्त्ताओं की यह सामूहिक चिंता थी। जब फार्म भर दिया जाता तो कार्यकर्ता किसानों से चन्दा लेते थे, एक दो गाड़ी दिल्ली से किराये पर ले आते। पेट्रोल कागज आदि का खर्चा चन्दे से पूरा किया जाता। उन्हें कभी भी अपने चुनाव की चिंता नहीं करनी पड़ी।

यह आश्चर्यजनक सत्य है कि इतना होने पर भी, चौधरी साब गरीब छात्रों को नियमित रूप से कुछ पैसा अपनी तनख्वाह में से भेजते रहते। एक अवसर पर एक मेडिकल छात्र ने उनसे अधिक रकम की मांग कर दी। यह उनके वश की बात नहीं थी। किन्तु छात्र को निराश भी नहीं करना था। बैठकर सोचने लगे, किसे कहा जाये? अक्सर अधिक रकम मांगने पर वे अपने परिचितों से पैसा दिलाया करते थे। उस दिन उन्होंने श्री प्रेमनारायण, चैयरमैन, म्युनिसिपल बोर्ड, बडौत को पत्र लिखा, जो इस प्रकार था:-

निजी

चरणसिंह
मंत्री
स्वायत शासन एवं वन

लखनऊ
30 मार्च, 1966

प्रिय प्रेमनारायण

मैं चाहता हूं कि तुम एक विद्यार्थी की आर्थिक सहायता करो। छोटी-मोटी छात्रवृति तो मैं भी देता रहता हूं, परन्तु यह लड़का एक मेडिकल कॉलेज में पढता है और उसका खर्चा बड़ा है, जो न मैं और न उसके घरवाले सहन कर सकते हैं। गत वर्ष मंने पिलखुआ निवासी एक मित्र से इस लड़के की सहायता कराई थी। अब की बार सोचते-सोचते मेरा ध्यान तुम्हारी तरफ चला गया। हो सके, तो निम्न लिखित विद्यार्थी के पास 600/-रुपये का एक चेक 50 रुपये महावार के हिसाब से, उसके खर्चे के लिए शीघ्र भेज दो:-

देवराज गिरी गोस्वामी,
विद्यार्थी चतुर्थ वर्ष, एम. एन मेडिकल कॉलेज,
डाकखाना अस्थल बौहर, जिला रोहतक (पंजाब)

सप्रेम
तुम्हारा
चरणसिंह

सेवामें,
श्री प्रेमनारायण जी,
चैयरमैन,
म्युनिसिपल बोर्ड, बडौत, जिला मेरठ।"

पाठको शायद ही कोई ऐसा राजनीतिज्ञ इस देश में हुआ है।

विद्यार्थी के पते से स्पष्ट है कि वह जाट नहीं था, न उनका कोई रिश्तेदार था। ऐसे युग-पुरुष पर शातिर नेताओं ने जातिवाद के आरोप लगाये थे। यह भी समझा जा सकता है कि यह अलबेला नेता क्यों जनता में इतना लोकप्रिय था। उन्हें चुनाव लड़ने को पैसे की क्या आवश्यकता थी?

इतनी विकट आर्थिक स्थिति में भी वे हर किसी से चन्दा लेना उचित नहीं समझते थे। सन् 1967 की बात है। चुनाव हो रहे थे। वे मेरठ सर्किट हाऊस में रुके हुए थे। गाजियाबाद के किसी उद्योगपति ने चुनाव खर्चे हेतु उन्हें 6100/-रु. का चैक दिया। चौधरी साब ने इसे पी. ए. को दे दिया। आज के हिसाब से यह रकम डैढ-दो लाख से कम क्या होगी? वोट पड़ने के बाद वे रेल से लखनऊ चल पड़े। गाड़ी में उन्हें सहसा याद आया। उसी समय पी. ए. को बुलाकर कहा, "उस रकम का ड्राफ्ट बनाकर पार्टी को सधन्यवाद वापस लौटा दो। हमें अब इसकी आवश्यकता नहीं है।" यही नहीं, उस समय राज्य कांग्रेस कमेटी द्वारा प्रत्येक उम्मीदवार को एक-एक हजार रु. चुनाव खर्चे हेतु दिये गए थे। चौधरी साब ने इस रकम को भी वापिस लौटा दी।

इन दिनों हवाला कांड की चपेट में सभी दलों के नेता आ गये हैं। एक बात सभी के मुंह से समान रूप से सुनी जा रही है। उनका तर्क है कि चूंकि चुनाव बहुत महंगे हो गये हैं। इसी कारण यह चन्दा लिया गया है। इस भ्रष्टाचार को रोकने हेतु सरकार खर्चा वहन करे। भोले बने हमारे नेताओं के क्या कहने? यों लगता है मानो चुनाव के लिए उन्हें मजबूरन खड़ा किया जाता है। यह ऐसी जमात है जो हारने के बाद भी सरकारी कोठी खाली नहीं करती। जिस तड़क-भड़क, शान-शौकत और ऐय्यास के आदी हमारे नेता हो गये हैं, इसकी तो कल्पना चौधरी साब ने कभी नहीं की थी। 11वीं लोकसभा के आम चुनाव में प्रचार के दौरान सुना है कि काफी नेता गरीब जनता से हाथ मिलाते समय अपने हाथ को रुमाल से बचा लेते हैं। यह अति विशिष्ट वर्ग मानों अब राज करने के लिए ही पैदा हुआ है। इसीलिए, आज के वातावरण में शायद चौधरी साब का जीने का ढंग अलौकिक लगे। आश्चर्य भी, कि उन्होंने राजनीति कैसे कर ली?

14.

हां, तो 1966 की बात का सिरा पुन: पकड़ना होगा। उस समय चौधरी साब के पास मात्र वन विभाग था। तभी एक धक्का और उन्हें लगा। जनवरी में ही लाल बहादुर शास्त्री ताशकंद में चल बसे थे। इंदिरा गांधी प्रधान मंत्री बन गई। केन्द्रीय नेतृत्व में दो गुट स्पष्ट उभरकर सामने आ गये थे। किन्तु केन्द्र में ऐसा कोई नेता नहीं बचा था जिससे चौधरी साब अपनी मन की बात कह सकें। फरवरी 66में उन्हें स्वायत शासन मंत्रालय का भार भी सौंपा गया था। इसके पीछे भी राज था। स्वायत शासन विभाग के कर्मचारियों की बहुत पुरानी मांग थी कि उनके वेतन का पुनर्निधारण कर राज्य कर्मचारियों के समकक्ष किया जाये। चुनाव सिर पर आ रहे थे। यह बेगार भी चौधरी साब के माथे मंढने के लिए उन्हें यह विभाग भी सौंप दिया गया।

उन्हें मन पसन्द विभाग तो दूर, राज्य नेतृत्व राजनीति में हांसिये पर पटकने का षड्यंत्र रच रहा था। सुचेता कृपलानी बिल्कुल असफल मुख्यमंत्री साबित हुई थी। सन् 67 के चुनाव के बाद कुर्सी पर दृष्टि जमाये घाघ नेताओं ने केन्द्रीय नेतृत्व के कान भरने शुरू कर दिये थे। इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्री बनने के बाद चौधरी साब को एहसास हो रहा था कि अब केन्द्र में उनकी कोई बात नहीं सुनी जायेगी। अपने अपने पक्ष में राजनीति की चौसर बिछाने वाले प्रान्तीय नेता रोज दिल्ली के चक्कर काटने लगे। यह सब चौधरी साब के बुते की बात नहीं थी। 'काम किये जा, राम भजे

जा' की तर्ज पर वे तो अपने कार्य में जुटे रहे। जनता में, अखबारों में, यहां तक कि कांग्रेस पार्टी में इस बात की चर्चा होती कि चौधरी साब के साथ न्याय नहीं हो रहा है। कांग्रेस के मुख्य पत्र 'नेशनल हेराल्ड' में दिसम्बर 66 में निम्न सम्पादकीय प्रकाशित हुआ था–

"राजनीति एक अनिश्चित खेल है। एक अस्त-व्यस्त घातक कृतघ्न खेल। राजनैतिक भविष्य काफी ढुलमुल है और कई लोगों को इसका शिकार होना पड़ता है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण उत्तर प्रदेश में चरणसिंह हैं। श्री चरणसिंह में मुख्यमंत्री बनने के लिए कई योग्यताएं हैं लेकिन कोई भी उनके बारे में विचार नहीं करता, चूंकि उनके पास राज्य में राजनैतिक तौर पर अग्रणी जातियों का जैसे ब्राह्मण, बनिया, कायस्थ व अनुसूचित जातियों का समर्थन नहीं है।"

शायद 'नेशनल हेराल्ड' को यह इसलिए लिखना पड़ा कि लगभग हांसिये पर पहुंचा दिये गये चौधरी साब के पास अब वन विभाग एवं स्वायत शासन विभाग जैसे मामूली विभाग थे। राजस्व, गृह या कृषि मंत्रालय में वे देश को दिशा दे चुके थे। जब आवश्यकता होती, सुचेता कृपलानी उनसे सलाह-मशविरा तो करती लेकिन विभागों को दूर रखा। वे जनहित के तौर पर छोटी सिंचाई योजनाओं पर 1950 से जोर दे रहे थे। कोई भी नहीं सुन रहा था। किन्तु प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों का नुक्शान उठाने के बाद यू. पी. सरकार ने बाद में उनकी सलाह को स्वीकार किया।

चकित कर देने वाली जीजिविषा के धनी थे चौधरी साब। 65 साल की आयु में भी कठिन परिश्रम से मानों राहत मिलती। निकटस्थ लोग टोकते भी, "चौधरी साब, सेहत का भी ध्यान रखा करो। आप दिन रात काम में जुटे रहते हैं। क्या मिल रहा है आपको?"

तब वे मुस्करा देते। " इस शरीर का क्या बनेगा भाई? इसे जितना काम में लो, उतना ही अच्छा है। फिर तो माटी में मिल जाना है।" और वे कबीर का कोई पद या दोहा सुना देते। वे रात को दस बजे तक दफ्तर में बैठकर काम करते। प्राय: ही मंत्री ग्यारह बजे दफ्तर आते। एक-डेढ बजे लंच के लिए घर चले आते। शाम को 4 बजे वापस आते। 1964 तक चौधरी साहब की यही दिनचर्या थी। हां, रात को तो वे सबसे लेट घर जाते। लेकिन 1964 के बाद तो उनकी दिनचर्या बदल गई थी। वह सुबह घर से नाश्ता कर के सचिवालय साढे 9 बजे पहुंच जाते। रात साढे 9 बजे तक वह अपनी कुर्सी से नहीं उठते। बीच में न लंच, न आराम। खाना एक ही बार रात को खाते। लंच के समय वे एक चाय और कुछ बिस्कुट चैम्बर में ही खा लिया करते। गर्मियों में दोपहर को एक दो टुकड़ा तरबूज का ले लेते। उस समय उपस्थित कोई मंत्री, विधायक या सचिव होता तो उन्हें भी खिलाते।

निजी स्टाफ को कुछ लिखाने हेतु बुला लेते और फाइलों के पत्रों में खोये रहते। ऐसे भी अवसर आते, जब वे गंभीर रूप से फाइल में खो जाते और सामने बैठा पी. ए. झपकी ले लेता। ध्यान आने पर चौंककर सीधा बैठता। देखता, चौधरी साब तो गहन रूप से अध्ययन में खोये हुए हैं। कभी सुस्ती नहीं देखी। और यह क्रम 12 घंटे तक चलता रहता। स्टाफ भी स्तब्ध था।

जिज्ञासा होती है, जब मामूली एक दो विभाग उनके पास थे तो इतना क्या काम था? यह अजीब हो सकता है कि जब जब नेतृत्व ने उनका कद छोटा करने का प्रयत्न किया, जनता का विश्वास दुगना प्राप्त हुआ था। इन दिनों, भले ही सरकारी स्तर पर उनके पास छोटे विभाग थे, लेकिन पूरे प्रान्त में आमजन उन्हें गृहमंत्री, राजस्वमंत्री, कृषि मंत्री और न जाने क्या क्या समझे हुए था। इन सम्बोधन के नाम से अभी चिट्ठियां उनके पास आती थी। जिन्हें वे अन्य विभागों को प्रेषित करते रहते। किसी भी प्रकार की समस्या हो, उनका किसान, ग्रमीण, गरीबजन तो अपने मसीहा के पास ही आता। इसी लिए क्या आश्चर्य कि उनका घर, दफ्तर हमेशा भारी भीड़ से घिरा रहता। ज्यों ज्यों यह भीड़ बढती गई, चौधरी साब का कार्य भी बढता गया।

स्वायत शासन विभाग के कर्मचारियों की मांगे बहुत पुरानी थी। चौधरी साब ने निश्चय किया कि इन्हें भी कुछ दिया जाये। कुछ बोर्डों के अध्यक्षों के विरुद्ध भी अनेक शिकायतें थी। साधारणतया ऐसी फाइलों में चैयरमैन का उतर होता, कलक्टर की टिप्पणी होती, कमीश्नर का नोट होता और

सचिव की सलाह होती। परम्परा यही है कि सचिव की सलाह के अनुसार मंत्री अपना आदेश जारी कर सकता है। किन्तु चौधरी साब ऐसा नहीं करते। वे ऐसे कागजों को शुरू से लेकर अन्त तक स्वयं पढते और तब अपना आदेश जारी करते। कई बार उनका आदेश सचिव की टिप्पणी के विरुद्ध होता। वे स्वयं पहले अपने रिव्यू लिखते, फिर आदेश जारी करते। अक्सर यह सब कई बार 100 पृष्ठ से भी अधिक हो जाता। इसमें वे निरन्तर बिना किसी व्यवधान के लगे रहते। तब निजी सचिव उनकी विलक्षण शक्ति देख चकित रह जाते। उस वक्त सचिवालय में कोई अन्य मंत्री ऐसा नहीं था, जो इतनी कठिन मेहनत और बैठक जारी रखता। सुरक्षा गार्ड के लिए आदेश था- "जब मैं अन्दर होता हूं, कमरे के गेट पर बैठने की आवश्यकता नहीं। बस एक एक घंटे बाद देखते रहो कि मैं अन्दर बैठा सुरक्षित हूं।"

स्वायत शासन कर्मचारियों के लिए एक कमेटी बनाने का प्रस्ताव आया जो उनके वेतन निर्धारण के बारे में अध्ययन कर अपनी रिपोर्ट दे। जब यह फाइल चौधरी साब के पास आई तो उन्होंने सचिव से पूछा, "क्या वित विभाग इसमें आर्थिक सहायता करेगा?"

सचिव का उतर था, "कर्मचारियों की तनख्वाह बढाने में जो अतिरिक्त भार आयेगा, वह विभाग को ही वहन करना पड़ेगा।"

"फिर, इस टिप्पणी का मतलब?" चौधरी साब को यह अनावश्यक लगा।

कमेटी बैठाने का अर्थ था कि दो-तीन साल लग जायेंगे और उस पर लाखों रुपया खर्चा आयेगा। उन्होंने मंत्रालय के एक वरिष्ठ अधिकारी को निर्देश दिया कि वह सरकारी कर्मचारियों के नये वेतनमान का अध्ययन करें। वेतनमान में कैटेगरी अनुसार बढोतरी का सुझाव दें। तब चौधरी साब ने निश्चय किया कि वर्षों पुरानी इस समस्या का निराकरण 1967 के चुनावों से पूर्व ही करना है। तब उनकी कठिन परिश्रम का कोई अन्त नहीं था।

चुनाव सिर पर थे। वेतनमान के निर्धारण का कार्य था। अन्य विभागों सम्बन्धी कार्य भी कम न थे। और इस बोझ ने चौधरी साब को पुनः बीमारी में जकड़ दिया। इस वक्त भी लेकिन वे चैन से नहीं रह सकते थे।

उस दिन स्वास्थ्य में थोड़ा सुधार हुआ तो वे मेरठ क्षेत्र के दौरे पर निकल पड़े। किन्तु मेरठ सर्किट हाउस में चलते समय चक्कर आने से गिर पड़े। डाक्टरों ने सलाह दी कि तीन-चार दिन पूर्ण विश्राम की आवश्यकता है। जिस अधिकारी को स्वायतशासन के कर्मचारियों के वेतन निर्धारण का कार्य सौंपा था उसे मेरठ आने के लिए चौधरी साब लखनऊ छोड़ते समय कह गये थे। वह निश्चित दिन मेरठ सर्किट हाउस पहुंचे। सुना कि चौधरी साब गंभीर बीमार हैं। एक दिन के लिए भी अपने क्षेत्र में चुनाव प्रचार पर नहीं जा सके। उन्हें किसी को मिलने नहीं दिया जा रहा था। सिर्फ डाक्टर, अंगरक्षक और पी. ए. ही उनसे मिल सकते थे। इस आदेश के कारण अनेक मंत्री, विधायक और मेरठ क्षेत्र के डी. आई. जी. बिना मिले वापस लौट चुके थे। सचिवालय के अधिकारी को तो चौधरी साब ने बुलाया था, इसलिए मिलने दिया गया। मिलने पर चौधरी साब ने आदेश दिया, "एक दो दिन यहीं रुक कर पुनः एकबार सारा विवरण देख लो। तब तक मैं ठीक हो जाऊंगा।"

उन्हें विश्वास था कि पूर्ण विश्राम से शरीर में जान आ जायेगी। दो दिन पश्चात्, चौधरी साब उक्त अधिकारी के साथ सुबह नौ बजे अपने कमरे में बैठे। लंच समय तक उस पूरे विवरण को पढ लिया जो उनकी हिदायत के अनुसार तैयार किया गया था। उल्लेखनीय है कि स्वायत शासन विभाग के कर्मचारियों के वेतन का पुनर्निधारण का कार्य 18 दिनों में सम्पूर्ण कर लिया गया था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वेतनमान निर्धारण के इस दुरूह कार्य में उन्हें जो निरन्तर कड़ी मेहनत करनी पड़ी, उससे वे पुनः गंभीर रूप से खाट पकड़ चुके थे। बीमारी से ऊबरने में उन्हें और भी अधिक वक्त लगा। किन्तु जो समय निर्धारित किया गया था, उसके अन्दर अन्दर ही वे नये वेतनमान के आदेश जारी कर चुके थे। इसके लिए अफसरों की समिति बनाने का प्रस्ताव रखने वाले लोग

ठगे से देखते रह गये।

इस कर्मयोगी की हर बात निराली थी। हमेशा गांधी कट बाल, धोती और कुर्ता, बिल्कुल सादगी की वेश-भूषा। बाहर जाते समय सिर पर टोपी पहन लेते। 1978 तक उके पास एक ही ऊनी शेरवानी रही। 1967 में उनकी शेरवानी रफू करने हेतु एक टेलर मास्टर को दी गई थी, जहां से वह गुम हो गई। निजी स्टाफ चिंतित था कि अब चौधरी साब पता नहीं कितना क्रोध करेंगे? लेकिन वे चकित रह गए। जब चौधरी साब को बताया गया तो वे बिल्कुलग शांत रहे। इतना ही कहा, "कोई बात नहीं। नया कपड़ा लेकर बनाने के लिए दे दो।" एक मजदूर व्यक्ति के प्रति उनका दृष्टिकोण समझा जा सकता है।

किन्तु यह लापरवाही सब जगह नहीं थी। कोई भी आगन्तुक उनके सामने कोट या कमीज के बटन कायदे से बन्द करके ही आता। कोट या पैंट की जेब में हाथ डाले नहीं आ सकता था। चौधरी साब इसे बड़ों के प्रति अनादर समझते थे। वे यह भी पसंद नहीं करते थे कि उनसे कोई मिलने आये तो मुंह में कुछ चबाता रहे। बीड़ी सिगरेट उनकी उपस्थिति में पीने की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वे आचरण को बहुत महत्व देते थे।

एक बार वे अपने रिश्तेदार को चिट्ठी लिखाने लगे-मैं पत्नी के साथ आ रहा हूं।...तभी रुक गये। पी. ए. को कहा, "ऐसा नहीं, यह लिखो-अजित की मां के साथ आ रहा हूं। 'पत्नी' लिखना तुम जैसे जवान व्यक्ति को ठीक लगता है।" भारतीय संस्कृति के अनुसार रहने में, आचरण करने में मानों उन्हों गर्व होता था।

उस दिन सायंकाल के 9 बजने वाले थे। वे दफ्तर से घर के लिए चलने ही वाले थे। तभी दूसरे दरवाजे से उनके विश्वसनीय विधायक आकर उनसे गुप्त-गू करने लगे। निजी सचिव को इस उपस्थिति का ज्ञान नहीं था। तभी उनके घर से फोन आया कि चौधरी साब को खाने के लिए ले आओ, ठंडा हो रहा है। पी. ए. सूचित करने अन्दर आ गया तो देखा कि वे विधायक से धीरे धीरे बातें कर रहे हैं। शायद पार्टी सम्बन्धी कोई बात थी। इससे पहले कि पी. ए. कुछ कहें, चौधरी साब ने हाथ से संकेत कर उन्हें बाहर जाने को कहा। पी. ए. वापस लौटकर अपनी कुर्सी पर बैठ गये। सात-आठ मिनट बाद ही अन्दर से घंटी बजी। पी. ए. ने स्टेनों को अन्दर भेज दिया। उसे देखते ही चौधरी साब ने कहा, "तिलकराम (पी. ए.) को अन्दर भेजो।"

तिलकराम का ख्याल था कि असमय अन्दर जाने के कारण ही उसे चौधरी साब ने बुलाया है। अन्दर पहुंचने पर तिलकराम ने जब सुना, तो कानों पर विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने कहा, "तिलकराम, मैंने तुम्हें हाथ के इशारे से वापस भेजा था। क्या तुमने इसे अपमान समझा?"

"नहीं सर, उस समय मुझे अन्दर नहीं आना चाहिए था। लेकिन उन विधायक का मुझे ध्यान नहीं था।"

वे क्षण भर चुप रह कर खड़े रहे। टोपी सिर पर रखी। साईड रूम से घड़ी उठाई। तिलकराम टेबल के पास खड़े उनके जाने की प्रतीक्षा में थे। चौधरी साब टेबल के पास पुनः रुके, छड़ी को बायें हाथ में पकड़ा और दाहिने हाथ की तर्जनी पी. ए. की ओर कर पूछा, "तिलकराम, क्या तुमने मुझे माफ कर दिया?"

"हां, सर!" पी. ए. के मुंह से निकल गया। उसे इस तरह के प्रश्न की आशा नहीं थी। तब चौधरी साब ने कमरा छोड़ दिया। गाड़ी में बैठने से पहले वे पुनः तिलकराम को देखकर बच्चे की तरह उन्मुक्त अट्टास कर उठे। पी. ए. संकोच से दोहरा हो गया। वह एक महामानव की उच्चतर विशेषता थी। संतो ने कहा है कि अप्रिय बोलकर किसी की क्षति नहीं करनी चाहिए। जो सबको गले लगाये, वही सच्चा संत है, योगी है।

डाक निपटाने का कार्य भी चौधरी साब का निराला ही था। साधारणतया यह कार्य मंत्रियों के लिए कुछ भी नहीं। निजी स्टाफ द्वारा संबंधित विभाग को मार्क कर दिया जाता है और कुछ आवश्यक कागजों को छोड़कर प्रायवेट सेक्रेटरी अपने हस्ताक्षर उन पर करके भेज देता है। मंत्री

के लिए बहुत कम कागज बच जाते हैं। वे पत्र मंत्री के सामने रखे जाते हैं जो महत्वपूर्ण व्यक्तियों के होते हैं या अति आवश्यक होते हैं। किन्तु चौधरी साब का तरीका बहुत कठिन था। सबसे अलग। वे रोज डाक नहीं देखते थे और न यह चाहते थे कि निजी स्टाफ उन्हें मार्क करे, सिवाय उन पत्रों के जिनके विलम्ब होने से उलझन बढ सकती थी। इससे डाक तीन चार दिन या कभी कभी एक सप्ताह तक यों ही पड़ी रहती। तभी वे एक दिन घोषणा करते, "कल दिन भर सिर्फ डाक का निपटान करेंगे।"

स्टाफ इसका अर्थ समझता था। वह दिन 'डाक-डे' कहलाता। सब चौकस और चुस्त। पहले एक पी. ए. को बुलाया जाता, उससे जबाब लिखाये जाते। तब उसके पास 15-20 पत्र हो जाते तो दूसरे को बुलाया जाता। तीसरा, उन अधिकारियों के बीच चक्कर काटता, जिनसे सम्बन्धित पत्र आते थे। चौधरी साब उतर देने से पहले यथास्थिति जानना चाहते थे। चौथा, 'डिस्पेच रजिस्टर' के पन्ने उलटने-पलटने में लगा जाता यह देखने के लिए कि इससे पूर्व इस सम्बन्ध में पत्र कब आया था और उसे कौन से दिन किस विभाग को भेजा गया था। इसीलिए तो निजी स्टाफ चौधरी साब के साथ कार्य करने से घबराता था। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को चौधरी साब के सामने आना पड़ता था। चपरासी भी इधर-उधर दौड़ते देखे जाते। उनके हाथों में वे पत्र होते जिन पर आवश्यक या अति आवश्यक अथवा तुरन्त की स्लीप लगी रहती। ये उन विभागों को दी जाती जिनसे चौधरी साब ने टेलीफोन पर बात कर ली थी। वास्तविक रूप से 'डाक-डे' हलचल भरा दिन होता था। यह तब तक चलता, जब तक कि डाक का पैड खाली नहीं हो जाता। उस समय बाहर से आये व्यक्तियों की भीड़ लगी रहती। जब उन्हें पता लगता कि आज चौधरी साब बैठे हैं और कहीं बाहर नहीं जाने वाले हैं तो सुबह से ही भीड़ लग जाती। सभी जल्दी आकर पूछते, "मेरा नम्बर कब आयेगा?"

पी. ए. उत्तर देता, "मिलने का समय निर्धारित है, तभी आइयेगा।" और इस भीड़ का अन्त नहीं था। उस समय निजी स्टाफ की व्यस्तता बढ जाती।

चिट्ठी का जबाब देने का भार निजी स्टाफ पर नहीं छोड़ा जाता। स्टाफ के लोग सिर्फ पावति भेज सकते थे। उत्तर में पूरा विवरण होता ताकि पार्टी को संतुष्टि हो सके। हां तीन प्रकार के कागजों पर वे कोई ध्यान नहीं देते थे। (1) जो पेन्सिल से लिखा गया हो (2) किसी मंत्री पर जातिवाद का आक्षेप गया गया हो (3) जहां पत्र की प्रतियां अन्य किसी को भी भेजी गई हो। यह प्रेषक को मापने का उनका अपना मापदण्ड था। जो स्याही में ही नहीं लिख सकता, उसे लिखने के कायदे की जानकारी नहीं। अन्य दो मैं उनका मानना था कि उक्त को मंत्री पर विश्वास नहीं है। यह आवश्यक नहीं कि उनके पास उनके विभाग सम्बन्धी पत्र ही आते थे। जब वे वन एवं स्वायत शासन मंत्री थे तो उनके गृहमंत्री और राजस्वमंत्री के पते से भी पत्र आते थे। जबकि इनको बहुत पहले छोड़ चुके थे।

जनता की इस डाक में औमतौर पर भूमि-विवाद, चकबन्दी में अनियमितता, या पुलिस द्वारा परेशान की घटना होती। ये सभी चिठियां चौधरी साब स्वयं पहले पढते और तब सम्बन्धित विभाग को भेज देते। उनका विचार था कि निजी स्टाफ द्वारा प्रभावशाली मार्किंग की बजाय मंत्री के हस्ताक्षर ही अधिक वजन रखते हैं। ऐसी चिट्ठियों की प्रत्येक लाईन दूसरे विभाग के सचिव द्वारा पढी जाती थी। कई ऐसे भी अवसर आये जब सम्बन्धित विभाग के सचिव स्वयं चलकर निजी स्टाफ से यह पूछने आते कि उक्त चिट्ठी में लिखी गई पहली चिट्ठी उन्हें कब भेजी गई थी। तब निजी स्टाफ को आश्चर्य होता कि इतना बड़ा अधिकारी अपठित हस्तलिखी में लिखी चिट्ठी को बहुत ध्यान से पढ रहा है। उदाहरण के लिये, चौधरी साब इतना ही लिखते, 'सचिव, सिंचाई विभाग' और नीचे अपने हस्ताक्षर कर तारीख लिख देते। चौधरी साब का डाक निपटाने का यह तरीका बहुत फलदायक रहा।

एकबार डाक में एक पोस्टकार्ड मिला। कुछ ही पंक्तियां लिखी हुई थी। एक पुलिस सिपाई

की पत्नी ने लिखा था कानपुर से कि बड़े पुलिस अधिकारी उसके पीछे पड़े हुए थे। चौधरी साब का चेहरा तमतमा उठा। उन्होंने तुरन्त डी. आई. जी. पुलिस से फोन पर सम्पर्क कर कहा, "पोस्ट कार्ड लिखने वाली का यह पता है...महिला का बयान लेकर परिणाम मुझे फोन द्वारा ही सूचित करें।" जांच की, तो घटना सही पाई गई थी। सम्बन्धित अधिकारी को सजा भोगनी ही थी।

15.

फाईल निपटाने का कार्य भी उनका अलग था। वह रोज फाइलों का निपटान नहीं कर पाते थे। मिटिंग आदि में खूब व्यस्त रहते। उनका यह नजरिया था कि समस्याओं को मूल रूप में समझने के लिए आवश्यक है कि आमजन के करीब रहकर उससे जुड़ा जाये। फिर इस सम्बन्ध में जिला अधिकारी से लेकर सचिव तक विचार विमर्श कर समस्या का हल निकाला जाये। इस काम में समय बहुत खर्च होता। तब चिट्ठियों की तरह फाइलों का भी ढेर लग जाता। उनकी कुर्सी के पास रखी रैक जब फाइलों से ढंक जाती तो वे एक दिन बैठते। तब एक-एक फाइल को पढकर उसे निपटाते और गये रात तक वे सभी फाइलें फर्श पर पड़ी मिलती। जब रैक खाली हो जाती तो वे कलम को मेज पर रखते और गर्दन सीधी करके बैठते। कभी कभी वे बैठे बैठे अपने दोनों हाथों को मिलाकर ऊपर सीधा करते-खींचते रहते। तब मानों उन्हें कुछ राहत मिलती। उनकी लिखी गई टिप्पणी या आदेश साधरण तथा लम्बे होते जो उनकी साफ सुथरी और सुन्दर हस्तलिपि में होती। जब वे फाइल देखते तो उन्हें कोई हस्तक्षेप पसन्द नहीं था। किसी को मिलने की इजाजत नहीं होती। वही अधिकारी अन्दर आ सकता था जिसे वे फाइल सम्बन्धी कार्य के लिए अन्दर बुलाते। एक बार एक मंत्री का फोन आया, "चौधरी साब क्या हो रहा है? मिलने आ जाऊं?"

उन्होंने तुरन्त उतर दिया, "अभी नहीं भाई, अब तो मैं फाइल पीट रहा हूं, जिसकी तनख्वाह सरकार देती है।" यदि कोई और नेता होता तो आराम से बुलाकर गप-शप कर लेते। फाइलों का अम्बार लगने के बावजूद वे यथा प्रस्तावित या सचिव की टिप्पणी के आगे 'जी-हां' लिखकर टालते नहीं थे। बल्कि आफिस और सचिव दोनों के नोट ध्यान से पढते और फिर अपना आदेश देते। उनका आदेश कई बार सचिव द्वारा सुझायी सलाह से भिन्न होता। एक उदाहरण है

सन् 1965 में भयंकर सूखा था। झांसी के सैनिक फार्म से चारा खरीदने का प्रयास किया जा रहा था। सैनिक फार्म की शर्तों का अध्ययन करने में और पत्र व्यवहार करके फाईनल स्थिति तक पहुंचने में समय लग गया। तब फाइल चौधरी साब के पास पहुंची। तब तक यू. प. में खूब वर्षा हो चुकी थी। रबी की फसल अच्छी होने की संभावना बन गई। उन्होंने देखा कि सैनिक फार्म की दरें काफी ऊंची थी। यदि और कोई मंत्री होता तो हस्ताक्षर कर देता। चौधरी साब ने समझते देर नहीं लगाई कि इससे राज्य सरकार को लाखों रुपये का घाटा होगा। उन्होंने आदेश दिया, "अब कहीं से भी चारा मंगाने की आवश्यकता नहीं है।"

सचिवालय में भारी भीड़ चौधरी साब के पास आती रहती। सब मंत्रियों से कहीं अधिक। किन्तु फिर भी आने वाले को, चौधरी साब के पास आने से पहले सोचना पड़ता था। आमतौर पर सचिवालय में आने वाले लोगों की भीड़ निम्न प्रकार होती-

1. शिक्षित लोगों का समूह, जो सार्वजनिक सुविधाओं जैसे स्कूल, अस्पताल, सिंचाई, सड़क आदि के लिए आते हैं। जिला स्तर पर इनकी सुनवाई नहीं होती या जिला-अधिकारियों की सीमा से बाहर का काम होता है।

2. वे व्यक्ति जो कोई एजेंसी, परमिट, कोटा आदि लेने के लिए सिफारिश करवाने आते

हैं।

3. वे चालाक व्यक्ति जो यह जानते हैं कि उनकी मांग नाजायज है, नियमों के विरुद्ध है। फिर भी मंत्री से करवाने हेतु आते हैं। उनका तर्क होता है कि यदि नियमानुसार होता तो हम यहां चक्कर ही क्यों लगाते? हम इसलिए आते हैं ताकि इनकी सिफारिश से काम हो जाये। हमें आर्थिक फायदा मिल जाये।

4. गांवों के अनपढ और शहरों के गरीब श्रेणी के लोग जिनके विवाद चल रहे हों, या उनके रिश्तेदार की नौकरी लगवानी होती है। ये साधारणतया मंत्री के जिले के लोग होते हैं। उनकी समस्याएं चाहे किसी भी विभाग से सम्बन्धित हो, लेकिन वे अपने 'नेता' के पास ही सारी समस्याओं का हल खोजने आते हैं।

5. कुछ एजेंट किस्म के होते हैं जो सचिवालय के इर्द-गिर्द चक्कर लगाते रहते हैं और आने वालों से काम कराने के एवज में पैसा वसूलते हैं।

चौधरी साब के पास उपरोक्त वर्गों में से सिर्फ 1 और 4 श्रेणी के लोग ही आते थे। 2, 3, 5 श्रेणी में आने वाले उनके समीप भी आने की हिम्मत नहीं कर पाते थे। उन्हें चौधरी साब के स्वभाव का अनुभव था। उनसे मिलने का भी निश्चित समय था। घर पर नाश्ता करने के बाद, सुब 8 से 9 बजे तक का समय था। सचिवालय में अधिकारियों का मिलने का समय 4 से 5 तथा विधायकों एवं अन्य महत्वपूर्ण लोगों का मिलने का समय था-5 से 6 बजे तक। आम जनता के लोग 6 बजे बाद उन्हें मिल सकते थे। बाकी समय वे दफ्तर का कार्य निपटाते।

ऐसे अवसर भी आते थे जब कार्यालय समय में उनके करीबी विधायक उने मिलने की ताक में रहते। किन्तु चौधरी साब स्पष्ट इन्कार कर देते-''विजिट समय में मिलो श्रीमानजी!'' कई विधायकों को यह सख्ती खलती। वे बतियाते-''चौधरी साब का यह रवैया ठीक नहीं है। उनकी आदत बदलने को कहो।''

यह बात किसी ने उनके कानों में डाल दी। उन्होंने स्पष्टता से उत्तर दिया, ''मुझे कभी मुख्यमंत्री नहीं बनना है। कार्यालय समय में मैं गप्पें हांककर जनता के साथ धोखा नहीं करूंगा।''

उस दिन तो एक दिलचस्प घटना घट गई। उनके अत्यन्त निकट विधायक सचिवालय में उनके चेम्बर में घुस गये। चौधरी साब फाइल पढने में व्यस्त थे और पी. ए. तिलकराम को लिखाने के लिए बैठा रखा था। जब नजर उठाई, सामने विधायक को बैठे पाया। पूछा, ''इस समय कैसे?''

दूसरे ही क्षण तत्काल तिलकराम से पूछा, ''ये अन्दर कैसे आ गये?'' तिलकराम ने उत्तर देने की बजाय विधायक को आंखों ही आंखों में पूछा, ''आप किसकी इजाजत से आये?''

चौधरी साब ताड़ गये कि किसी से इजाजत नहीं ली है। तुरन्त कहा, ''आप बाहर जाइये।''

विधायक की तो जैसे पैरों तले जमीन खिसक गई। नम्रता से आग्रह किया, ''कृपया एक मिनट मेरी बात सुन लें। अन्दर तो आ ही गया हूं।'' चौधरी साब अपने बनाये नियम को कैसे तोड़ दें? विधायक से भी यह अपेक्षा नहीं करते थे कि वे ही नियम तोड़ेंगे। उन्होंने पुनः कमरा छोड़ने का आग्रह किया। विधायक को जाने के सिवाय और क्या सूझता।

निश्चित समय के बहुत पाबन्द थे। इसके लिए अनुशासन के पक्षधर थे। यह क्या कम आश्चर्यजनक है कि ऐसा व्यक्ति मुख्यमंत्री और प्रधानमंत्री बन गया। और यह सबसे बड़ा झूठ है कि ऐसे नेता के लिए विरोधियों ने आरोप लगाया कि चौधरी साब कुर्सी पाने के लिए कुछ भी करने को तत्पर रहते। पंडित नेहरू से लेकर अन्य प्रधानमंत्रियों ने भी उन लोगों को साथ रखा, जिन्हें वस्तुतः पसन्द नहीं करते थे। यह चौधरी साब का ही साहस था जो 1980 को लोकसभा चुनाव में, आम सभाओं में ऐलान करते थे कि ऐसे व्यक्ति को वोट न दें, जो भ्रष्ट हो। चाहे वह मेरी पार्टी का ही क्यों न हो।

एक बार एक जिलाधीश चौधरी साब से मिलने की इच्छे से आये। उनका मिलने का समय 4 से 5 बजे तक का था। जिलाधीश ने निजी सचिव के सम्मुख मजबूरी जताई, "आवश्यक कार्य के कारण मुझे तो 3 बजे वापस जाना है। कृपया चौधरी साब को मेरी मजबूरी बतायें।"

तिलकराम शर्मा ने चौधरी साब को चेम्बर में इस सम्बन्ध में सूचना दी। चौधरी साब ने कहा, "यह मिलने का समय तो नहीं। उनसे कहो, 4 बजे आयें।"

"लेकिन उन्हें तो तीन बजे की ट्रेन से वापस जाना है।"

"तब उन्हें सुबह आना चाहिए था।"

"लेकिन वे तो लखनऊ साढे 10 बजे पहुंचे हैं।"

"तब उन्हें रेलवे स्टेशन से तुम्हें फोन करके समय लेना चाहिए था।"

तिलकराम इस पर चुप रहे। चौधरी साब ने कहा, "खैर, उन्हें अन्दर भेज दो।"

इस उदाहरण से क्या ध्वनि निकलती है किसी महत्वपूर्ण अधिकारी को समय से अतिरिक्त मिलना है तो जितन संभव हो, वह सूचित करे और अपनी व्यस्तता का औचित्य सिद्ध करे। तभी उसे अनुमति मिलेगी।

ऐसा नियम चौधरी साब दूसरों के लिए नहीं, स्वयं के लिए भी निश्चित कर रखा था। जब भी किसी सचिव या विभागाध्यक्ष से बात करनी होती तो वे समय तैय कर लेते। उदाहरण के लिए, वन सचिव 11.30 बजे, पी. डब्ल्यू. डी. सचिव 12.15 बजे, मुख्य सिंचाई इंजीनियर 3.40 बजे, आदि आदि। यह एक दिलचस्प तथ्य है कि वे सचिव जो उनके विभाग के नहीं होते, प्रायवेट सेक्रेटरी के कमरे में निर्धारित समय से ठीक एक या डेढ मिनट पूर्व पहुंच जाते। वे आते ही निजी सचिव से बुलाने का कारण पूछते। कोई सम्बन्धित कागजात होता तो उसे देखते। विभागीय सचिव ही उपस्थित होते, न कि नम्बर दो। कई बार ऐसे भी अवसर आये जब उनके विभागीय मंत्री ने ठीक उसी समय सचिव को याद कर लिया जिस समय चौधरी साब के पास जाना था। वे कहते, "सर, मुझे चौधरी साब ने याद किया है। आपसे मैं आकर आदेश लूंगा।" और वे दोड़ पड़ते चौधरी साब से मिलने। वरिष्ठतम अधिकारियों द्वारा अपने वरिष्ठतम मंत्री के प्रति यह उत्कृष्ट सम्मान का उदाहरण है।

जब वे बिजली मंत्री थे, तो एक इंजीनियर को निलंबित किया गया था। इंजीनियर ने बडौत के लाला श्रीराम खत्री से बहाल करवाने की सिफारिश करवाई। लालाजी लखनऊ गये। चौधरी साब ने उनके सामने ही फाईल मंगवा कर देखी। तब वे माथा पकड़ कर बैठ गये। "क्या हुआ चौधरी साब?" लालाजी ने पूछा।

"इस फाइल से तो बदबू आती है लालाजी!" चौधरी साब का उत्तर था, जिसका अर्थ वे समझ गये। लालाजी उठकर आ गये। किन्तु बिजली मंत्री से इस्तीफा देने के बाद वह इंजीनियर बहाल ही नहीं हो गया था, पदोन्नति भी हुई।

उन्हीं दिनों एक उद्योगपति भी उनसे मिलने आया। लाइसेंस लेने की बात थी। सेठजी डायरी में पूरा हिसाब किताब करके लाये थे। कहा, "चौधरी साब, लाइसेंस मिलने पर आपका कमीशन सवा 6 प्रतिशत से एक करोड़ से ऊपर बनेगा।" यह वाक्य सुनते समय चरणसिंह वही फाइल देख रहे थे। ज्यों ही उद्योगपति की बात सुनी, उन्होंने तिरछी नजर से उसकी ओर देखा। वह सकपका गया। तब फाइल को बांधकर उन्होंने फर्श पर पटक दी। आंखों से ही उद्योगपति को बाहर जाने का संकेत दिया। हड़बड़ाकर अपनी अटैची थामें बाहर निकल गया।

1965 में अराजपत्रित कर्मचारियों की 62 दिन की लम्बी हड़ताल चली। सुचेता कृपलानी ने चौधरी साब से अनुरोध किया, कुछ ले लिवा कर ही ये लोग मानेंगे। आप ही बताइये, इन्हें क्या गें?"

इस पर चौधरी साब ने विभिन्न राज्यों और वित मंत्रालय से आंकड़े एकत्रित किये। तुलनात्मक अध्ययन किया। दशमलव तक आंकड़ों की तुलना की। सारा विवरण चौधरी साब ने वित्त मंत्रालय

को न भेजकर अपने निजी स्टाफ को सौंपा। अभिप्राय था कि अब यह निश्चित करें कि क्या देना है?

निजी स्टाफ को लगा दिया गया। दिन भर माथा खपाने के बाद रात को तिलकराम शर्मा ने चौधरी साब से कहने का साहस किया-

"चौधरी साब, पांच-सात या दस रुपये जो भी आप महंगाई भता देना चाहते हैं, मुख्यमंत्री से सिफारिश कर दीजिए। दक्षिण भारत के कर्मचारियों से यहां की क्या तुलना? वे बिना जर्सी रह सकते हैं, चप्पलों से काम चला सकते हैं जबकि यू. पी. के कर्मचारियों को कोट, जूते, जर्सी, कम्बल आदि चाहिए।"

चौधरी साब ने इसे स्वीकार करते हुए कहा, "लेकिन वे लोग अधिक ईमानदार और कठिन परिश्रमी भी तो हैं। तुम्हारे आदमी ऐसे नहीं हैं।"

तिलकराम क्या उत्तर दें? चुपचाप सारे कागजात एकत्रित किये और अपने कमरे में आ गए। चौधरी साब तो बाल की खाल निकालने तक जुटे रहने वाले थे।

उपरोक्त कुछ उदाहरण इसलिए दिये गए हैं कि यह एक अजीब विडम्बना थी कि चौधरी चरणसिंह जनता और सरकार के केन्द्र बिन्दू थे। सता के ईर्द-गिर्द मंडराने वाली चंडाल चौकड़ी उन्हें एक कोने में लगाने में सफल हो गई थी, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर उन्हीं से मार्ग दर्शन भी मांगा जाता था। इस सबके बावजूद, यह अलबेला नेता सता के लिए जरा भी दौड़-धूप नहीं करता था। अपने समीकरण बैठाने की कभी चिंता नहीं की। तब, जो राजनीति का विकृत रूप था, उसमें चौधरी साब कहीं दिखाई नहीं दे रहे थे। राजनीति का मतलब ही तब तक यह निकल चुका था कि जो ज्यादा मक्कार, झूठा और भ्रष्ट है वही सफल नेता है। फिर चौधरी साब के लिए सफलता कहां थी? फिर भी, आने वाले दिन चौधरी साब के लिए निर्णायक होने वाले थे।

तृतीय सोपान

टेढ़े-मेढ़े रास्तों वाली मंजिल ...

फरवरी 1967 के आम चुनाव हो रहे थे। कांग्रेस को विपक्ष से भारी चुनौति मिल रही थी। उन्हीं दिनों चौधरी साब की एक इन्टरव्यू प्रकाशित हुई थी। पत्रकार का प्रश्न था-"आपकी सबसे बड़ी असफलता क्या है?"

सरकारी मशीनरी से भ्रष्टाचार नहीं मिटा सके।"

"लेकिन, चौधरी साब आप तो 20 वर्ष से प्रयत्न कर रहे हैं, फिर भी सफलता क्यों नहीं मिली?"

"ऊंचे मंत्रियों और अधिकारियों के कारण। उनके भ्रष्टाचार का रूप बदल गया है। कहीं कम भी हुआ है परन्तु समाप्त नहीं। घोड़ा तो सवार को पहचान कर उसके संकेत पर ही चलेगा।"

"लेकिन मंत्री और मोटी तनख्वाह वाले अफसर भ्रष्ट क्यों बनते हैं?"

"माया जोड़ने की होड़ है। नैतिकता और संस्कार समाप्त हो रहे हैं। पश्चिम की अंधी नकल में सब कुछ गंवा बैठे हैं। जड़ से कटकर भला कोई जीवित रह सकेगा?"

"क्या पूंजीवादी परम्परा में भ्रष्टाचार मिट सकता है?"

"पूंजीवाद जनजन में असमानता और विषमता अवश्य बढाता है, लेकिन सभी अंगुलियां बराबर कब होती हैं?"

"साम्यवादी देशों में असमानता कम हुई है। व्यक्तिगत सम्पति ही सारे भ्रष्टाचार की जड़ है।" पत्रकार की राय थी।

"साम्यवादी पद्धति में व्यक्तिगत स्वतंत्रता नहीं रहती है। उससे व्यक्ति का सम्यक् विकास कुंठित हो जाता है। महात्मा गांधी के ट्रस्टीशिप में व्यक्ति प्रयत्नों के लिए पूरा स्वतंत्र रहेगा। एक निर्धारित आय के ऊपर उसकी आमदनी समाज की धरोहर होगी। इस तरह व्यक्ति समूह के कल्याण को सोचने और करने पर मजबूर होगा। अब तो साम्यवादी देश भी व्यक्ति के निजी प्रयत्न और प्रेरणा को अंगीकार कर रहे हैं।"

"आजादी के बीस वर्ष बाद भी अच्छे काम का प्रेरणा स्रोत धन क्यों है, देशभक्ति क्यों नहीं?"

चौधरी साब कुर्सी पर पीठ टिकाकर, मानों लम्बा उत्तर देने को तैयार हो रहे थे।

"गांधीजी और भारतीय संस्कृति का आत्मवत् गर्वभूतेषु का यही **परिप्रेक्ष्य** था। देश इसी भावना से समुन्नत होगा। हमारी नीतियां गलत रही हैं। वे श्रमपूर्वक आर्थिक विकास की नहीं है। व्यक्ति का महत्व कम हो गया है। कृषि उत्पादन का अपेक्षित विकास नहीं हुआ। इससे गरीबी ठीक उसी जगह रही, जहां वह आजादी के दिन थी। हम एक निम्नतम वेतनमान या पारिश्रमिक भी निर्धारित नहीं कर सके हैं। आर्थिक असमानता से देश में लूट-खसोट मच गई है। उसके मूल का उच्छेदन करना पड़ेगा। उच्च नेतागण निष्ठावान और सक्रिय रहे तो जमींदारी उन्मूलन की तरह पूंजीवाद में भी भ्रष्टाचार रुक सकता है। प्रत्येक राज्य कर्मचारी का तो यह धर्म है कि अपने सुख, आराम और प्राणों का बलिदान करके भी राज्य और देश की सेवा करें। उनके अयोग्य अथवा

भ्रष्टाचारी होने पर प्रजा बहुत पीड़ित होती है। देश का भविष्य कर्मचारियों और राजनेताओं पर ही निर्भर है।"

एक दीर्घ निःश्वास लेकर कमरे की खिड़की से उन्होंने बाहर झांका। बोले, "आज नहीं तो कल हमें आर्थिक तथा सामाजिक नीतियों को हिन्दुस्तान की प्रतिभा के अनुकूल मोड़ना ही पड़ेगा। पंडित नेहरू समाजवादी ढंग की चर्चा करते थे। वे गांव की मिट्टी में नहीं सने थे। पश्चिम और रूस के आधुनिकतम उद्योगों के चकाचौंध में पूंजीपतियों के चंगुल में वे भी फंसे। कृषि उत्पादन पर उन्होंने अपेक्षित ध्यान नहीं दिया। आज की स्थिति की बात मत कीजिए। मुद्रा स्फिर्ति के अतिरिक्त हमारे पास है ही क्या? विकास आज शहरों की चमक-दमक में ही दिखाई दे रहा है। 80 प्रतिशत ग्रामवासी गरीबी की मार से कुचले जा रहे हैं।...

आज गद्दी को बनाये रखने के लिए चुनाव में पूंजीपतियों से खूब धन लिया जाता है। इससे पूंजीपति का प्रभाव सरकार पर रहता है। पूंजी परक व्यवस्था और चुनाव की अमर्यादित परम्परा से ही देश में अराजक तत्व पनप आये हैं। चुनाव में सफलता के वे आवश्यक अंग हैं। देश की शांति व्यवस्था क्रमशः शिथिलतर होती जा रही है। चीन और पाकिस्तान के आक्रमण के समय देश में जो एकता का स्वर फूटा, वह अब समाप्त हो गया है। अब तो एक ही घुड़दौड़ है-कैसे कुर्सी सुरक्षित रहे। कुर्सी का लालच स्वयं के जीवन काल के लिए ही होता तो गनिमत थी। उसे तो चक्रवर्ती सम्राटों की तरह प्रजातंत्र के दायरे में ही वंशगत बनाने की चेष्टा की जा रही है। एक नहीं तो दूसरा, होगा वंश का ही। इन कारणों से ही आज की सता की राजनीति भ्रष्टाचार का पयार्य बन कर रह गई है। आज पुरानी कांग्रेस कितने नामों से बंटी है। जनता जनार्दन के उत्थान में सम्पूर्ण समर्पित राष्ट्रपिता बापू वाली कांग्रेस रही कहां? आज तो निष्ठावान और दूरदर्शी देशभक्ति भी प्रश्नचिन्ह बनती जा रही है। गांधीजी ने कितना सच कहा था कि आजादी के बाद कांग्रेस को भंग कर उसे लोक सेवा की शक्तिशाली संस्था बनाई जाये। सता के मोह ने गांधीजी के नाम पर वोट खरीदने के लिए, यह नहीं होने दिया। उल्टे सता के मोह ने यह स्थिति लादी है कि धर्म, ईमान, सिद्धान्त, स्वदेश की सुरक्षा, मानवता सब बिकने लगे हैं। पुराने नैतिक मूल्यों का सर्वथा लोप हो गया है। देश तेजी से रसातल की ओर सरकता जा रहा है।"

दबी हुई पीड़ा मानों भयंकर विस्फोट के साथ फूट पड़ी। कांग्रेस में खलबली मच गई। बाद में जब मजबूरन चौधरी साब को कांग्रेस छोड़नी पड़ी तो यह प्रचार किया गया कि उन्होंने योजनाबद्ध ढंग से कांग्रेस छोड़ी। किन्तु ऐसा था नहीं। पिछले आठ सालों से वे कांग्रेस के शीर्ष नेतृत्व से बराबर संघर्ष करते रहे थे। डा. सम्पूर्णानन्द से लेकर सुचेता कृपलानी तक, सभी मुख्यमंत्री योग्यता में उनसे कम थे लेकिन अभिजात वर्ग का नेतृत्व कर रहे थे। इसी वर्ग ने मानों बौद्धिकता और सता का एकमात्र ठेका ले लिया था। इन लोगों को चौधरी साब की सच्ची बातें बहुत कड़वी लगती थी। सम्पूर्णानन्द जाने के बाद तो एक मात्र उत्तराधिकारी वही थे। दो बार निरन्तर हारने वाले चन्द्रभानु गुप्ता को लेकिन मुख्यमंत्री बनाया गया। कामराज योजना के अन्तर्गत जब गुप्ता को भी जाना पड़ा तो चौधरी साब के बारे में किसी को सन्देह नहीं था। किन्तु मुख्यमंत्री बनी यू. पी. के बाहर की सुचेता कृपलानी।

यह सही है कि कांग्रेस पर से उनका विश्वास उठता जा रहा था। क्योंकि बापू की कांग्रेस की नकेल वस्तुतः सता के सौदागरों को हाथ आ चुकी थी। वे दोनों हाथों से धन इकट्ठा कर रहे थे। चौधरी साब यह सब देख रहे थे। वे कई बार गांधी और पटेल के चित्रों के सामने खड़े हो जाते, बुदबुदाते, "यह देश कहां जायेगा? बदमाश लोग राजनीति पर हावि हो गये हैं।..." तब कई बार उनकी आंखों से आंसु टपक पड़ते। किन्तु कांग्रेस छोड़ने की बात कहीं दूर तक नहीं थी।

उपरोक्त इंटरव्यू में स्पष्ट रूप से बोलने का कारण यही समझा जा सकता है कि कांग्रेस दुर्गति से वे दुःखी थे। इसे सुधारने के लिए ही वे मानों ज्ञान का 'कोरड़ा' मार रहे थे। पेट की बीमारी

के कारण चुनाव प्रचार के समय वे खाट पकड़ चुके थे। ऐसी अवस्था में पत्रकार के पहुंचने पर वे और क्या कहते? कबीर का अक्खड़पन यही तो था।

यदि कांग्रेस छोड़ने की जरा भी मंशा होती तो वे अपने व्यक्तियों को टिकट दिलाने का प्रयत्न करते। यदि टिकट दिलाने में सफलता नहीं मिलती तो वे अपने व्यक्तियों को चुपचाप निर्दलीय खड़ा कर सक्ते थे। यह इस से भी प्रमाणित होता है कि जब बाद में उन्होंने कांग्रेस छोड़ी तो मात्र 17 विधायक उनके साथ आये। जहां तक उनकी लोकप्रियता का सवाल है, 1969 के मध्यावधि चुनाव इसके गवाह हैं। उस समय अकेले चौधरी साब को 98 सीटें मिली थीं और अधिकांश सीटों पर नं. दो पर उनके ही उम्मीदवार थे। इससे प्रमाणित होता है कि चौधरी साब कांग्रेस के नेतृत्व से दु:खी तो थे लेकिन कांग्रेस छोड़ने की बात तो सपने में भी नहीं थी।

अन्य बातें भी इसकी साक्षी हैं। 1967 के चुनाव में कांग्रेस को 198 सीटें मिली थी और विपक्ष को 227 सीटें मिली थी। यहां यह दिलचस्प होगा कि चन्द्रभानु गुप्ता चाहते थे कि विरोधी दलों को पहले सरकार बनाने का अवसर दिया जाये। कांग्रेस का बहुमत जुटाने में उन्हें संदेह था। लेकिन चौधरी साब ने इसका विरोध किया। उनका तर्क था कि कांग्रेस अकेली सबसे बड़ी पार्टी है, सरकार उसे ही बनानी है। वही स्थिरता ला सकती है।

और जब कांग्रेस विधायक दल के नेता पद के लिए गुप्ता आगे आये तो अबकी बार चौधरी साब चुप नहीं बैठे। उन्होंने स्वयं की उम्मीदवारी घोषित कर दी। यहां यह लिखना भी अप्रांसगिक नहीं होगा कि विपक्षी पार्टियों ने संयुक्त रूप से उनसे बार बार आगृह किया था कि वे उनके नेता बन जायें, किन्तु चौधरी साब ने स्पष्ट इन्कार कर दिया था।

चुनाव-प्रचार के दौरान, जैसा कि लिखा जा चुका है, वे सख्त बीमार थे। वे कहीं नहीं जा सके। तब उन्होंने एक पत्र लिखा था जो उनकी मन:स्थिति को स्पष्ट करता है-

चरणसिंह — लखनऊ
वन मंत्री — 15 फरवरी 1967

प्रिय धर्मवीर सिंह,

श्री रामचरणजी आपका तथा दूसरे सज्जनों का यह सन्देश लेकर मेरे पास आये हैं कि मैं आपके चुनाव क्षेत्र में आकर कांग्रेस के उम्मीदवारों को कामयाब बनाने के लिए दो-चार बातें किसी सार्वजनिक सभा में कहूं। मैं तो चाहता था कि साथ के ही क्षेत्रों में नहीं, बल्कि दूसरे क्षेत्रों में भी जाऊ। परन्तु मेरा स्वास्थ्य इजाजत नहीं देता। मैं दो महिने से बराबर बीमार चल रहा हूं। बीच बीच में पूर्ण स्वस्थ हुए बिना ही मैंने काम करना प्रारम्भ कर दिया, इसलिए तीन बार रिलेप्स (रोग का पुन: आक्रमण) हो चुका है। इससे मैं बहुत कमजोर हो गया हूं। मैं 16 जनवरी के बाद अपने क्षेत्र में भी नहीं जा सका हूं। और चूंकि मुझको यहां आराम नहीं मिल पाता है, मैं आज ही लखनऊ वापस जा रहा हूं।

मैं चाहता हूं कि आप सब लोग श्री विचित्रनारायण जी शर्मा और श्रीमती कमला चौधरी को वोट दें। समय के साथ कांग्रेस में कुछ खराबियां आ गई हैं-इसमें कोई शक नहीं, परन्तु आज किसी भी राजनैतिक पार्टी में मुल्क को सुधारने की शक्ति नहीं है। वर्तमान असंतोष को देखकर मुझे आशा है कि भविष्य में कांग्रेस जरूर अपनी खामियों का सुधार करेगी और फिर पूर्व की भांति जनता की प्रिय संस्था बन जायेगी। अन्य पार्टियों की अपेक्षा उसने देश की बहुत सेवा की है, परन्तु जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, कुछ खामियां उसकी ओर से अवश्य हो चुकी हैं।

श्री धर्मवीरसिंह जी,
मोदीनगर, जिला मेरठ

आपका
चरणसिंह

अस्वस्थता के कारण चौधरी साब कहीं नहीं जा सके। इस अवसर का फायदा उनके विरोधियों ने उठाया और उन्हें ही हराने का षड्यंत्र भी किया। वे सफल नहीं हो सके थे। बाद में ऐसे ही लोगों ने कुप्रचार भी किया कि चौधरी साब जान-बूझकर चुनाव प्रचार में नहीं गये, जिससे कांग्रेस हार गई।

1967 में कांग्रेस पार्टी को पूरे देश में भारी झटका लगा। अनेक राज्यों में उसे बहुमत नहीं मिला। केन्द्र में मोरारजी भाई ने इंदिरा गांधी को चुनौति देते हुए स्वयं को नेता पद के लिए उम्मीदवार घोषित कर दिया। चन्द्रभानु गुप्ता और मोरारजी की गहरी छनती थी। दोनों ही पूंजीपति वर्ग के नुमाइन्दे थे। इधर गुप्ता, यू. पी. के मुख्यमंत्री बनने के सपने संजोये दिल्ली के चक्कर काट रहे थे। इंदिरा गांधी और मोरारजी के बीच गुप्ता ने मध्यस्थता का कार्य किया। यों भी मोरारजी के पास बहुमत नहीं था। मोरारजी मान गये और इंदिरा गांधी निर्विरोध रूप से प्रधानमंत्री बन गई। यह चन्द्रभानु गुप्ता के लिए बहुत फायदेमंद रहा। उन्हें यू. पी. का मुख्यमंत्री बनाने का आश्वासन मिल गया।

यह चौधरी साब को कैसे सहन होता? गुप्ता उस समय सबसे अधिक अलोकप्रिय व्यक्ति थे। वे बार-बार चुनाव हार चुके थे। कामराज योजना के अन्तर्गत हटाया जा चुका था। लेकिन गुप्ता भारतीय राजनीति की उस धारा के प्रतिनिधि थे जो थैलीशाहों की सहायता से सता पर काबिज होना जान चुकी थी। अब चौधरी साब के लिए आवश्यक हो गया कि वे आर-पार की लड़ाई लड़ लें। इसलिए उन्होंने स्वयं को भी उम्मीदवार घोषित कर दिया। तब, आमने सामने मोर्चाबन्दी हो गई थी। अखबारों के सम्पादकीय, चौधरी साब के समर्थन से अटे पड़े थे। आम जनता से बधाई के तार आने लगे। विधायक, चौधरी साब के साथ एकत्रित होने लगे। कांग्रेस के ही नहीं, उस समय सदन के 80 प्रतिशत से भी अधिक विधायक चौधरी साब को मुख्यमंत्री देखना चाहते थे। उनके साथ कई दिनों से अन्याय हो रहा था। अब सबकी सहानुभूति के वे पात्र बन गये थे। इससे गुप्ता को मानों धरती घूमती नजर आई। वे बार बार दिल्ली भागने लगे। तब चौधरी साब को भी दिल्ली बुलाया गया। कांग्रेस की एकता की दुहाई दी गई। यों भी कांग्रेस काफी कमजोर हो गई थी। एकता की दुहाई पर चौधरी साब विचलित हो गये। तब उनका एक ही अनुरोध था कि मंत्रीमंडल साफ छवि का होना चाहिए। कम से कम दो पूर्व मंत्रियों को पुन: मंत्री परिषद में नहीं लिया जावे जो भ्रष्टाचार के लिए कुख्यात थे। उनकी सलाह मान ली गई। तब उन्होंने स्वयं ने ही चन्द्रभानु गुप्ता का नाम नेता पद के लिए प्रस्तावित कर दिया।

कहा जाता है कि इससे पूर्व चौधरी साब ने यह प्रस्ताव भी रखा था कि कांग्रेस में जान फूंकने के लिए आवश्यक है कि युवा नेतृत्व आगे आये। इसलिए गुप्ता और उनमें से दोनों को छोड़कर तीसरा मुख्यमंत्री बनाया जाये। सता का व्यापारी गुप्ता अपनी चौसर इंदिरा गांधी तक बिछा चुका था। उमाशंकर दीक्षित और दिनेश सिंह, जो केन्द्रीय पर्यवेक्षक थे, चौधरी साब को मनाने में सफल हो गये कि एक बार मुख्यमंत्री तो गुप्ता को बन जाने दो, बाकी मंत्रीमंडल जैसा आप चाहेंगे, बनेगा।

किन्तु नेता चुने जाने पर गुप्ता ने तुरन्त रंग बदल लिया था। मंत्रीमंडल की जो सूची तैयार हुई, उसमें चौधरी साब के साथ साथ उन दो बदनाम पूर्व मंत्रियों के नाम भी शामिल थे। सूचि देखकर चौधरी साब चौंक उठे। उन्होंने चन्द्रभानु गुप्ता से मिलकर स्थिति स्पष्ट करनी चाही। गुप्ता का उत्तर मानों चौधरी साब को तमाचा था। कहा गया, ''मंत्रीपरिषद बनाना मुख्यमंत्री के अधिकार क्षेत्र की बात है। इसमें कोई शर्त नहीं होती।''

चौधरी साब को ऐसे व्यवहार की अपेक्षा नहीं थी। उन्होंने मंत्री पद की शपथ नहीं ली। वे दिल्ली में केन्द्रीय पर्यवेक्षकों से भी मिले। इंदिरा गांधी से भी बात की, किन्तु कुछ बन नहीं पा रहा था। अब चौधरी साब क्या करें। एक समझौते के तहत चन्द्रभानु गुप्ता को मुख्यमंत्री बनाया गया था। चौधरी साब ही प्रस्तावक थे। अब गुप्ता मुख्यमंत्री थे और चौधरी साब सड़क पर। उन्हें लगा कि मानों नेतृत्व नें योजना बनाकर उन्हें अपमानित किया है। उनकी मन:स्थिति अत्यंत निराशाजनक

बन गई। इतना बड़ा धोखा?

उस समय के घटनाचक्र का सबसे प्रामाणिक दस्तावेज है, चौधरी साब का वह पत्र, जो उन्होंने दस साल बाद प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को लिखा था। बात दिसम्बर 1976 की है। आपातकाल में श्रीमती गांधी के सितारे बुलन्दी पर थे। विपक्षी नेताओं के विरुद्ध, जो जी में आता, वही बोलती। उसी दौरान दिल्ली में भाषण करते हुए इंदिरा गांधी ने कहा था कि चौधरी चरणसिंह ने कुर्सी के लिए पार्टियां तोड़ी या बनाई। इससे चौधरी साब बहुत क्रुद्ध हुए। उन्हें लगा, बहिनजी किसी भी स्तर तक झूठ बोल सकती हैं। तब उन्होंने एक लम्बा पत्र इंदिरा गांधी को लिखा–

भारतीय लोकदल

चरणसिंह — शिविर: उ. प्र. निवास नई दिल्ली

अध्यक्ष — दिनांक: 8.1.1977

प्रिय इंदिराजी,

यह पत्र मैंने 30 दिसम्बर को लिखा था, परन्तु इसे आपके पास काफी विलम्ब से, आज 8 जनवरी को भेज रहा हूं, क्योंकि यह निश्चि नहीं कि यह पत्र कुछ उपयोगी सिद्ध होगा या नहीं।

एक समाचार रिपोर्ट में आपका यह भाषण छपा है, जो आपने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा संचालित सामाजिक अध्ययन तथा अनुसंधान की राष्ट्रीय परिषद द्वारा आयोजित एक प्रशिक्षण शिविर में 23 दिसम्बर को दिया था। उस रिपोर्ट में निम्न पैराग्राफ थे:-

''कांग्रेस के और विभाजन हुए उनमें से कुछ ''कांग्रेस के मालिकों'' के स्वेच्छाचारी रवैये के कारण हुए। प्राय: प्रत्येक राज्य में दल का एक मालिक था। परन्तु कुछ राज्यों में दल आदर्शवादी कारणों से नहीं बल्कि वैयक्तिक विरोध व प्रतिस्पर्द्धा के कारण बनाये गये। उन्होंने उत्तर प्रदेश में श्री चरणसिंह का उदाहरण दिया, क्योंकि उन्होंने बी. के. डी. (भारतीय क्रांति दल) बहुत ही वैयक्तिक कारण को लेकर इसलिए बनाया ताकि वह उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बन जायें।''

यह बात बिल्कुल भी सही नहीं है। मैं यह महसूस करता हूं कि ऐसा कहकर आपने मेरे प्रति निष्पक्ष व अच्छा व्यवहार नहीं किया। वास्तव में, एक बार पहले भी, एक विदेशी संवाददाता के साथ साक्षात्कार के दौरान (इस समय मेरे पास बिल्कुल निश्चित प्रसंग नहीं है) आपने यह बात कही थी कि पश्चिमी बंगाल के श्री अजय मुखर्जी को मुझे अन्य बातों में अच्छे और सच्चे व्यक्ति होने के बावजूद भी कांग्रेस इसलिए छुड़वानी पड़ी क्योंकि हमको उन लोगों ने काम नहीं करने दिया, जिनके हाथ में उस समय कांग्रेस का नेतृत्व था। यह पता नहीं कि आप अपने ही बयान की किस बात को वास्तव में सही मानती हैं, अत: ऐसी स्थिति में कुछ घटनाओं के केवल जिक्र से ही यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि मैंने कांग्रेस इसीलिए नहीं छोड़ी थी कि मैं मुख्यमंत्री बनना चाहता था बल्कि इसलिए छोड़ी थी कि उस समय मेरी निष्ठा व विश्वास को धक्का पहुंचाया गया था।

उत्तर प्रदेश में 1967 में आम चुनाव में कांग्रेस को केवल 198 सीटें मिली थी, जबकि उसके मुकाबले विरोधी दलों के कुल मिलाकर 227 उम्मीदवार विजयी हुए थे। जब विरोधी दल एक नेता को चुनने के प्रश्न पर एकमत नहीं हो पाये थे तो उन्होंने नेतृत्व का दायित्व संभालने के लिए मुझसे कई बार कहा था। मेरे समर्थन से उस समय विरोधीदल के सदस्यों की संख्या 275 तक पहुंच जाती, परन्तु मैंने उनके प्रस्ताव को मानने से इन्कार कर दिया था और कहा था कि कांग्रेस को मेरी छोड़ने की मेरी बिल्कुल इच्छा नहीं है।

कुछ दिन बाद जब कांग्रेस विधायक दल के नेता का चुनाव करने के लिए बैठक हुई तो मैं भी श्री सी.बी. गुप्ता के साथ उम्मीदवार खड़ा हुआ।

आपने अपने दो विश्वासपात्र व्यक्तियों सर्व श्री उमाशंकर दीक्षित तथा श्री दिनेशसिंह को लखनऊ इसलिए भेजा था कि वे मुझे श्री. सी. बी. गुप्ता के पक्ष में बैठ जाने के लिए समझायें ताकि श्री गुप्ता निर्विरोध रूप से चुने जा सकें। ऐसा जिन कारणों से किया था, वे स्पष्ट थे।

काफी समझाने-बुझाने के बाद मैं मुकाबले से केवल हट ही नहीं गया था, बल्कि मैंने श्री गुप्त के नाम का प्रस्ताव भी रखा था। उस समय मैंने केवल एकमात्र शर्त आपसे चुनाव से हटने के साथ जोड़ी थी और कई प्रमुख कांग्रेसियों की उपस्थिति में आपके अपने दूतों ने भी स्वीकार कर ली थी। वह शर्त यह थी कि राज्य मंत्री मंडल के उन, अनेक सदस्यों में से जिनके प्रति लोगों की अच्छी भावना नहीं थी और जिन की मेरी राय में अच्छी प्रतिष्ठा नहीं थी, ऐसे दो सदस्यों को हटा दिया जाये और उनके बदले में कम से कम दो नये व्यक्तियों को मंत्रीमंडल में शामिल किया जाये। 8 मार्च को श्री सी. बी. गुप्ता निर्विरोध चुन लिये गये थे। उस उत्तर प्रदेश के जहां से सबसे अधिक संख्या में संसद सदस्य होते हैं, नामित मुख्यमंत्री के रूप में श्री गुप्ता ने 11 या 12 मार्च को आपके और श्री मोरारजी देशाई के बीच समझौता कराया था। 13 मार्च को आपके मंत्रीमंडल ने शपथ ली थी। अगले दिन श्री गुप्ता ने अपने मंत्रीमंडल के सदस्यों की सूची राज्यपाल के पास भेजी। सूची में मेरा नाम शामिल था, लेकिन मैंने मंत्रीमंडल में शामिल होने से इन्कार कर दिया, क्योंकि कोई भी व्यक्ति जैसा कि एक ओर सर्व श्री उमाशंकर दीक्षित और दिनेश सिंह और दूसरी ओर मेरे और आपके बीच केवल एक सप्ताह पहले जो तैय हुआ था, उसके अनुसार न कोई नया व्यक्ति शामिल किया गया और न किसी को हटाया गया। श्री गुप्ता ने तर्क दिया था कि वह इस समझौते में शामिल नहीं थे।

श्री दीक्षित 17 मार्च को फिर मुझे लखनऊ में मिले और कहा कि वह श्री गुप्ता के साथ इस विषय में बात करके मुझे अवगत करायेंगे, लेकिन उन्होंने बाद में मुझे कुछ नहीं बताया। श्री दिनेशसिंह ने टेलीफोन पर मुझसे कहा कि उनकी बात को माना जायेगा, इसके लिए वह 31 मार्च को लखनऊ पहुंचेंगे। मैंने उनसे कहा था कि उन्हें इस सम्बद्ध में अवश्य बात कर लेनी चाहिए, क्योंकि इस समय विधान सभा का अधिवेशन चल रहा है और एक अप्रेल को अधिवेशन समाप्त हो जायेगा। परन्तु श्री दीक्षित की तरह श्री सिंह ने भी मुझे कोई पता नहीं दिया।

जब लगभग साढे 11 बजे रात को उनसे टेलीफोन पर सम्पर्क किया गया तो उन्होंने मुझे बताया कि वह लखनऊ इसलिए नहीं पहुंचे, क्योंकि दूसरा पक्ष मुझे बीच में डालना नहीं चाहता था और उन्होंने मुझसे कहा, ''जैसा आप चाहें, करने के लिए स्वतंत्र हैं।'' इसके बाद ही मैंने कांग्रेस छोड़ने का निश्चय कर लिया था और इसी सम्बन्ध में मैंने विधान सभा के अधिवेशन में अगले दिन घोषणा कर दी थी।

जब आपने अथवा आपके विश्वासपात्रों ने मेरे द्वारा दल छोड़ने के परिणामों को महसूस किया तो 'नेशनल हैराल्ड' (लखनऊ), जिसका प्रबन्ध श्री दीक्षित के हाथ में था, के कर्मचारियों में से एक सज्जन और श्री दिनेश सिंह के जिले प्रतापगढ के एक प्रमुख कांग्रेसी उसी शाम को एक-दूसरे के बाद मेरे निवास स्थान पर मुझसे मिलने आये। उन्होंने सुझाव दिया कि मैं मुख्यमंत्री के रूप में कांग्रेस में वापस आ जाऊँ। मैंने उत्तर दिया था कि जो कुछ हो चुका है, उसको देखते हुए मैं उनके सुझाव को स्वीकार नहीं कर सकता।

यदि मानव जीवन में सत्य की कोई महिमा है तो श्री उमाशंकर दीक्षित और श्री दिनेशसिंह इस बात को जो मैंने इस मामले में उनकी भूमिका के सम्बन्ध में कही है, प्रमाणित कर सकते हैं।

पूरी निष्ठा के साथ दिये गए आश्वासन को निभाने में वे पूरी तरह असफल रहे। कांग्रेस नेतृत्व तथा मेरे बीच वैचारिक मतभेद पहले से ही, विशेषरूप से, जनवरी 1959 में नागपुर में हुए कांग्रेस अधिवेशन के समय से ही उभर रहे थे। मैंने सहकारी खेती तथा खाद्यान्न के राजकीय व्यापार को शुरू करने के सरकारी प्रस्ताव का घोर विरोध किया था। पंडित नेहरू इससे नाराज हुए थे, जिसके कारण ही उत्तर प्रदेश की राजनीति के सम्बन्ध में उन्होंने कुछ और निर्णय लिये। यदि ऐसा न होता तो वैसे ही निर्णय लिये जाते।

अपने विचारों को स्पष्ट करने के लिए मैंने एक पुस्तक लिखी, जिसमें मैंने देश की आर्थिक समस्याओं का उल्लेख किया। यह पुस्तक 1960 में प्रकाशित हुई थी। 1962 में इस पुस्तक का

संशोधित संस्करण एक अलग शीर्षक से निकला था। उसकी एक एक प्रति मैंने आपके (तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष) के पास और पंडितजी के पास भेजी थी। मैंने यह बात कही थी कि बड़े-बड़े संयुक्त फार्मों की अर्थव्यवस्था को सेवा सहकारियों के द्वारा परस्पर जोड़ा जा सकता है, जो हमारी परिस्थितियों के अनुकूल है: और यह कि हमारे रहन सहन के स्तर में सुधार लाने के लिए गैर कृषि खेती का विकास पहली शर्त है। यह विकास पहले अथवा कम से कम इसके साथ साथ खेती का विकास किये बिना नहीं हो सकता। कुछ अपवादों को छोड़ कर घरेलू तथा छोटे पैमाने के उद्योगों को प्रमुखता दी जानी चाहिए; और यह कि जब तक जनसंख्या की वृद्धि को रोका नहीं जायेगा, तब तक आर्थिक सुधार के हमारे सारे प्रयास निष्फल रहेंगे और हमारा देश उस समय तक कोई प्रगति नहीं कर सकेगा, जब तक कि हमारे सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण आदि में परिवर्तन नहीं होगा। हमारी आर्थिक समस्याओं के सम्बन्ध में गांधीजी द्वारा प्रेरित कार्यक्रमों, नीतियों अथवा विचारों को बी. के. डी. के सन् 1969, 71 तथा 74 के घोषणा पत्र में शामिल किया गया है। इस बात का मुझे गर्व है कि हमारे घोषणा पत्र में दिये गए अनेक विचारों को अन्य दलों तथा राजनैतिक नेताओं द्वारा भी अपना लिया गया है।

यहां पर इस बात का उल्लेख कर देना अनुपयुक्त नहीं होगा कि 1947 से ही मैं कांग्रेस नेतृत्व द्वारा राजनैतिक तथा प्रशासनिक दोनों प्रकार के भ्रष्टाचार को समाप्त करने की असफलता के सम्बन्ध में चिंता प्रकट करता रहा हूं। इस सम्बन्ध में लिखे गये मेरे विभिन्न नोट एवं पत्र हैं, जो इस विषय में मेरी चिंता को प्रमाणित करेंगे। मेरे प्रयासों को बहुत कम सफलता मिली। यही कारण है कि हमारे घोषणा पत्रों तथा नीति सम्बन्धी बयानों में भ्रष्टाचार के उन्मूलन तथा स्वच्छ प्रशासन की आवश्यकता को पहला स्थान प्रदान किया गया है।

क्या उपर्युक्त तथ्यों से यह बात स्पष्ट नहीं हो जाती कि बी. के. डी. का जन्म वैयक्तिक विद्वेष या प्रतिस्पर्द्धा या मेरे बहुत ही व्यक्तिगत मामलों के कारण नहीं हुआ था बल्कि 'आदर्शवादी' कारणों से हुआ था। यदि मैं कांग्रेस केवल मुख्यमंत्री बनने के लिए छोड़ता या छोड़ने के लिए तैयार होता तो एक माह पहले, कांग्रेस द्वारा अपनी सरकार बनाने से काफी पहले ही कर सकता था और उस समय मुझे या मेरे समर्थकों को बहुत थोड़ा सा या बिल्कुल भी जोखिम न उठाना पड़ता।

यदि मेरे द्वारा कदम सार्वजनिक हित के लिए न उठते अथवा भारतीय क्रांति दल विचार धारा से पुष्ट न होता और उसे लोगों का समर्थन न मिलता तो ऐसी स्थिति में बी. के.डी. का अस्तित्व ही न रहता, जबकि उसके पास विशेष रूप से चुनाव लड़ने के साधन तथा उस प्रकार के दल बदल कराने के तरीके नहीं थे जैसे कि कांग्रेस सन् 1970 से अक संगठित रूप में अपनाती रही है। एक सार्वजनिक व्यक्ति के रूप में मेरे आचरण का मूल्यांकन जैसा कि आप जनता को बताना चाहती हैं, उस समय तक अधूरा होगा, जब तक इसके साथ ही इससे सम्बन्धित दूसरे तथ्य को भी ध्यान में न रखा जाये। आपको याद होगा कि आपको 3 जनवरी 1968 को वाराणसी में 'इंडियन साइन्स कांग्रेस' के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता करनी थी। उस समय संयुक्त समाजवादी दल जो एक शक्तिशाली संगठन था, की स्थानीय शाखा ने आपका घेराव करके अपने अधिकार में लेने और अभियोग के लिए जनता की अदालत में पेश करने का निश्चय किया था। अपने इस इरादे की घोषणा उन्होंने एक सार्वजनिक बैठक में और समाचार पत्रों में दिए गए बयानों में की थी। यद्यपि एस. एस. पी. मेरी सरकार की एक घटक इकाई थी और विधान सभा में उसके 45 सदस्य थे और यद्यपि मैं गैर कांग्रेसी सरकार का प्रमुख था, परन्तु मैंने आपके इस दौरे की व्यवस्था करने में व्यक्तिगत रुचि ली और वाराणासी तक आपके साथ गया। मेरे आदेश से श्री राजनारायण संसद सदस्य को तथा एस. एस. पी. के अन्य प्रमुख कार्यकर्ताओं तथा विधायकों को जेल में बन्द कर दिया गया था। उस पंडाल में, जहां आप साइंस कांग्रेस को सम्बोधित कर रही थी, पहुंचने की उनकी कोशिशों व आपके विरुद्ध भारी प्रदर्शन को पुलिस द्वारा नाकाम कर दिया गया था।

इसके विपरीत उत्तर प्रदेश कांग्रेस-कमेटी के अध्यक्ष जो वाराणसी के रहने वाले हैं और अब आपकी सरकार के सदस्य हैं, में इतना नैतिक साहस नहीं था कि वे प्रेस में बयान देकर अथवा किसी सार्वजनिक जलसे में एस. एस. पी. की निंदा करते।

इस घटना से एस. एस. पी. बहुत बिगड़ गई थी। मैं शुरू से ही अपने इस आचरण व कार्य का परिणाम जानता था और इसीलिए मैंने विधान सभा का अधिवेशन शुरू होने के एक दिन पहले 17 फरवरी को त्याग पत्र दे दिया था। मैंने वही काम किया, जिसे मैं ठीक समझता था अर्थात् लोकतंत्रात्मक भारत में प्रधानमंत्री के पद के सम्मान व गरिमा की रक्षा करना।

कांग्रेस से त्यागपत्र मुझे उस समय आपके द्वारा सही काम न करने अथवा सही काम कराये जाने में आपकी असफलता के कारण देना पड़ा था। यदि मुख्यमंत्री पद को मैं इतना ऊंचा समझता कि उसकी वजह से मैं उस कांग्रेस से इस्तीफा दे सकता था, जिसके लिए अथवा जिसकी सेवामें मैंने अपना जीवन बिताया था, तो मैं उसे एकदम इतनी लापरवाही से व उतावली में न छोड़ देता, जैसा कि मैंने वास्तव में किया था। इसके विपरीत मैं येन-केन-प्रकारेण उससे लिपटा रहता और नहीं मैं दो बार पहले उससे त्याग पत्र देता जैसा कि मैंने अगस्त 1967 तथा दिसम्बर 1967 में किया था। जिस समय मैंने देखा कि मेरे साथियों का रवैया सार्वजनिक हित के प्रतिकूल हो रहा है तो मैंने मुख्यमंत्री का पद त्याग दिया।

ऐसे लोग जो ऊंचे राजनैतिक पद को साधन नहीं, साध्य समझते हैं अथवा उसे हर चीज से ऊपर मानते हैं वे ही दूसरे प्रकार का व्यवहार करते देखे जाते हैं।

अत: मैं यह कहूंगा कि इन दो पैराग्राफों को जिनके सम्बन्ध में मुझे शिकायत है, समाचार पत्रों में बड़ा भारी महत्व दिया गया है। इनमें उस प्रकार का चरित्रहनन होता है, जिसका जिक्र आपने अपने 23 दिसम्बर को ही अशोक मेहता को लिखे पत्र में किया है। जिन लोगों को इन बातों व तथ्यों का पता नहीं है वे शायद अनुचित व नाजायज आरोपों से प्रभावित होंगे। परन्तु मैं जानता हूं कि मेरे पास इसका कोई उपाय नहीं रहा। प्रेस से ऐसी आशा नहीं है कि आपके बयानों के खंडन में कोई चीज प्रकाशित करे। मैं यह पत्र आपको केवल रिकार्ड के लिए लिख रहा हूं।

आपका
चरणसिंह

सेवा में,
श्रीमती इंदिरा गांधी
प्रधानमंत्री, भारत सरकार,
नई दिल्ली।

उपरोक्त पत्र का कोई उत्तर नहीं दिया गया था। उत्तर देती भी क्या? इंदिरा गांधी की विशेषता थी कि वे झूठ को इस तरह भारी भरकम बनाकर पेश करती कि जैसे वह नितांत सत्य हो। यहां सिर्फ इतना ही उल्लेख करना काफी होगा कि ये वहीं इंदिराजी थी, जिन्होंने कुर्सी के लिए इलाहाबाद हाई कोर्ट के निर्णय को धता बताकर पूरे देश में आपात्काल लागू कर दिया था। जिन्होंने कांग्रेस पार्टी के अपने पक्ष में टुकड़े करने में जरा भी देरी नहीं लगाई। यदि कोई निष्पक्ष लेखक इंदिरा गांधी और चरणसिंह के चरित्र की तुलना करे तो इंदिरा गांधी उनके सम्मुख कहीं नहीं ठहरती। किन्तु वे तो पंडित नेहरू की बेटी थी, भारत की प्रधानमंत्री थी। नेहरू खानदान के प्रति इस देश की जनता की श्रद्धा को चालाकी से भुनाती रही। एक रोचक बात इन पंक्तियों को लिखे जाने के दौरान हुई है। श्रीमती शीला कौल को उच्चतम न्यायालय की टिप्पणी के कारण, जिसमें उन पर भ्रष्टाचार के आरोप लगाये गए थे, हिमांचल के राज्यपाल पद से इस्तीफा देना पड़ा है। लेकिन ऐसा उन्हें राष्ट्रपति आदेश के तहत करना पड़ा। नहीं तो वे बयान दे चुकी थी कि नेहरू परिवार से जुड़े होने के कारण ही उनसे इस्तीफा मांगा जा रहा है। भला, इंदिरा गांधी तो नेहरू की बेटी थी।

2.

बहरहाल, वही प्रसंग है जब चौधरी साब ने अभी तक कांग्रेस छोड़ी नहीं थी। वे इन दिनों पैदल चल कर असेम्बली पहुंचते। चन्द्रभानु गुप्ता की सरकार बन चुकी थी। चौधरी साब किसी समझौते की आशा लिये थे। उन्हें पैदल चलते देख निजी सचिव रहे तिलकराम शर्मा को बहुत संकोच होता। 65 साल की आयु में यह चुस्ती देखने लायक थी। जब भी वे घर के लिए चलते, कोई अफसर गाड़ी लाकर खड़ा कर देता। कहता, "चौधरी साब, मैं उधर ही जा रहा हूं।" वे बैठ जाते। दो तीन दिन यह चलता रहा। फिर उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि यह सब तिलकराम का खेल है। तब उन्होंने तर्जनी करके तिलकराम शर्मा को टोक दिया, "अब यह खेल बन्द होना चाहिए। मैं पैदल ही भला।"

कई बार तिलकराम शर्मा स्वयं पैदल साथ हो लेते। बातें करते हुए घर पहुंचा देते। पैदल चलने का कारण यह भी था कि उस क्षेत्र में सिर्फ आदमी से खींचे जाने वाले रिक्शे ही चलते। चौधरी साब को यह अपमानजनक लगता कि एक आदमी को आदमी खींचे। अभी एक माह पहले ही आई रकम वे वापस कर चुके थे। उतनी रकम में तो गाड़ी ही खरीदी जा सकती थी।

उस दिन अजीब घटना हो गई। चौधरी साब पैदल घर जा रहे थे कि मेरठ जिले से आये लोगों के झुंड ने उन्हें देख लिया। उनका नेता सड़क नाप रहा था। 20 साल सरकार में रहने का यह ईनाम? उन्हें यह अत्यंत अपमान जनक लगा। तब तैय किया गया कि चौधरी सांब के लिए गाड़ी खरीदी जाये। एक सप्ताह के भीतर ही उनके पास गाड़ी आ गई थी।

निवास स्थान पर ही जनता की अपार भीड़ रहती। हवा में मानों कोई कह रहा हो कि कुछ न कुछ घटित होगा। आये दिन विपक्षी नेता उन्हें घेरे रहते। नेतृत्व संभालने का जोरदार आग्रह था। किन्तु चौधरी साब इन्कार कर रहे थे। यहां एक प्रश्न स्वाभाविक है कि विरोधी नेता क्यों चौधरी साब के पास बार बार आ रहे थे? वे तो कांग्रेसी थे। कांग्रेस में उनके विरोधी कहते रहे हैं कि वे विपक्ष से मिले हुए थे। चौधरी साब ने लेकिन ऐसा नहीं किया था।

किन्तु फिर भी कोई कारण था, जिससे विपक्षी उन्हें बार बार अपना नेतृत्व करने को कह रहे थे। सन् 1967 में कांग्रेस की दुर्गति हो चुकी थी। चौधरी साब को कांग्रेसी नेतृत्व बार बार पीछे धकेल रहा था। सुचेता कृपलानी के आने के बाद तो उनके पास मात्र वन विभाग रहा। जबकि किसान मसीहा, राजस्व मंत्री चौधरी चरणसिंह से सब प्रभावित थे। गृहमंत्री का उनका काल असाधारण था, इसी कारण विपक्षी दल उनकी बहुत इज्जत करते थे, साथ ही यह स्पष्ट हो गया था कि कांग्रेस में अब चौधरी को अपमान का घूंट पीकर ही रहना पड़ेगा। विपक्ष के पास इतना कद्दावर कोई नेता भी नहीं था। इसीलिए वे बार बार चौधरी साब से अनुनय कर रहे थे। जब गुप्ता मंत्री मंडल में शामिल नहीं हुए तो यह आना जाना और भी बढ गया था।

स्वयं उनके समर्थक भी दो भागों में बंट गए थे। पहले के अनुसार चौधरी साब को तत्काल कांग्रेस को अलविदा कहना चाहिए। दूसरा इस विचार से असहमत था। चौधरी साब अब राजनीति के चौराहे पर खड़े थे। कांग्रेस न छोड़ने के पीछे यह तर्क था कि कांग्रेस छोड़ने के बाद चौधरी साब कहीं के नहीं बचेंगे। अनेक नेताओं के उदाहरण थे जो कांग्रेस से निकलकर गुमनामी में खो गये थे। लेकिन कांग्रेस पार्टी उनके साथ ज्यादति कर रही थी। उनकी अवहेलना कर रही थी। ऐसे समर्थकों का मानना था कि अब कांग्रेस में बचा क्या है, चौधरी साब के लिए। राजनारायण, नानाजी देशमुख, रामचन्द्र विकल आदि विपक्षी नेता दिन रात उनसे सम्पर्क बनाये हुए थे। सबको एक ही जबाब था-"कांग्रेस कैसे छोड़ दूं?"

वे रोज असेम्बली जाते। घर आ जाते। घर में विचार विमर्श अन्य लोगों के बीच चलता ही रहता। 65 साल की आयु में वे राजनीति के भंवर में जैसे फंस गये थे। उनके पूरे जीवन में

एक खाश बात थी–जब जब उन पर संकट आया, वे साहस से चुनौति स्वीकार करते। उनकी बीमारी जैसे रफू–चक्कर हो जाती।

कांग्रेस में रहकर भी 1937 से ही वे संघर्ष करते आ रहे थे। मूल्यहीन राजनीति का हमेशा डटकर विरोध किया। कांग्रेसी नेता वैभव और विलाशिता के आदी हो चुके थे तो चौधरी साब परिश्रम, सादगी और स्पष्टवादिता के अभ्यस्त थे। अन्य नेता जहां बंगले, वैभव, महंगी गाड़ी, फार्म हाउस और करोड़ों की सम्पति बनाते जा रहे थे, वहीं चौधरी साब की नजर सीधी गांव और खलिहान पर रही। गांव की कच्ची पगडंडी कभी ओझल नहीं हो सकी।

मार्च समाप्त होने को था। इसी बीच उन्होंने दिल्ली के एक दो चक्कर भी लगाये। दीक्षित और दिनेशसिंह से भी मिले। दिनेश सिंह ने विश्वास दिलाया था कि वे 31 मार्च को लखनऊ आयेंगे। असेम्बली एक अप्रेल तक चलने वाली थी। केन्द्रीय नेतृत्व की यह योजना थी कि कैसे भी एक अप्रेल तक चौधरी साब को भ्रमित रखा जाये। फिर तो असेम्बली सेशन समाप्त हो जायेगा। बाद में जो समय मिलेगा उसमें तोड़–फोड़ की जा सकेगी। विपक्ष के बड़े बड़े नेताओं के आग्रह के बाद भी चौधरी साब कांग्रेस नहीं छोड़ पा रहे थे, यह उनकी कमजोरी भी मान ली गई थी। एक एक दिन खींचकर वे किसान मसीहा की छवि धूमिल करना चाहते थे।

यह सब योजनापूर्वक हो रहा था। 31 मार्च का दिन भी निकल गया। न दिनेश सिंह आये, न उनका कोई संदेश।रात को 12 बज गये थे। चौधरी साब को चैन नहीं पड़ रहा था। एक षड्यंत्र, एक बहुत बड़ा धोखा, अब क्या हो? एक मिशन पर चले थे। कांग्रेस को सुधारने का बीड़ा उठाना चाहते थे किन्तु कांग्रेसी नेतृत्व तो उन्हें दूर फेंक चुका था। उनके भूमि सुधार कार्यक्रम, गृहमंत्री, कृषिमंत्री के अमिट सुधार सब मानों कूड़ेदान में फेंकने लायक थे। क्या सोचा था, क्या हो गया? मंजील बहुत दूर थी। रास्ता ही नजर नहीं आ रहा था। उनका गांव, किसान और गरीब मानों भारत के नक्शे से मिटा दिये जायेंगे। कांग्रेस के भीतर रहते हुए भी, कलुषित नेता किसान को निगलने की घात में रहते, अब तो वे कहां चूंकेंगे? तो क्या 65 साल की आयु में कांग्रेस छोड़ दें? गांधी और पटेल की कांग्रेस। भारतीय स्वतंत्रता का जंग लड़ने वाली कांग्रेस, भारत देश की पर्याय बन चुकी कांग्रेस। कांग्रेस में पूरे देश की आस्था थी। मजदूर से पूंजीपति तक, जमींदार से लेकर खेतिहर तक। यदि कांग्रेस की छवि खराब हो रही थी, तो यह उनके ही भीतर बैठे लोगों की वजह से हो रही थी।

तो क्या हो? चौधरी साब निरन्तर सोचते हुए मानों स्वयं से पूछ रहे हों? यह 65 साल की आयु। आर्य सभ्यता में यह वानप्रस्थ आश्रम की आयु थी। झंझटों से दूर। लेकिन मानव का, समाज का कल्याण करने की यही तो उम्र है। उनका कबीर जैसे हुंकार कर उठा, अब क्या घर में पड़ रहोगे? चारपाई तोड़ोगे? राजनीतिज्ञों की धूर्तता के आगे परास्त हो जाओगे? नहीं, चरणसिंह, तुम तो चौधरी हो ग्रामीण भारत के, मंजिल की ओर बढो।

और तब वे सहसा उठ बैठे। कमरे में पड़े टेलीफोन से बोल उठे, ''कृपया मुझे ठाकुर दिनेश सिंह से बात कराइये तो?''

''हैलो!'' नई दिल्ली से दिनेश सिंह की जानी–पहचानी आवाज थी।

''ठाकुर साब, आज दिन में आप लखनऊ आने वाले थे?'' चौधरी साब की आवाज में स्पष्ट निराशा थी।

''क्या करता आकर? गुप्ता का कहना है कि वे किसी हस्तक्षेप को पसंद नहीं करते, मंत्रीमंडल बनाना मुख्यमंत्री का काम है।''

''लेकिन ठाकुर साब, अपना तो समझौता हुआ था कि...''

बीच में ही दिनेश सिंह बोल उठे, ''गुप्ता का कहना है कि वह समझौते में शामिल नहीं थे''

चौधरी साब विस्मित हो बोले, ''ठाकुर साब, आप और मैडम के सामने ही तो बात हुई थी। आपने वायदा किया था कि...''

"मैं तो अब कुछ नहीं कर सकता।" दिनेश सिंह ने मानो अंतिम उत्तर दे दिया।

"तो, मैं अब क्या करूं?" चौधरी साब की टूटती आवाज को सुनकर दिनेश सिंह ने खिजलाहट भरा उत्तर दिया,"जो आपकी मर्जी हो, करो।" फोन रख दिया गया। चौधरी साब कुछ क्षण फोन को संभाले रहे। फिर लम्बा सांस भरा और फोन की ओर ताकते हुए रख दिया।

पास बैठी गायत्री देवी अपलक चौधरी साब को निहार रही थी। उनके चेहरे पर आये तनाव को स्पष्ट पढ रही थी। फिर भी पूछा, "क्या हुआ?"

"सब बदमाश हैं।" अनायास ही चौधरी साब के मुंह से निकल गया।

"क्या, यों ही घुटते रहोगे?" चौधराइन ने उनकी आंखों में ताक कर पूछा।

"तो क्या करूं? कांग्रेस छोड़ दूं?" यह मुझसे नहीं हो सकेगा भाई।" सचमुच, यह एक घायल शेर की विवशता थी।

"कांग्रेस पार्टी नहीं, चापलूसों और दलालों का गिरोह बन गई है। आपके सामने दो ही रास्ते हैं, या तो अपनी आत्मा को मार कर इनकी जी-हजूरी करो और जीवन के बाकी दिन किसी तरह काट दो या कांग्रेस छोड़ दो।" गायत्रीदेवी एक ही सांस में अपना फैसला दे चुकी।

चौधरी साब कुछ क्षण चुपचाप गायत्री देवी को देखते रहे फिर बोले, "क्या कहती हो, गांधीजी की कांग्रेस छोड़ दूं?"

अब तो गायत्री देवी और भी भड़क उठी, "इन लोगों ने गांधी को ही कहां बख्शा है? उन्हें तो कभी का भूल गये। पहले पंडित नेहरू से बहस तो कर लेते थे, अब किससे कहोगे? कोई सुनने वाला ही नहीं है।"

"इस उम्र में अलग हो कर भी क्या करूँगा? नई पार्टी बनाना क्या आसान है? विपक्षी तो कांग्रेस से भी बदतर हैं। अच्छा तो यही हो कि मैं राजनीति से सन्यास ले लूं। अब यह सब, मेरे से नहीं हो सकेगा।" चौधरी साब गहरी वेदना में डूब गये।

"क्या आप, सचमुच घर बैठ सकोगे? ये गांव के लोग, किसान कहां जायेंगे? आप बेईमानों से हार मान लेंगे?" यह गायत्री देवी की जबरदस्त चुनौति थी।

"क्या करूं? कुछ समझ में नहीं आता।" कहते हुए चौधरी साब पलंग पर पसर गये।

31 मार्च 1967 की यह रात! बातें करते करते रात के तीन बज चुके थे। राजनीति की मरुभूमि में संत कबीर की वेदना का अंत नहीं था। यों आसानी से क्या कबीर ने हार मान ली थी? उन भक्त कबीर ने भी तो व्यर्थ की वेश-भूषा, थोथे तर्क और कुटिल चेहरा लेकर भरमाने वाले महात्माओं का बखिया उधेड़ा था। आज बदलते परिवेश में यह संत कबीर क्या चुप रह जाये? वे बार बार करवट बदल रहे थे। दोनों पति-पत्नी सिर्फ आंखों से बातें कर रहे थे। कभी चौधरी साब आंखें बंद कर लेते और तब भीतर का कबीर गुनगुनाता-

"ऐसा कोई ना मिलै, जासौं रहिये लागि।
सब जग जलतां देखिया, अपनी अपनी आगि॥
ऐसा कोई ना मिलै जा सों कहूं निसंक।
जासों हिरदै कि कहूं सो फिरि मारै डंक॥"

आज सर्वत्र एक विचित्र प्रकार का अभाव मानों उन्हें डस जायेगा। यह व्याकुलता भयानक थी। वह खोज में थे, किन्तु कुछ मिल नहीं रहा था। मन, अब धोखा देने वालों के प्रति घृणा से भर गया था। कितने कुरूप चेहरे वाले हैं ये लोग? और क्या ये सता पिपासु गांव-देहात को निगल नहीं जायेंगे? तब फिर एक विचारों का सिलसिला शुरू हो गया-

"सुखिया सब संसार है, खाये अरू सोवै।
दुखिया दास कबीर है, जागे अरू रोवै॥"

इस कबीर ने कमरे से बाहर देखा। पौ फटने के लक्ष्ण दिख रहे थे। बड़े तड़के की गुलाबी ठंड उन्हें अनुभव हो रही थी। चौधराइन काफी देर तक बैठी उन्हें देखती रही। घड़ी की टिक् टिक्

आगे बढती जा रही थी। चौधरी साब गहरे सन्नाटे में खोये हुए थे। वे कभी आंखें मूंद लेते, कभी गायत्री देवी की ओर देख लेते। क्या क्या कष्ट नहीं दिये मैंने इनको; बच्चों को। उनकी बुनियादी मांगें भी पूरी नहीं की जा सकी। आज, 30 साल की राजनीतिक जिन्दगी जैसे चौधरी से हिसाब मांग रही थी। किन्तु भीतर का कबीर उत्तर दे रहा था-क्या तुमने कभी प्रतिफल चाहा था? इन पाखण्डी अवधूतों के छल से तुम विचलित हो गये? यह तो होना ही था; किन्तु राजस्वमंत्री, गृहमंत्री चौधरी का काल क्या भुलाया जा सकेगा?

गायत्री देवी अपनी शाल को संभालते हुए उठ खड़ी हुई। अपने चौधरी की, किसान-मसीहा की और दुर्गति उनसे देखी नहीं जा सकती थी। अनायास, चलते चलते ठिठक गई, "सुबह का वक्त हो रहा है। इस समय तो कैसा भी बीमार व्यक्ति, स्वस्थ अनुभव करता है। आप इतनी चिंता न करें।" और वे कमरे से बाहर आ गई। चौधरी साब ने पलकें उठाकर जाती हुई चौधराइन को देखा और आंखें बंद कर ली।

गायत्री देवी उस बड़े कमरे में आई जहां चौधरी साब के समर्थक बतियाते रात व्यतीत कर रहे थे। कैसी अजीब रात थी कि इस कबीर के घर पर कोई नहीं सोया। गायत्री देवी को देखकर एक साथ सबकी नजर उनकी ओर उठ गई। कंपा देने वाला सन्नाटा पसर गया था। आंखों ही आंखों में जैसे सभी पूछ रहे थे-क्या हुआ? क्या होगा? क्या करना चाहिए? चौधराइन एक कोने में बैठ गई। उनके चेहरे से टपकती निराशा को शायद सभी ने पढ लिया था। एक विधायक से यह सब सहन नहीं हुआ। उसने क्रोध में कहा, "माताजी, आखिर क्या मजबूरी है? इन बेईमानों से पीछा छुड़ाने में कैसी झिझक?"

"लेकिन चौधरी साब से कांग्रेस छोड़ते भी तो नहीं बनता।"

"कैसी कांग्रेस?" एक अन्य नेता भड़क उठा।" कांग्रेस को निगल गये हैं कुछ लोग। इसीलिए पूरे देश में कांग्रेस की ऐसी दुर्गती बनी है। कांग्रेस तो गुप्ता और इंदिरा की जेब में है भैया!"

"आखिर चौधरी साब को डर किस बात का है? क्या उन्हें अपनी जनता पर विश्वास नहीं। " एक अन्य विधायक भी रुष्ट होकर बोले।

और यह चर्चा काफी देर तक चली। कई युवा विधायकों का गुस्सा चौधरी साब के प्रति स्पष्ट और तीखा था। तब गायत्री देवी और नहीं सुन सकी। "ठीक है, मैं उन्हें मनाऊंगी कि आज वे विधान सभा में कांग्रेस छोड़ने की घोषणा कर दें।"

सभी के चेहरों पर चमक आ गई। ब्रम्ह मुहूर्त का फैसला।

काफी देर तक गायत्री देवी वहां बैठी रही। सूर्य निकलने वाला था। अनेक विपक्षी नेता भी वहां पहुंच चुके थे। तब चौधराइन उठकर चौधरी साब के कमरे में गई। वे अब भी चिंतित मुद्रा में थे। गायत्री देवी से पूछा, 'उधर शोर क्यों हो रहा था? क्या चर्चा हो रही थी।'

गायत्री देवी ने आंखों में चमक लाकर कहा, "आज आपको कांग्रेस छोड़नी है।"

"यह क्या कह रही हो?" वे पलंग पर उठ बैठे। "यह अच्छा नहीं होगा।"

"अच्छे या बूरे का फैसला तो भविष्य करेगा।" गायत्री देवी गंभीर हो गई।

उन्होंने तर्क किया, "जब दुष्ट दुशासन और दुर्योधन, भरे दरबार में द्रोपदी को नंगी कर रहे थे, तब भीष्म पितामह यह सब मौन होकर देख रहे थे। क्या आपकी राय में वे ठीक थे?"

"नहीं, उन्हें विरोध करना चाहिए था। अन्याय को तटस्थ रहकर देखना भी अन्याय है।" चौधरी साब ने उत्तर दिया।

महाभारत और रामायण को रोज पढने वाली गायत्री देवी ने कहा, "भगवान श्री कृष्ण ने अन्यायी को खत्म करने के लिए क्या क्या नहीं किया? उनका उद्देश्य था धर्म को बचाना। आज आपका कर्त्तव्य है कि गांव और किसान को बचायें। ये भ्रष्ट नेता उन्हें चूसते रहें और आप मूकदर्शक बने रहे तो आने वाला इतिहास आप को माफ नहीं करेगा।..." कहते कहते गायत्री देवी का गला रूंध गया। चौधरी साब ने चकित हो उनकी ओर देखा। "यह क्या?"

"हमें तो वर्तमान की पुकार पर चलना है। सभी लोगों की राय है कि आप कांग्रेस छोड़ दें। वे आपका और अपमान सहन नहीं कर सकते।" गायत्री देवी की एक ही सलाह थी।

"मुझे तो बहुत बुरा लग रहा है। लेकिन तुम्हारा भी कहना ठीक है।" कहते हुए वे पुनः लेट गये।

गायत्री देवी बाहर आ गई। उनके चेहरे से उतर रहा संदेश मानों सबने पढ़ लिया था। इधर-उधर कुछ लोगों को संदेश भेजे गये। चौधरी साब ने किसी से कुछ नहीं कहा।

वे रोज की भांति अपने नित्य कर्म से निबटे। विधान सभा में जाने को तैयार हुए। बाहर निकले तो पूरा लॉन भीड़ से ऊफन रहा था। उन्हें देख सभी के चेहरे चमक उठे। नारों से आकाश गूंज उठा, "चौधरी साब, जिन्दाबाद! 'किसान मसीहा, जिंदाबाद'। चौधरी तुम संघर्ष करो, हम तुम्हारे साथ हैं।"

उन्होंने हाथ के संकेत से जोशीली भीड़ को शांत कराया। वे कुछ भी बोलने में असमर्थ थे। उन्होंने देखा कि तीन-चार-गाड़ियां भी खड़ी हैं। एक गाड़ी में उन्हें बैठाया गया और काफिला विधान सभा की ओर चल पड़ा। आज मानों कुछ होने वाला था। विधान सभा सत्र का अंतिम दिन था। चन्द्रभानु गुप्ता ने चौधरी साब को पटखनी दे दी थी। इसके बाद जोड़-तोड़ करने की योजना थी। चौसरके पासे यों फेंके गये थे कि चौधरी को बनवास भेज दिया जाये।

और तभी.... भरे दरबार में विदुर ने धृतराष्ट्र को धिक्कारा था-संभालो अपना मंत्रीपद! मुझे नहीं चाहिए। तुम स्वार्थ में अंधे हो गये हो।...

बहुत बाद में, एक संत हुआ था कबीर। उन्होंने पाखंडियों, छल-कपट करने वाले ढोंगी अवधुतों से कहा था-

"हम घर जारा आपना, लिया मुराड़ा हाथ।
अब घर जारों तासु का, जो चलै हमारे साथ॥"

और तभी...1 अप्रेल 1967 को, यू. पी. विधान सभा में चौधरी चरणसिंह ने खड़े होकर घोषणा कर दी, "अध्यक्ष महोदय, मैं कांग्रेस पार्टी से त्याग पत्र दे रहा हूं।"

सदन में एकाएक भयानक सन्नाटा छा गया। सभी को जैसे काठ मार गया। मानो धृतराष्ट्र के दरबार में भीष्म पितामह क्रोध में उबलते हुए खड़े हो गये, "बन्द करो दुर्योधन! मैं यह नहीं देख सकता। तुम्हारा बाप तो अंधा है, लेकिन मैं तो नहीं।" और दुर्योधन कांपता हुआ उन्हें घूरने लगा। चौधरी चरणसिंह उठकर विपक्षी बैंचों पर बैठ गये। उनके पीछे पीछे 17 अन्य विधायक भी उठ खड़े हुए। तब मानों पासा ही पलट गया। सता की कुर्सी थामे चन्द्रभानु गुप्ता हिल उठे। खड़े होकर घोषणा करनी पड़ी, "मैं मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा देता हूं।" साथ ही राजनीति के शातिर खिलाड़ी गुप्ता ने यह भी जोड़ा, "मैं राज्यपाल महोदय से निवेदन करूंगा कि चौधरी साब को मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाई जाये।"

3.

समूह के साथ एक आसान रास्ते पर चलने में क्या कठिनाई हो सकती है? किन्तु जब यह अनुभव हो कि हमराही ही धोखा देने में लगे हैं और एक नया रास्ता चुनना पड़े तो यह अत्यंत कठिन हो जाता है। नया रास्ता, नये राही और मंजील पर पहुंचने की दृढ़ इच्छा। यह सब उत्साह भी जगाता है। अवसरवादी, पाखण्डी और मठाधीशों ने चौधरी साब को चक्रव्युह मे फांस लिया था। पिछले पांच वर्ष से ये लोग जाल बिछाने में लगे थे। विषेला प्रचार कर रहे थे। चौधरी साब

इस गरल को चुपचाप शालीनता से पी रहे ते। राज्य की जनता इस बात को जानती थी। कांग्रेस के अखबारों ने उनकी प्रशंसा की थी। यह सब ईर्ष्यालू लोगों के लिए और भी असहनीय था। एक गिरोह उनके विरुद्ध तैयार हो गया था। यह भयानक निराशा का काल था। यदि गायत्री देवी सही समय पर कदम नहीं उठाती तो शायद चौधरी साब राजनीति से किनारा कर लेते। यहां यह सोचना कितना सुखद लगता है कि यदि चौधरी साब को उनका वांछित हक मिल जाता और कांग्रेसी नेतृत्व उनके हाथ में आ जाता तो यू. पी. की जनता का कितना हित हो सकता था। किन्तु कांग्रेस में भी उन्हें काम कौन करने देता? मुख्य बात तो यह कि काम राजनीति में चाहता कौन है? सता को साध्य समझने वाले लोग उन्हें कितने दिन चलने देते? इसलिए, कांग्रेस से निकलना अवश्यम्भावी हो गया। बेशक दूसरे मोर्चे पर भी टिके रहना आसान न था।

असेम्बली में घोषणा के बाद मानों तहलका मच गया। टेलीफोन और तार खड़कने लगे। राजधानी लखनऊ में अफरा-तफरी मच गई। विरोधी दलों के सदस्य चौधरी साब के निवास की ओर भाग छूटे थे। अब कांग्रेसी नेतृत्व को भी अनुभव हो गया था कि इस महामानव के साथ ज्यादतियां की गई। अखबारों ने चरणसिंह के कदम को एक स्वाभाविक कदम बताया। सम्पादकीय लेखों में चौधरी साब के साथ हुए अन्याय को स्वीकार किया गया था। और जनता? उसकी आंखों में आंसु भी थे तो भविष्य की सुखद कल्पत्रा भी थी। राजस्वमंत्री, गृहमंत्री, कृषि मंत्री का उनका काल जनता याद करने लगी।

कांग्रेस के अनेक मंत्री उस दिन अखबार वालों से कहते सुने गये कि सचमुच चौधरी साब के साथ कांग्रेस ने अन्याय किया। चौधरी साब की सहन शक्ति की प्रशंसा हो रही थी। एक विलक्षण प्रतिभा से कांग्रेस ने हाथ धो लिया। कांग्रेस नेतृत्व को खबर लगते ही सकते में आ गये। उन्होंने अपने दूत चौधरी साब के पास दौड़ाये। उन लोगों ने अनुरोध किया-"चौधरी साब हमारी गलती हो गई। आप कांग्रेस में लौट आयें। कांग्रेस का नेतृत्व संभालें।"

लेकिन वे अब भी चौधरी को पहचानने में चूक गये। वे किसी की गेंद बनने को तैयार न थे। उन्होंने नम्रता से विवशता प्रकट की, "अब बहुत देर हो चुकी है। मैं ऐसा अब नहीं कर सकता।"

उधर विरोधी दलों ने बैठक की। पूर्व में संविद के नेता रामचन्द्र विकल चुन लिये गये थे। उन्होंने तत्काल अपने पद से इस्तीफा दे दिया। सभी ने एक मत से चौधरी साब को अपना नेता चुन लिया। वे सभी समूह में चौधरी साब के निवास की ओर चल पड़े। अपार जन-समूह इकट्ठा हो गया था। रिक्शा चालक से लेकर अफसर तक। बातें करते करते कई आंखों में पानी ले आते- "कितना कष्ट सहा है चौधरी साब ने! मक्कारों ने बहुत तंग किया।"

चौधरी साब अब भी अन्दर कमरे में विचारमग्न थे। कांग्रेस गांधी और पटेल की कांग्रेस, उसे छोड़ने में उन्हें कोई खुशी नहीं हो रही थी। लेकिन मजबूरी भी थी। तभी विरोधी दलों का हुजूम वहां पहुंच गया।

उन्हें देखते ही एकत्रित जन समूह गगन भेदी नारे लगाने लगा। एकत्रित जन-समूह के साथ विरोधी दलों के विधायक भी नाचने लगे। तब चौधरी साब बाहर निकले। उन्होंने नारे लगाने वालों को चुप रहने का संकेत भी किया, किन्तु वे दुगुने वेग से नारे लगाने लगे। अनेक उनके पैरों में लौट गये। यह सब उन्हें असह्य लगा। किसी तरह पीछा छुड़ाकर वे वापस अन्दर चले गये। संविद के कुछ प्रतिनिधि भी अन्दर चले गये। सभी ने अपने निर्णय से उन्हें अवगत कराया। अपने एक निकट व्यक्ति को बुलाकर-चौधरी साब ने कहा, "लोगों से चुप रहने को कहो। हम लोग बातें करेंगे। यदि ये लोग यों ही उद्यंडता करते रहे तो मैं नेता पद स्वीकार नहीं करूंगा।"

तब, गले में आये उच्छवास को भीड़ ने काबू किया। अलग अलग समूह में बैठकर वे भी चर्चा करने लगे।

दूसरे दिन ही तो था 3 अप्रेल। उन्हें मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाई गई। विशाल पंडाल

बनाया गया था। अपार जन-समूह इकट्ठा हो गया। लखनऊ में ऐसा पहली बार हुआ था। पहली बार एक ग्रामीण ने मुख्यमंत्री पद की शपथ ली थी। गांव-खेत की माटी की खुशबू मानों सचिवालय के आर-पार समा गई थी। ग्रामीणों की ऐसी उपस्थिति सभ्रांत जनों ने पहले कभी नहीं देखी थी। नौकरशाही हैरान थी। और ये बावले, गंवार देहाती दीवाने होकर नाच रहे थे। उनके उत्साह का कोई पार न था।

यह एक ऐतिहासिक दिन था। यू. पी. को ही नहीं, देश को नई दिशा देने वाले कदम का प्रारम्भ हुआ था। शपथ लेने के बाद मुख्यमंत्री चौधरी चरणसिंह को संवाददाताओं ने घेर लिया था-"क्या आज आप बहुत खुश हैं?"

"बिल्कुल नहीं। जिस तरीके से मैं मुख्यमंत्री बना हूं, यह तरीका मुझे पीड़ा पहुंचाने वाला है। किन्तु मजबूर भी था।"

4 अप्रेल 67 के अखबारों का अलग ही नजारा था। प्रथम पृष्ठ पर विशाल जन-समूह के नाचते-गाते चित्र थे। गांवों में रात को घी के दीये जलाये गए थे। अखबारों में सुर्खियां लगाई गई थी-आज से भ्रष्टाचार बन्द! मानों उत्तर प्रदेश का नक्शा बदल गया था। डाकुओं, जमाखोरों, रिश्वत खोरों, गुण्डों की जैसे शामत आ गई थी। अखबारों में इस आशय के लेख प्रकाशित होने लगे। उस दिन एक पत्रकार ने सरकारी कर्मचारियों की बातचीत का विवरण छापा-"अब वे एक दूसरे से मजाक में ही सही, कहते हैं-हराम खोरी नहीं चलेगी। चौधरी खा जायेगा।"

कुछ दिनों पश्चात ही मंत्री मंडल के अन्य सदस्यों को शपथ दिलाई गई। शपथ लेने वाले विधायक सबेरे ही चौधरी साब के निवास पर पहुंच गये। एक बड़े कमरे को धो-पौंछ कर हवन के लिए तैयार किया गया। हवन में भावि मंत्रीगण सम्मिलित हुए। हवन की पवित्र ज्योति जल उठी। यह इस बात का वचन था कि हमें पवित्र रहना है। मानवमात्र के कल्याण में जुट जाना है। गरीब का, मजदूर का, किसान का, सबका जीवन मंगलमय हो, यही हमारी कामना है।

उस दिन सुबह सुबह ही तिलकराम शर्मा चौधरी साब के निवास पर पहुंचे थे। देखा, नहा-धोकर, कपड़ा लपेटे, सूर्यपुत्र चौधरी चरणसिंह बरामदे में बैठे हैं। तिलकराम को देखते ही बोले, "तुम तो काफी जूनियर हो।"

"हां सर! लेकिन मैंने कब कहा कि मैं सीनियर हूं।"

"तब तुम आठ-दस अधिकारियों को पार करके मुख्यमंत्री के प्रायवेट सेक्रेटरी कैसे बन सकते हो?"

"ठीक है सर! मैं तो पोस्टिंग बाबत बात करने नहीं आया हूं। आपकी प्रायवेट और राजनैतिक फाइलें मेरे पास थी। आपका कमरा आज किसी मंत्री को अलाट हो जायेगा। तब उनका प्रायवेट सेक्रेटरी आलमारी खाली करने हेतु मुझे कहेगा। मैं तो यह पूछने आया हूं कि ये फाइलें कहां रखनी हैं? आपके निवास स्थान पर या मुख्य मंत्री के चेम्बर में?"

"अच्छा हो कि आप उन्हें घर भेज दें।"

"ठीक है सर!" तिलकराम ने हामी भरी। किन्तु वह वहीं बैठे रहे।

"शायद तुम कुछ कहना चाहते हो?" चौधरी साब ने टटोलते हुए पूछा।

"हां सर! जब आपने पोस्टिंग मामला उठा दिया है तो मुझे भी कुछ कहने की इजाजत दीजिए।"

"बोलो, क्या कहना है?" चौधरी साब तनिक मुस्कराये।

"मेरा निवेदन है कि जब आप कृषि या वन मंत्री थे तो यह सीनियरटी का मुद्दा किसी ने नहीं उठाया। जब आप गृह मंत्री या मुख्यमंत्री बने तो सीनियरटी का सवाल उठ खड़ा हुआ। पूर्व में जब सीनियर अधिकारियों को आपके साथ काम करने को कहा जाता था, वे छुट्टी पर चले जाते थे। उनमें से एक ने तो यहां तक टिप्पणी की थी, "क्या मैं ही अकेला हूं जिसे एक शेर के सामने फेंका जा रहा है।" आप जानते हैं कि मैं मुख्यमंत्री का सेक्रेटरी बनने से कोई बेजां फायदा

नहीं उठाऊंगा। मैं तो सचिवालय का स्थायी अधिकारी हूं। इसके अतिरिक्त विशेष बात यह भी है कि डा. सम्पूर्णानन्द चन्द्रभानु गुप्ता और सुचेता कृपलानी सभी, जब मुख्यमंत्री बने तो अपने स्टाफ को साथ रखा। उस समय सीनियरटी का मुद्दा कहीं नहीं उठा।''

तिलकराम शर्मा की लम्बी तर्कपूर्ण बात सुनकर वे खामोश हो गये। शायद सोच रहे हों कि इस व्यक्ति की बात में दम है। तभी 'ओम' उच्चारण की ध्वनि गूंज उठी। कुछ विधायक आये और उन्हें हवन के पास ले गये।

उस दिन उत्तर प्रदेश में पहली बार ऐसा हुआ कि शपथ-ग्रहण समारोह राज्यपाल के दरबारहाल में न होकर बाहर लॉन में हुआ। बड़ा सा शामियाना लगाया गया था। उस दिन भी विशिष्ट जन के अतिरिक्त भारी संख्या में आमजन सम्मिलित हुए। समारोह के बाद में मेरठ के एक विधायक ने चौधरी साब से अनुरोध किया, ''तिलकराम को ही अपना प्रायवेट सेक्रेटरी रखें ताकि लोगों को उनसे बातचीत करने में कठिनाई न हो। आपके पास काफी विभाग हैं। कोई राज्यमंत्री भी नहीं है।''

चौधरी साब को अच्छा नहीं लगा। बोले, ''यह तुम क्या कह रहे हो? मैं ही नियम का उल्लंघन कर दूं? लोग कहेंगे कि मेरठ जिले का होने के कारण मैंने उसे अपना सेक्रेटरी बनाया है। फिर तिलकराम को वहां फायदा है। वह राजस्वमंत्री के पास नं. एक पर है। मेरे पास आयेगा तो नम्बर दो पर होगा। फिर भी उसे कोई कठिनाई हो तो मेरे से कह सकता है।''

चौधरी साब ने सीनियरटी का उल्लंघन नहीं किया। हां, तिलकराम की ईमानदारी से इतने प्रभावित थे कि जब भी वे मिलने आते, चौधरी साब अन्य कागजातों को देखने में व्यस्त होते हुए भी उन्हें सरका देते और पूछते, ''कहो, सब ठीक तो है?''

संविद सरकार ने 19सूत्री कार्यक्रम तैयार किया था। प्राथमिकता के आधार पर एक एक कार्यक्रम को पूरा करना था। चौधरी साब ने मंत्री मंडल की अध्यक्षता करते हुए शुरूआत में ही कहा था, ''अपनी इस टीम को काम करके दिखाना है। जनता हम से बहुत अपेक्षाएं रखती है। अब परिवर्तन का दौर शुरू करना होगा। गरीबी के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति पर नजर रखनी होगी।''

और तब साढे 6 एकड़ तक की जोत पर आधा लगान कर दिया गया था। दो रुपये तक का लगान बिल्कुल माफ कर दिया था। कुटीर उद्योग तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि करने के लिए ऋण देने के तरीके सुगम बनाये गये थे। किसानों की उपज का लाभकारी मूल्य दिलाने के लिए महत्वपूर्ण आदेश जारी किए गए। भूमि भवन कर समाप्त कर दिया गया। सरकारी कामकाज में हिन्दी का शत-प्रतिशत प्रयोग शुरू किया गया। 23 उर्दूबहुल तहसीलों में सरकारी गजट उर्दू में उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई।

एक और रोचक आदेश जारी किया गया। आज तक भी कुछ लोग चौधरी साब को जातिवादी कहने से नहीं बाज आते। मुख्यमंत्री बनते ही इस जातिवादी ने एक आदेश जारी किया था-जो भी शिक्षण संस्थाएं किसी जाति-सूचक नाम से चलेंगी, उन्हें सरकारी सहायता नहीं दी जायेगी। तब रातोंरात व्यवस्थापकों ने जाति सूचक नाम पट्ट हटा लिये थे। दूसरे नाम अंकित किये गये। यह भी आदेश थे कि संस्थाएं खिलाड़ियों और बुद्धिमान विद्यार्थियों को प्रवेश में प्राथमिकता देंगी।

अपने मंत्रीमंडल सहयोगियों का आह्वान किया, ''अपनी नीतियां लागू हों, प्रशासनिक सुधार तेजी से हो, इसके लिए काम में जुट जायें।''

अखबारों में इस सरकार के प्रति उत्साह के समाचार नित्य छपते। दूर-दराज के क्षेत्रों के पाठकों के पत्र छपते। एक सप्ताह तक गांवों में नाच-गाने के उत्सव चलते रहे थे। मित्रों ने एक दूसरे के घरों में मिठाइयां पहुंचाई। मंदिरों-मस्जिदों में घी के दिये जलाकर सरकार के प्रति दुआएं मांगी गई। ऐसे समाचार भी छपे कि जिस दिन चौधरी साब मुख्यमंत्री बने, उस दिन रिक्शेवालों में से कइयों ने सवारियों से पैसे नहीं लिये। इस परिवर्तन की खुशी का कोई अन्त नहीं था।

ऐसी खबरें अन्य राज्यों में कौतुहल से पढी जाती। राजधानी में बैठे पत्रकारों को विश्वास नहीं हो रहा था। तब अप्रेल के अंत में नई दिल्ली से प्रकाशित साप्ताहिक 'दिनमान' के दो संवाददाता लखनऊ इस युग पुरुष से मिलने चल पड़े। वे कार द्वारा लखनऊ गये। रास्ते में उन्होंने जगह जगह रुककर जनता की प्रतिक्रिया जाननी चाही। क्या गांव, क्या शहर, क्या अमीर, क्या गरीब, सभी बेहद प्रसन्न थे। जो एक बात सबके मुंह से सुनी, वह थी चौधरी साब की ईमानदारी और कुशल प्रशासन। पूछने पर खुशी से लोग कहते-"चौधरी जैसा आदमी मिलेगा नहीं। ईमानदारी में तो दुनियां में नहीं।"

वे संवाददाताओं को अपनी खुशी कैसे प्रकट करें, समझ नहीं पा रहे थे। संवाददाताओं ने कई जगहों पर देखा कि रिक्शेवालों ने, छोटी मोटी दुकान वालों ने चौधरी साब की, अपने मुख्यमंत्री की, अखबारों से तस्वीर काटकर चिपका रखी थी। मानों यह तस्वीर ही उनकी रक्षा करेगी। यह एक अलौकिक मर्मस्पर्शी श्रद्धा थी जिसका कोई मुकाबला नहीं था।

उस दिन रविवार था। पत्रकार घर पहुंचे तो पता लगा कि चौधरी सचिवालय गये हुए हैं। पूरा सचिवालय बन्द था। गहरा सन्नाटा था। लेकिन मुख्यमंत्री का दफ्तर खुला था। रात के नौ बज रहे थे। चौधरी साब सुबह से ही दफ्तर में बैठे काम कर रहे थे। जब पत्रकार पहुंचे, वे थके से लग रहे थे। पत्रकारों से बातचीत करते समय थकी आंखों में चमक थी।

बातचीत का सिलसिला शुरू करते हुए 'दिनमान' प्रतिनिधि ने कहा "आपने पूरे प्रान्त में ईमानदारी की धाक जमा दी है, चौधरी साब! हमने देखाहै कि जनता आपसे पूर्णतया संतुष्ट है। क्या आप भी मंत्रियों के काम से संतुष्ट हैं?"

चौधरी साब मुस्कराये। थकी सी आवाज में बोले, "भाई, कैसे कहूं कि संतुष्ट हूं और कैसे कहूं कि संतुष्ट नहीं हूं। आखिर सब मेरे ही तो हैं और सबकी जिम्मेदारी भी मुझ पर है। करने वाले के लिए काम की कमी नहीं है। उसका न कोई अंत है और न होगा। मुझे तो संतोष काम करते रहने से होता है, वह मैं कर रहा हूं।" कहकर उन्होंने कुर्सी का सहारा लिया। उनकी आंखें एक क्षण के लिए बन्द हुई जैसे वे कुछ राहत पाना चाहते हों।

संवाददाता ने पूछा, "आप नया क्या कुछ करना चाहते हैं?"

चौधरी साब समझाने के तरीके से बोले, "मेरा आग्रह तीन बातों पर है-जनता को पूरा पूरा इन्साफ मिले, भ्रष्टाचार बन्द हो और हुकुमत करने वालों पर जनता का पूरा पूरा भरोसा रहे।"

वे थोड़ा रुके। अपने शरीर को फिर पीछे कुर्सी पर टिकाया। आंखों को बन्द करते हुए धीरे से बोले, "यदि जनता को भरोसा हो कि उसे इन्साफ मिल रहा है तो बिना रोटी के भी उसका काम चल सकता है।"

वे फिर सीधे बैठे-"मैं यह बात ऐसे ही नहीं कर रहा हूं। मेरे सामने कन्फूशस की यह बात हमेशा रहती है। उनसे किसी ने पूछा कि देश को चलाने के लिए किन चीजों की आवश्यकता होती है। कन्फूशस ने उत्तर दिया था-पर्याप्त संख्या में सैन्य शक्ति, पर्याप्त संख्या में खाना और सरकार पर पूरा भरोसा।'

जब उनसे पूछा गया कि यदि तीनों में से किसी एक को छोड़ना हो तो आप किसे सबसे पहले छोड़ेंगे। उत्तर मिला-सैन्य शक्ति को।

और यदि अंतिम दो में से एक को छोड़ना पड़े तो? उत्तर था-खाना छोड़ा जा सकता है। लेकिन बिना सरकार में भरोसा हुए देश नहीं चल सकता। हमने कांग्रेस इसलिए छोड़ी थी कि लोगों का सरकार पर से भरोसा उठता जा रहा था। आज हमारी सबसे पहले कोशिश यही है कि लोगों को सरकार पर भरोसा हो।"

संवाददाता ने पूछा, "आपने कई बार कहा है कि आपकी पहली लड़ाई गरीबी से होगी। क्या आप इस लड़ाई में अपने मंत्रीमंडल के विभिन्न राजनैतिक दलों के साथ सैद्धान्तिक स्तर पर कोई रास्ता अपना सके हैं?"

चौधरी साब ने उत्तर दिया, ''गरीबी से लड़ाई यानी खेती के मोर्चे पर पूरी तरह आत्म निर्भर होना। तीन साल में हमें खाद्य उत्पादन संतोषजनक करना है। इसके लिए आवश्यक है, सिंचाई की सुविधाएं, खाद और किसानों के लिए खेती की सभी जरूरतें पूरी करना। इसमें सिद्धान्त की बात कहां आती है? ये सब नारे हैं। हमारा मुल्क नारों पर चल रहा है। राजनैतिक दलों ने समस्या का अध्ययन करने की आदत छोड़ दी है। कांग्रेस भी नारे लगा रही है। लेकिन सब व्यर्थ है। मुझे काम करना है। सत्ता से मोह नहीं है।''

संवाददाता ने अगला प्रश्न किया, ''भ्रष्टाचार उन्मूलन के लिए आप पुलिस का उपयोग कर रहे हैं, लेकिन पुलिस कैसी है, आप जानते हैं।''

''हम तहकीकात सतर्कता विभाग वालों से कराते हैं। न्यायाधीशों से फैसला कराते हैं। चोरी छिपे माल लाना-ले जाना रोकने के लिए हमने 87 चौकियां बनाई हैं। हमारे अधिकारी वेश बदलकर घूमते हैं और कर्मचारियों की परीक्षा लेते हैं। इस सख्ती का परिणाम अच्छा हुआ है।''

वे थोड़ी देर चुप रहे। सामने टंगी गांधीजी की तस्वीर को देखते रहे। फिर बोले, ''देश को कामचोरी, बेईमानी और जातिवाद खाये जा रहा है। राजनैतिक संरक्षण ही भ्रष्टाचार की जड़ है। मैंने तो मौजूदा सौ रुपये के नोट का चलन बन्द करके उन्हें बैंक में लौटाने की योजना बनाकर दी थी। इससे चोर बाजारी से कमाया हुआ धन पकड़ में आ जाता। बेईमान और ईमानदार का भेद अपने आप खुल जाता। लेकिन वह योजना मंजूर ही नहीं हुई। खटाई में पड़ी है।''

बातचीत करते हुए रात के साढे दस बज चुके थे। इसी बीच घर से दो बार खाने के लिए फोन आ चुके थे। संवाददाता इस पैंसठ साल के समर्पित योद्धा को देखकर हैरान थे। वे मन ही मन नतमस्तक थे। चौधरी साब ने उन्हें चाय बिस्कुट का नाश्ता कराया। उनकी सहजता, सादगी, कर्मठता और दृढ़ता देख चौधरी साब का वह रूप धुंधला पड़ गया जो कथित विशिष्ट पत्रकारों ने उनके मन में बैठा दिया था।

ऊपर चौधरी साब ने जिस योजना का जिक्र किया है, वह 1967 के चुनावों के कुछ ही पूर्व केन्द्रीय सरकार और समस्त राज्यों के मुख्य मंत्रियों को भेजी थी। मुद्रा प्रसार बहुत बढ़ गया था। महंगाई, जमाखोरी और कालाबाजारी का बोलबाला था। काले धन को वे इस बीमारी की जड़ मानते थे। इससे न तो उद्योग स्थापित हो सकते थे और न ही उत्पादन की किसी सुनिश्चित जरिये में उसका निवेश हो सकता था। यही करों की चोरी का साधन भी है। उन्होंने आंकड़े और उदाहरण देकर इसे सिद्ध किया। काले धन को निकालने का उन्होंने तरीका समझाया, ''प्रत्येक मूल्य के नोटों को फिलहाल मौजूदा नोटों से अलग रंगों में सरकार मुद्रित करे और इन नये नोटों से पुराने को बदलने के लिए छ महिने से लेकर साल भर तक का समय दिया जाये। निर्धारित तिथि के बाद पुराने सभी नोट अपने आप विमुद्रित हो जायेंगे, क्योंकि उनका कोई मूल्य ही नहीं रह जायेगा''

लेकिन केन्द्रीय सरकार को न मानना था, न मानी।

4.

मुख्यमंत्री बनने के बाद भी, न उनके रहन सहन में अंतर आया, न आचार-व्यवहार में। उस दिन वे सुबह सेव बना रहे थे। कहीं से टेलीफोन की घंटी आई। सुरक्षा अधिकारी ने फोन उठा लिया। चौधरी साब ने उसे कहते सुना, ''मुख्यमंत्री जी बाथरूप में हैं,'' और फोन रख दिया।

उन्होंने सुरक्षा अधिकारी को बुलाकर पूछा, ''मैं क्या कर रहा हूं?''

''आप सेव बना रहे हैं सर।''

"तब यह क्यों कहा, कि मैं बाथरूम में हूं।"

"लेकिन यह तो सही है कि आप इस वक्त बात नहीं कर सकते थे।"

"तो यही कहते कि वे यहां हैं लेकिन अभी आप से बात नहीं हो सकती। कृपया 10 या 15 मिनट बाद आप पुनः घंटी करें। कभी झूठ मत बोलो।"

आज के उन झुठे नेताओं से क्या तुलना की जाये जो टालने के लिए कहलवा देते हैं कि साहब बाथरूम में हैं।

टेलीफोन की चर्चा चली है तो एक दिलचस्प उदाहरण और है। जो भी फोन राजनैतिक या निजी उद्देश्य के लिए घर से किया जाता तो उसका भुगतान 34, माल एवेन्यू चौधरी चरणसिंह के निजी खाते से किया जाता। बाहर किसी निजी उत्सव में चौधरी साब सम्मिलित होते तो पेट्रोल आदि का खर्चा चौधरी चरणसिंह ही वहन करते न कि मुख्यमंत्री चरणसिंह। तब प्राचीन कथाओं के वे चरित्र एकाएक ही याद हो आते हैं कि अमुक बादशाह सरकारी कार्य करता तो सरकारी तेल से रोशनी करता और बाकी समय में निजी खर्चे से रोशनी करता। इस देश की दंभी मीडिया और कथित बुद्धिजीवियों ने कभी नहीं लिखा कि बींसवीं सदी में भी यू. पी. में मुख्यमंत्री चौधरी चरणसिंह ऐसा करते थे।

इस आदर्श की चोट गायत्री देवी को सहनी पड़ती। घर का खर्चा चलाने में उन्हें भारी कठिनाई होती। इस कारण दूसरे खर्चों पर भारी कटौति की जाती। इसमें कपड़ों का खर्चा पहले नम्बर पर था।

एक अवसर पर, स्नान करने के बाद, चौधरी साब ने धोती बदलनी चाही तो देखा कि धोती फटी हुई है। उन्होंने गायत्री देवी को दिखाते हुए व्यंग्य से पूछा, "क्या यही धोती पहनकर सचिवालय जाऊं?" उन्हें बहुत झुंझलाहट हुई और तब धोती के दो टुकड़े कर दिये। ईमानदार व्यक्ति को निश्चित ही भुगतना पड़ेगा-कष्ट, कष्ट और बहुत कष्ट। ऐसी अनेक उनके चरित्र की विशेषताएं हैं जो किसी अन्य में ढूंढे नहीं मिलेंगी। बल्कि आजकल तो नेताओं की ऐय्याशी की वस्तुएं बाहर से आने लगी हैं। उन्हें चोरी छुपे लाने में भी झिझक नहीं। तब क्या यह कल्पना करना मुश्किल है कि क्यों चौधरी साब के विरुद्ध नेताओं का जमघट रहा। कहने वाले तभी उन्हें सफल राजनीतिज्ञ नहीं मानते। अजीब विडम्बना है कि ऐसा जीवन जीने वाले व्यक्ति को ही अति आधुनिक लोगों ने कुलाक्स की संज्ञा दी थी।

यहीं, टेलीफोन सम्बन्धी उनकी हिदायत की चर्चा भी अप्रासंगिक नहीं होगी। उनका कहना था कि फोन मुझे तभी दिया जाये, जब अगला व्यक्ति रिसीवर उठा ले। लेकिन अतिविशिष्ट व्यक्ति और डाक्टरों को फोन करना हो तो यह आवश्यक नहीं है। क्योंकि उनके पास समय का अभाव रहता है।

जब भी कोई मंत्री एक विभाग से बदला जाता है या हटाया जाता है तो पुरानी व्यक्तिगत और राजनैतिक फाइलें अपने साथ ले जाता है। टी. ए. बिल, खर्चे की रसीदें आदि या तो जला दी जाती हैं या घर पहुंचादी जाती हैं। उनकी एक टी. ए. बिल की फाइल थी जिसमें आटा, दाल, चीनी, सब्जी, दूध, कोयला, चाय, बिस्कुट आदि का खर्चा शामिल था। यह सब कुल मिलाकर 15-20 रुपये बनते थे। यह तब होता जब वे सर्किट हाऊस में रुकते थे। उल्लेखनीय है कि मंत्री जब टूर पर होते तो उन्हें जेब खर्चे के पैसे मिलते थे, जिसकी कोई सीमा नहीं होती थी। दूसरे मंत्री उस समय भी 100 रुपये से अधिक रोजाना का खर्चा वसूल करते थे।

जब चौधरी साब की टी. ए. की फाईल सामने आयी तो उन्होंने निजी सचिव से कहा, "इसकी क्या आवश्यकता है। इसे रद्दी में डाल दो।"

"ऐसा न करें सर।" निजी सचिव ने सलाह दी।

"क्यों, अब इसकी क्या उपयोगिता है?" चौधरी साब ने पूछा।

"सर, भविष्य में कोई मंत्री इस विभाग में आयेगा तो देखेगा कि जेब खर्च में यह सब खर्च

आया है, जिसे कोई नहीं दिखाता।'' सुनकर वे चुप हो गये।

आजकल तो सुना जाता है कि मंत्री लोग पानी की बोतल भी साथ लेकर चलते हैं। गांव के पानी को वे पीने लायक भी नहीं मानते। अभी पिछले दिनों ही बिहार के गरीब मुख्यमंत्री ने एक रसोइये द्वारा जली रोटी देने पर इन्चार्ज को निलम्बित कर दिया था।

एक दिलचस्प अंतर और है, जो चौधरी साब को सब नेताओं से अलग करता है। वे मुख्यमंत्री ही नहीं, मंत्री थे तब भी सरकारी ताम झाम में कटौति करने के पक्ष में थे। इसे कराया भी। अब तो भते बढाने के नाम पर सब नेता आश्चर्यजनक रूप से एक हो जाते हैं। ऐसे जन प्रतिनिधियों से गरीब जनता क्या आशा रख सकती है?

5.

यू. पी. में ही नहीं, सारे भारत में उस समय परिवर्तन की लहर चल पड़ी थी। अनेक राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारें बन चुकी थी। चौधरी साब मात्र सता परिवर्तन के पक्ष में न थे। व्यवस्था में परिवर्तन होना चाहिए। इसके लिए वे सही दिशा की तलाश में थे। जनता को लगना चाहिए कि वास्तव में परिवर्तन हुआ है। रात दिन कार्य में व्यस्त रहते। यह अन्य मंत्रियों के लिए अनुकरणीय था। कल तक सड़कों पर नारेबाजी करने वाले लोगों में से अब मंत्री जैसे जिम्मेदार पद पर थे। चौधरी साब नई डगर पर चलने के लिए इस टीम को तैयार कर रहे थे। कांग्रेस का विकल्प तैयार करने की दृढ़ इच्छा थी। कांग्रेस चापलूसों और विदुषकों की जमात बन चुकी थी। जनता के प्रति जवाबदारी कोई नहीं समझ रहा था। चरणसिंह जैसे आत्म सम्मानी व्यक्ति के लिए वहां रुकना संभव ही नहीं था। इसलिए इस ढर्रे से अलग, एक सशक्त राजनैतिक विकल्प की खोज में थे। गैर कांग्रेसी मुख्यमंत्रियों से उन्होंने सम्पर्क किया। अपने रेवेन्यू मंत्री उदित नारायण शर्मा को दक्षिण भारत के दौरे पर भेजा। मद्रास, बंबई, कलकत्ता, पटना आदि राजधानियों में चौधरी साब के सम्पर्क बने। तब एक सशक्त विकल्प की योजना बनी।

चौधरी साब ने कांग्रेस से अलग होकर जन कांग्रेस पार्टी बनाई थी। यह इस बात का साक्षी है कि उनके मन में उस समय तक कांग्रेस के प्रति मोह था। कांग्रेस छोड़ते संकोच था। लेकिन अब वैसी बात नहीं थी। तभी पटना में मई, 67 में कांग्रेस विरोधी नेता जुड़े। नई पार्टी भारतीय क्रांति दल (बी. के. डी.) की स्थापना हुई। बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री महामाया प्रसाद सिन्हा को अध्यक्ष चुना गया।

इसके पूर्व प्रो. हुमायूं कबीर ने अप्रेल 67 मे सभी कांग्रेस विरोधी मुख्यमंत्रियों की बैठक दिल्ली में बुलाई थी। एक सशक्त पार्टी की स्थापना पर गंभीर विचार हुआ था। लेकिन पटना में हुमायूं कबीर आश्चर्यजनक रूप से अलग हट गये। उन्हें कई बार निमंत्रित भी किया गया लेकिन वे अनुपस्थित ही रहे। शायद उनके मन में कहीं यह बैठ गया कि उन्हें अध्यक्ष नहीं बनाया जायेगा। बी. के. डी. से यू. पी., बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा, हरियाणा, दिल्ली आदि जुड़ चुके थे। पश्चिमी बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडू आदि प्रान्तों में अच्छे सम्पर्कसूत्र बन चुके थे। देश में पहली बार एक सशक्त विकल्प के आसार बन चुके थे। यही कारण था कि बाद में जब दिसम्बर 1967 में जयपुर में बी. के. डी. की कार्यकारिणी की बैठक हुई तो सभी प्रान्तों में कार्य समिति का गठन किया गया। चुनाव चिन्ह हल जोतता किसान तैय किया गया।

तब चौधरी चरणसिंह का कार्य बहुत बढ गया था। कार्य करने में मानों वे स्वयं को भी भूल जाते। पूरे प्रान्त से उन्हें दौरा करने के निमंत्रण मिलते रहते। एक बार फिर उनके तूफानी दौरे शुरू

हो गये। अन्य प्रान्तों और दिल्ली आना जाना बढ गया। जैसे जैसे कार्य बढ़ता गया, चौधरी साब की क्षमता बढती गई। बीमारी के मानों वे हाथ नहीं लग रहे थे। और यह व्यस्तता अन्य सहयोगी दलों के लिए ईर्ष्या बन गई।

एक सशक्त पार्टी बनाने की उनकी दृढ़ इच्छा से सभी सहयोगी चौंक उठे। यू. पी. की सीमाओं को लांघना उन्हें अप्रिय लग रहा था। कांग्रेस तो परेशान थी ही, संविद के घटक दल भी मचल उठे थे। लोकसभा में उन पर आरोपों की बौछार लग गई। यू. पी. का मुख्यमंत्री संसद के केन्द्रीय हॉल में खटकने लगा। तब एक अति उत्साही कांग्रेसी नेता ने लोकसभा में आरोप लगाया, "चौधरी चरणसिंह बड़े जमींदारों के हिमायती हैं क्योंकि स्वयं उनके पास बहुत जमीन है।"

बागपत से तत्कालीन सांसद रघुवीर सिंह शास्त्री ने चौधरी साब को पत्र लिखा, "आप पर कांग्रेस ने यह आरोप लगाया है। कृपया मार्ग दर्शन देवें कि इसका क्या उत्तर दिया जाये।"

तब उत्तर दिया चौधरी साब ने। उन्होंने शास्त्री को पत्र लिखा जो निम्न प्रकार था-

"चरणसिंह
मुख्यमंत्री

विधान भवन, लखनऊ
12 अगस्त, 1967

प्रिय शास्त्रीजी,

आपका पत्र मिला।

पिताजी के पास कुल 21 एक़ड़ जमीन थी। उनके देहांत के बाद हम तीन भाइयों में सात-सात एकड़ बंट गई। मेरे छोटे भाई ने मेरी ओर से उसको बेच दिया है। सम्भव है एक-आध एकड़ बची हो, जिसका मुझको कोई ज्ञान नहीं है।

सप्रेम
आपका चरणसिंह"

तीन पंक्तियों के इस उत्तर ने सैकड़ों पृष्ठों की बकवास का मुंह बंद कर दिया। सफेद झूठ बोलने वालों के पास इसका कोई जबाब नहीं था। सचमुच दातों तले अंगुली दबाने का अवसर था। क्या एक मुख्यमंत्री, जो किसान है, उसके पास कोई जमीन का टुकड़ा नहीं। उन्हें नहीं मालूम था कि चरणसिंह इस राजनीति के संत हैं। यदि धन इकट्ठा। किया तो कबीर अन्दर से भाग नहीं जायेगा? तब उस फक्कड़ का अक्खड़पन कहां रहेगा?

लेकिन वे जनता की नजरों में लोकप्रियता की शिखर पर थे। इससे विरोधियों की बौखलाहट बढ गई। तब निर्लज्जता से उनके विरुद्ध जातिवाद के आरोप लगाये जाने लगे। इनके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता कहां थी? बस एक रट चारों ओर से शुरू हो गई।

उन्हीं दिनों मथुरा जिले के एक गांव में पुलिस गोली बारी हुई थी। जाट और खटीकों में फौजदारी हो गई। वास्तव में उस गांव के ही एक खटीक जाति के विधायक ने इस मामले को उकसाया था। यह फाइल चौधरी साब के सामने आई तो नोट लिखा, "मुकदमा वापस न लिया जाये। जाट लोगों ने कानून के खिलाफवर्जी की है तो उनको सजा अवश्य मिलनी चाहिए।

पुलिस अधीक्षक की यह राय कि जाट लोगों ने सिर इसलिए उठाया है कि अभी थोड़े दिनों से वे लोग कुछ मालदार हो गये हैं, जिम्मेदार अधिकारियों का ऐसा दृष्टिकोण कुछ उचित नहीं लगता है।

जाट लोगों ने कानून हाथ में लिया था, यदि मजिस्ट्रेट की रिपोर्ट सही है तो यह जुर्म को कम करने वाला तथ्य नहीं है। किसी अुभवी एवं निष्पक्ष सी. आई. डी. अधिकारी से जांच करा ली जाये। देखना है कि जाट व लड़की का पाणिग्रहण संस्कार एक रोज पहले हो गया था या नहीं। जिस समय की घटना है, उससे पहले करणसिंह का निधन हो गया या नहीं? यह भी देखना है कि क्या ऐसा रिवाज है कि जिस लड़की की लगन भेजी जा चुकी है, उसके घर के सामने किसी

दूसरे लड़के की बारात, जब तक उसका विवाह न हो जाये, निकाली न जाये। यह भी देख लें कि इस कांड में विधायक अम्बेश का हाथ रहा है या नहीं?

इस फाइल को गृह मंत्रालय में विलम्ब किया गया है। इसमें गफलत क्यों हुई? हमारी कौम एक निकम्मों की कौम होती जा रही है। यहां परिश्रम करना सभी ने छोड़ दिया है। मैं आशा करता हूं कि गृह सचिव अपने सचिवालय की कार्य क्षमता बढ़ाने का भरसक यत्न करेंगे।

-चरणसिंह

मुख्यमंत्री

3.10.67

ऐसी टिप्पणी चौधरी साब की ही हो सकती थी। यह टिप्पणी पाठक को उस समय की सारी परिस्थितियों की जानकारी दे देती है। पूरा घटना चक्र सामने उतर आता है। साथ ही नौकरशाही और पुलिस की मानसिकता का आभास भी देती है। चौधरी साब ने बिना मांग सी. आई. डी. जांच करवाई।

तब सी. आई. डी. द्वारा जांचकर निम्न निष्कर्ष निकाले गये-

(1) यह पता नहीं लग सका कि जाटव लड़की की शादि 12 जून को हो गई थी।

(2) यह सही है कि कर्ण सिंह नामक बालक की मृत्यु 13 जून की घटना से पहले हो चुकी थी जो ग्यारह वर्ष का था।

(3) खटीक जोरावर की लड़की की शादी 12 जून को थी।

(4) यह परिपाटी है कि जब किसी लड़की का लगन भेजा जा चुका हो तो उसके घर के सामने से दूसरी बारात नहीं निकलेगी।

(5) श्री छत्रपति अम्बेश, विधायक को रिवाज का पता था किन्तु उसने इसे तोड़ने का प्रयास किया।

उपरोक्त घटना इस बात का प्रमाण है कि वास्तव में लड़ाई खटीक जाति के विधायक और जाटवों के बीच थी। गांव के रिवाज के अनुसार जाटों ने जाटवों की सहायता की तथा विधायक की मनमर्जी की खिलाफत की। तब इसे जाटों की गुंडागर्दी बता दिया गया। नौकरशाही ने इसे उछालने का प्रयास किया था। इसे ही जातियता का रंग दे दिया गया।

असलियत यहथी कि कानून व्यवस्था जैसी उत्तर प्रदेश में ठीक थी, वैसी कहीं नहीं थी। प्रशासन पर तीखी नजर चौधरी साब की कितनी थी, यह उपरोक्त टिप्पणी के अंतिम पैरा से जाहिर है। यह आम धारणा बन गई थी कि चौधरी साब वेश बदलकर रात के अंधेरे में घूमते हैं। अफसरों की परीक्षा लेते हैं। यह इसलिए भी पुख्ता हो गई कि उन्होंने अधिकारियों को निर्देश दिये थे कि वे स्वयं वेश बदलकर अधीनस्थ अधिकारियों की चौकसी परखें। तब यह धारणा बन गी थी कि बड़े अधिकारी भी चौधरी साब की चपेट में आ सकते हैं।

बैठे ठाले रिक्शा वाले बतियाते-"क्यों भैया, अपने चौधरी रात को लाठी लेते हैं या वही छड़ी रखते हैं?"

दूसरा अनभिज्ञता जाहिर करता। फिर पूछता "लेकिन भैया, अंधेरी रात में इस उम्र में कैसे चलता होगा?"

"अरे, साथ में कोई तो रहता होगा।"

और इन किंवदंतियों का अन्त नहीं था। ऐसी धारणा बन गई थी कि न मालूम मुख्यमंत्री कब कहां छापा मार दें। नौकरशाही में ऐसा भय पहले कभी नहीं देखा गया था।

यह भी तब था, जब वे बिल्कुल नई टीम के साथ कार्य कर रहे थे। नौ सखिये मंत्रियों के कारनामें आये दिन अखबारों में छपते रहते। लेकिन किसी सहयोगी के अच्छे कार्य से वे प्रसन्न भी बहुत होते। कनिष्ठ मंत्रिों का हौसला बढाते।

मधुकर दीघे उस समय सरकारी पक्ष के मुख्य सचेतक थे। वे भाषण तो अच्छा देते लेकिन

कई बार भूल जाते कि वे स्वयं सरकार के अंग हैं। सरकार की ही आलोचना कर बैठते। ऐसे ही एक अवसर पर चौधरी साब ने उन्हें अपने पास बुलाया-''भाई, तुम्हें विरोध करने की आदत पड़ी हुई है। तुम भूल जाते हो कि तुम स्वयं सरकार के अंग हो।''

किसी मंत्री द्वारा बार बार अनावश्यक बोलने से उन्हें झुंझलाहट होती। कभी कभी नाराज होकर डांट भी पिला दिया करते। क्षण भर बाद ठंडे हो उसे तरीका समझाते-ऐसा करना चाहिए था। सम्बन्धित मंत्री या विधायक अपनी गलती स्वीकार कर लेता तो वे मुस्करा देते ''ठीक है भविष्य में ध्यान रखना।''

संविद सचमुच एक संयुक्त परिवार था। मुखिया चौधरी साब उसके बुजुर्ग थे। इसलिए अन्य सहयोगी स्वतंत्र और मुंह फट बन जाते। ऐसे जिम्मेदारी से मुक्त परिवार का बोझ अकेले चौधरी साब को झेलना पड़ता।

उन्हीं दिनों उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जिले में एक घटना हो गई थी। एक महिला की हत्या करके उसे कुए में लटका दिया गया था। घटना के पीछे जमींदार कांग्रेसियों का हाथ था। पुलिस प्रशासन अपराधियों पर हाथ डालने में संकोच कर रहा था। तब मुख्य सचेतक मधुकर दीघे ने गृहमंत्रालय की कड़ी आलोचना कर दी। चौधरी साब के पास ही गृह मंत्रालय था। उन्होंने कड़ी निगाह से मधुकर दीघे की ओर देखा। उनकी भृकुटी तनी हुई थी। विधान सभा में बोलते हुए उन्होंने जवाब दे दिया, ''वस्तु स्थिति की जानकारी लेने के बाद ही सरकार किसी निर्णय पर पहुंचेगी।''

इसके बाद वे दूसरे प्रश्न का उत्तर देने लगे। सचेतक दीघे के क्रोध का अंत नहीं था कि यह सरकार भी कांग्रेस के ढर्रे पर ही चल रही है।

कुछ समय बाद मुख्यमंत्री चरणसिंह ने अपने कक्ष में मधुकर दीघे को बुलाया। दीघे को विश्वास था कि अब चौधरी साब डांटेंगे। सबके सामने सरकार की आलोचना। ज्यों ही मधुकर ने प्रवेश किया, देखा, मुख्यमंत्री के पास मुख्य सचिव और गृह सचिव बैठे हैं। चौधरी साब ने दोनों सचिवों को सम्बोधित करते हुए कहा, ''यह दीघे संविद का सचेतक है। नया है परन्तु अच्छा विधायक है। इससे और जानकारी लेलो और कल मुझे पूरे ब्यौरे के साथ अवगत करा दो।''

दूसरे दिन विधानसभा में बगैर किसी का नाम लिये चौधरी साब ने सूचना दी, ''जिले के जिलाधिकारी और पुलिस अधीक्षक को 24 घंटे के अंदर बुला लिया गया है और आवश्यक कार्यवाही की जा रही है।''

दूसरे ही दिन ज्ञात हुआ कि उन अधिकारियों का तबादला हो गया है। तब पूरा सदन चौधरी साब की प्रभावशाली कार्यशैली एवं कुशल प्रशासक की दृढ़ता का लोहा मान गया। अखबारों में तारीफ के पुल बांध दिये गये थे। बेईमान और निकम्में अधिकारी ऐसे वाकये सुनकर कांपते थे।

सही बात यदि विपक्षी सदस्य भी कहता तो वे अवश्य मानते। 1966 में, जब वे स्वायत शासन मंत्री थे, कानपुर में आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव था। चौधरी साब को मुख्य अतिथि बनाया गया था। कानपुर आर्य समाज का अध्यक्ष जनसंघ का पार्षद था। कानपुर के कांग्रेसी नेताओं को यह बुरा लगा। एक ने निष्ठावान का परिचय देते हुए चौधरी साब को फोन किया, ''आप इस जनसंघी कार्यक्रम में न आयें, यही कांग्रेस पार्टी के हित में होगा।''

''अच्छा?'' आप की उम्र क्या है भाई?'' चौधरी साब ने पछा।

''तीस साल है सर!''

सुनकर उनकी आवाज तेज हो गई।''जितनी तुम्हारी उम्र है, उतने दिनों से मैं राजनीति कर रहा हूं। मैं किसी राजनीतिक सम्मेलन में नहीं आ रहा हूं। यह कोई आवश्यक नहीं कि कानपुर के आर्य-समाजियों का राजनैतिक दृष्टिकोण मेरे से मेल खाये। तुम धर्म को राजनीति में मत घसीटो।''

इतना ही काफी नहीं था। जैसा कि वे बार बार कहते, मेरे पेट में कुछ रहता नहीं है भाई।

"इस बात की चर्चा उन्होंने आम सभा में भी कर दी। तब उपस्थित जन समूह देर तक तालियाँ बजाता रहा। इन्होंने यह भी कहा, "देश सेवा के क्षेत्र में आने के लिए आर्य समाज मेरा प्रथम सोपान है। आर्य समाज मेरी मां है, महर्षि दयानन्द मेरे गुरू हैं।"

कानपुर के फूल बाग में एकत्रित लाखों के जन समूह ने इस स्पष्टवादिता पर पुनः तालियों की गड़गड़ाहट मचा दी।

बाद में जब बी. के. डी. विरोध पक्ष में थी, सदन में उनके एक विधायक ने सतापक्ष की ओर जूता फेंक दिया था। यह चौधरी साब को बहुत अशोभनीय लगा। बाद में जब वे मुख्यमंत्री बने, उक्त विधायक को मंत्री मंडल में नहीं लिया। बावजूद इसके कि वह योग्य थे और अन्य लोगों की सिफारिश भी थी। जबकि हुड़दंग करने वालों को इंदिरा गांधी तो सबसे पहले मंत्री बनाती थी।

'मन चंगा तो कठौति में गंगा।" अपने मन में कोई फांस रखना उनके वश की बात नहीं थी। जनता पर अटूट विश्वास था। इसके लिए किसी तिकड़मबाजी की उन्हें आवश्यकता नहीं थी। जनता भी उन पर भरोसा रखती थी बहुत बाद में, 1982 में लोकदल के अनेक नेता उन्हें छोड़ छोड़ कर जा रहे थे। सभी लोगों को चिंता हो रही थी। इसी चिंता में एक दिन मुलायमसिंह यादव उनसे मिलने गये। देखा कि चौधरी साब घर के सदस्यों के साथ ताश खेल रहे हैं। बच्चों के साथ शरारत कर रहे हैं। वह चकित रह गये। बातचीत में मुलायन ने दल के प्रति चिंता प्रकट की। चौधरी साब ने हंस कर जबाब दिया, "घबराओ नहीं। जनता हमारे साथ है, क्योंकि जनता के साथ हम हैं।" यह था उनका जनता पर अडिग विश्वास। यही कारण था कि रूठ रूठकर जाने वाले नेता वापस चौधरी साब के पास आ गये। बहरहाल...

मुख्यमंत्री बनने के बाद, आम सभाओं में जनता उनकी एक झलक पाने को उत्सुक रहती। विशाल जन समुद्र हिलौरें लेने लग जाता। आमतौर पर इन सभाओं में चौधरी साब समझाते, "किसानों, अपने बेटों को खेती के सिवाय दूसरे पेशों में भी लगाओ। तब तक तुम्हारी तरक्की नहीं होगी, जब तक कि तुम्हारे लड़के खेती को छोड़कर दूसरे पेशों को नहीं अपनायेंगे। वह देश मालदार हैं, जहां किसान की तादाद सबसे कम है। अमेरिका में किसानों की तादाद कुल आबादी की सात प्रतिशत है। जिस देश में खेती पर लोगों का बोझ जितना ज्यादा होगा, वह देश उतना ही गरीब होगा।"

अपनी सभाओं में आम तौर पर यह अवश्य कहते, "किसानों, तुम्हारी एक आंख खेत की मेंड़ पर और एक आंख लखनऊ पर होना चाहिए। सरकार पर नजर नहीं रखोगे, तो यह सरकार भी तुम्हारा ध्यान नहीं रखेगी।" किसान तन्मय होकर उनकी बात सुनते। ऐसी बातें सुनकर किसान मुस्कराते, तालियां पीटते, 'चौधरी साब जिन्दाबाद' के नारे लगाते।

इन सभाओं का अन्त नहीं था। आये दिन लोगों का डेपूटेशन उन्हें आमंत्रित करने आता। "चौधरी साब हमारे क्षेत्र में एक बार अवश्य आयें। लोग बहुत इंतजार कर रहे हैं।"

चौधरी साब आंखें बंद करके मानो राहत अनुभव करते। और तब कहते, "आऊंगा भाई। सब जगह एक दिन में तो नहीं आ सकता। जिस बात की तनख्वाह लेता हूं, वह काम भी तो करना है। दिल्ली के भी चक्कर लगाने पड़ते हैं।" आने वाले क्या कहें? कितना काम है चौधरी को!

काम तो विपक्षी एकता का भी था। 1967 का दौर देश के इतिहास में अपना विशेष महत्व रखता है। एक ही पार्टी का समस्त देश पर वर्चस्व समाप्त हो चुका था। विपक्षी मुख्यमंत्री दिल्ली सेक्रेट्रियेट के चक्कर लगाने लगे। योजना आयोग के अफसरों और केन्द्रीय सचिवालय के अफसरों से चौधरी साब कहते सुने जाते, "जब तक किसान और गांव का भला नहीं होगा, देश का भला नहीं होगा। किसान को दुःखी करके हम महलों में चैन से नहीं बैठ सकते भाई! किसान ज्यादा नहीं मांगता। उसे रोटी, कपड़ा, मकान दे दो, बदले में वह देश को मालामाल कर देगा।"

अंग्रेजी संस्कृति में पले-बढे अधिकारियों के लिए यह एक नया अनुभव था। ये लोग सपनों का महल बनाने वाले थे। फाइलों को देखकर समस्या हल करने के आदी थे। तब चौधरी साब की बातें सुनकर उनका मूड ऑफ होता था। चौधरी साब की तिरछी नजरों का सामना करने से ये लोग कतराते थे। कई बार बहस में उलझकर ये टोकते, 'ऐसे कैसे हो सकता है, चौधरी साब!'

चौधरी साब क्षण भर के लिए इन मोटी तनख्वाह पाने वाले 'बूढे बच्चों' को घूरते। फिर संबन्धित मंत्री से कहते, "इनकी आदत बदलिये। गांव और गरीब हमेशा गरीब रहने के लिए अभिशप्त नहीं हैं। राष्ट्रीय चिंतन की मुख्य धारा में आओ। अभिजात्य और कुलीन वर्ग सिर्फ राज करे और बाकी शोषित रहें, ऐसा अब नहीं चलेगा। भारत नई दिल्ली में नहीं, गांवों में बसता है।"

रुष्ट होकर यही लोग बाद में प्रचार करते, "चौधरी जातिवादी है।"

ऐसी ही घटनाओं से उन्हें अनुभव हुआ कि कांग्रेस छोड़ कर उन्होंने कोई गल्ती नहीं की। कांग्रेस के मंत्री सब कुछ इन नौकरशाहों को सौंपकर आराम से बैठे हैं। वैसी कांग्रेस का फायदा? दिन प्रतिदिन सता में एक किस्म का 'ग्लेमर युग' आ गया था। लफ्फाजी और नारों से काम चलाया जा रहा था। तभी तो एक दिन दुखी होकर चौधरी साब ने साउथ ब्लाक में कहा था-"बताओ, किसानों की बात करने वाला है कोई कांग्रेस में?"

लेकिन चिंता किस को होती? नौकरशाह अपनी सुविधाओं से खुश और मंत्री अपनी कुर्सी से। चौधरी साब की यह तिलमिलाहट या बैचेनी, विकाश की गंगा गांवों की ओर मोड़ने के आग्रह को सभ्रान्तजनों और कुटिल नेताओं ने दूसरे ही रूप में प्रचारित किया। यह व्यक्ति अति महत्वाकांक्षी है, सबमें कमी निकालता है। सिर्फ गांवों की बात करता है। शहरों के विरुद्ध हैं, जातिवादी है। स्वयं सता की ऊंची कुर्सी पर बैठना चाहता है। इसी प्रचार के कारण वे आमजन के हीरो और बुद्धिजीवि वर्ग में खलनायक बनते गये।

किन्तु यू. पी. में कायापलट हो गया था। फिर भी चौधरी साब संतुष्ट नहीं थे। उस दिन एक उच्च अधिकारी मि. सुरेन्द्र तिवाड़ी मुख्य मंत्री चौधरी चरणसिंह के निवास पर पहुंचे। रात के ग्यारह बजे चौधरी साब अपने कमरे में अकेले बैठे थे। सहमते हुए तिवारी ने पूछा, "सर, आपको बूरा न लगे तो एक बात पूछूं।"

"बोलो!" चौधरी साब ने चिंतित मुद्रा में ही कहा।

"आज आप उदास नजर आ रहे हैं।"

वे थोड़ी देर जैसे कहीं खो गये। बाहर रात के साये में ताकने लगे। फिर बोले, "तिवारी, काश में दस साल और छोटा होता। तब मैं उन लोगों की सेवा और सक्रिय रूप से कर सकता था जो कष्ट में हैं और जिनकी सुनने वाला कोई नहीं है।"

तिवारी चकित हो उन्हें ताकने लगे। पता लगा कि उनके निवास पर रात दस बजे कोई बुढिया अपने गांव से आई थी। उसके साथ पुलिस ने ज्यादती की थी। उस समय से वे चिंता मग्न थे। किसी को कष्ट में देखकर अपनी उम्र से अधिक जवान बनने की प्रार्थना अपने आप में अजीब लग सकती है लेकिन यह चौधरी साब को समझने में सहायक हो सकती है। राजनीति में मोटी चमड़ी वाले होते हैं। चौधरी साब की आंखों में गरीबों के लिए आंसु देखकर ये लोग उन्हें क्या समझते होंगे? यही कि यह आदमी राजनीति में योग्य नहीं है।

कहा जाता है कि चौधरी साब सरकारी कर्मचारियों से कभी खुश नहीं रहे। मुख्यमंत्री से हटते ही बनारस की सभा में उन पर जूते-पत्थर भी फेंके गये थे। लेकिन इसके साथ ही एक बड़ा सच और भी है। लखनऊ की एक प्रतिष्ठा वाली सीट उन्होंने इस ऐलान के साथ जीती थी कि वे राज्य कर्मचारियों को और अधिक नहीं दे सकेंगे। दिलचस्प तथ्य है कि उन्हें उस हालत में भी यह कहने में संकोच नहीं हुआ जब कि वहां कर्मचारियों की संख्या मतदाताओं में आधी से अधिक थी। कर्मचारियों की प्रतिक्रिया थी, "चौधरी साब जो कहते हैं, वही उसका मतलब होता

है। जो करना है, वही कहते हैं।''

ऐसे कितने नेता हुए हैं इस देश में। क्या यह अजीब नहीं लगता कि 1979 में जब वे प्रधानमंत्री के रूप में चुनावी दौरा कर रहे थे, भाषण में कई जगह कहा, ''यदि लोकदल में उम्मीदवार बेईमान हैं, भ्रष्ट हैं, कामचोर हैं तो आप उन्हें वोट मत दीजिए!'' आज तो सफल नेता वह माना जाता है तो अपेक्षाकृत झूठा, भ्रष्ट और मक्कार हो।

उस दिन, मुख्यमंत्री चौधरी चरणसिंह के लॉन में भारी भीड़ थी। सब अपनी अपनी समस्याएं बता रहे थे। थोड़ी दूर दिल्ली से गये पत्रकारों की एक टोली बैठी थी। एक युवक बार बार आगे बढ चौधरी साब से कुछ कहना चाहता था किन्तु एन वक्त पर पीछे भी हट जाता था। चौधरी साब की नजर उस युवक पर पड़ गई। नाम लेकर उन्होंने पूछा, ''तूं मेरठ से इतनी दूर किसलिए आया भाई?''

''चौधरी साब आपके दर्शन करने चला आया।''

''यह सब छोड़, जो कहना है, बोल भाई।''

क्षण भर रुककर युवक बोला, ''शराब की दुकान नीलाम होने वाली है। यदि आप कह दें तो...''

सुनते ही चौधरी साब का चेहरा तमतमा उठा। फिर भी स्वयं पर काबू रखते हुए बोले, ''भले आदमी, तुझे और काम नहीं मिला। अब खेती-बाड़ी छोड़कर दलाली से पैसे कमायेगा? शराब और मुकदमें बाजी ने तुम लोगों का नाश कर डाला है। तूं मुझसे ही यह आशा करता है कि मैं तेरे लिए मौत का कुआ खोदने में तेरी मदद करूं?''

युवक का चेहरा उतर गया। वहां से उठना मुश्किल हो गया। आंख बचाकर उसने चौधरी साब के पैर छुए और गर्दन नीची किये खिसक लिया। तब ऐसे ही काम के लिए आने वाले लगभग दो दर्जन व्यक्ति उन्हें सिर्फ नमस्ते कहकर चल पड़े। जायज काम को वे हाथों हाथ निजी सचिव को नोट करने के लिए कहते। पत्रकारों ने देखा कि किसानों का एक दल उनसे मिलकर जाने लगा तो उन्होंने कहा, ''तुम लोग गांव देर से पहुंचोगे। खाना खाकर ही जाना।''

''नहीं चौधरी साब!'' सब एक साथ बोल उठे।

''ठीक है, तब चाय पीकर जाओ।'' उन्हें चाय पिलाकर ही जाने दिया।

6.

उस दिन वे बाहर गये हुए थे। विधान सभा का सत्र चल रहा था। साढे 6 एकड़ तक की जमीन पर आधा लगान करने का बिल पेश किया जाने वाला था। उनके पास समय नहीं था। रास्ते में ट्रेन से सफर करना था। इस अवसर का उन्होंने फायदा उठाया। ट्रेन में ही बिल का ड्राफ्ट तैयार करवाया। दूसरे दिन पेश किया।

लेकिन तब तक सहयोगी दल चौधरी साब की लोकप्रियता से घबरा उठे थे। दूसरे ही दिन राजनारायण का जहर उगलता बयान अखबारों में छपा कि साढे 6 एकड़ तक की भूमि पर लगान बिल्कुल माफ किया जाये।

यों तो एक माह भी चैन से नहीं निकला था। विभिन्न घटक आये दिन चौंकाने वाले बयान देकर धमा चौकड़ी मचाने लगे थे। जनसंघ और समाजवादी घटक में हौड़ लगी रहती। अपने अपने राग अलापने लगे थे। जनसंघ को सबसे बड़ा घटक होने का गर्व था तो समाजवादी हुड़दंग के लिए जाने जाते थे। एक सेर तो दूसरा सवा सेर। एक चिंता सबको खाये जा रही थी कि चौधरी

साब की लोकप्रियता उन्हें निगल जायेगी। तब खेती या किसान सम्बन्धी मुद्दे आते तो ये लोग बढचढ कर सस्ती लोकप्रियता के लिए उछल कूद मचाने लगते। अभिप्राय यही था कि किसानों के शुभचिंतक होने में वे चौधरी साब से कहीं अधिक आगे थे। एक सूत्री कार्यक्रन बन गया था कि किसानों में चौधरी की छवि मलिन करो। इस काम में राजनारायण का कोई मुकाबला नहीं था। कम्युनिस्टों का जोर इस बात पर था कि जिसे किसान मसीहा कहा जा रहा है वह तो बड़े किसानों का प्रतिनिधि है-'कुलक'। इस भानुमति के कुनबे को जोड़े रखना चौधरी साब के लिए परीक्षा हो गई। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि ये लोग क्यों उपहार का पात्र बनते जा रहे हैं। उनके विकल्प का क्या होगा?

चौधरी साब ने विधान सभा में हस्तक्षेप करतेहुए कहा कि शीघ्र ही मालगुजारी समाप्त करने पर विचार किया जायेगा। लेकिन इसके लिए वक्त तो चाहिए। एक उप समिति बनाकर इस प्रस्ताव पर विचार करना था कि कृषि आय पर टेक्स लगाया जाये।

राष्ट्रीय अखबारों में सम्पादकीय लिखकर चौधरी साब के भाषण की प्रशंसा की गई। कृषि विशेषज्ञ चरणसिंह पर सबको विश्वास था लेकिन संविद के घटक तो मानो उनसे भयभीत हो गये थे। उन्हें यह स्वीकार नहीं था। राजनारायण ने तो तब स्पष्ट ऐलान कर दिया था, ''यदि साढे छः एकड़ तक लगान माफ नहीं किया तो संसोपा संविद से पृथक हो जायेगी।''

अजीब घटना चक्र हो रहे थे। अखबारों के सम्पादकीय चौधरी साब की प्रशंसा में थे, तो मुखपृष्ठ पर संविद सरकार में भीषण तूफान की आशंका की रिपोर्टिंग थी। संविद के घटक अपने बयान पहले अखबारों में छपवाते, बाद में चौधरी साब को पत्र लिखते। राजनारायण ने तो बाकायदा दौरे करने शूरू कर दिये। सार्वजनिक सभाओं में पहली बार चरणसिंह को वे 'चेयरसिंह' की उपाधि से अलंकृत करने लगे।

कामरेड कैसे पीछे रहते?अध्यक्ष डांगे ने अखबारों में छपवाया कि यदि चरणसिंह सरकार चलाना चाहते हैं तो तुरन्त साढे छ एकड़ तक भू-राजस्व समाप्त करें। चौधरी साब पर भारी दबाव पड़ने लगा। चौधरी साब से कहा गया कि आधा लगान तो तुरन्त माफ किया जाये। बाकी के मामले कमेटी को सौंप दिये जाये। चौधरी साब की राय थी कि इस मामले पर पूरा अध्ययन किया जावे तब फैसला लिया जा सकता है। जब यह अनुभव किया जाने लगा कि विभिन्न घटक मानेंगे नहीं तो चौधरी साब ने प्रस्ताव रखा कि आधा लगान रवि की फसल से माफ कर दिया जायेगा। तब तक कमेटी भी विचार कर लेगी।

इस पर संसोपा ने फिर शोर मचाया कि नहीं, लगान खरीफ की फसल से आधा करना है। नहीं तो संसोपा मंत्री इस्तीफा दे देंगे। वे सभाओं में चौधरी साब की खिल्ली उड़ाने लगे। एक दूसरे से आगे निकलने की हौड़ में वे तमाम मर्यादाओं को तिलांजली दे चुके थे। यह सब आश्चर्यजनक था। ये लोग जिद्दी बच्चे की तरह मचल रहे थे-''सबसे पहले मेरी बात मानों नहीं तो मैं चला। चौधरी साब इन्हें मनाने में लगे रहे। अक्टूबर में ये लोग कुछ ठंडे पड़े।

तब तक संविद की पोल उखड़ चुकी थी। अखबार चटखारे लेकर इनकी खबर छापते। कांग्रेस पार्टी खुश थी। वह इन्हें भड़काने का आनन्द उठा रही थी। चौधरी चरणसिंह ने पंडित नेहरू के समक्ष आर्थिक विकल्प रखा था। भूमि सुधार आंदोलन के अगुआ बनकर भारी लोकप्रियता अर्जित की थी। वही, अब मुख्यमंत्री बनकर भी असहाय थे। नौ सखियों की शब्द-बौछार झेल रहे थे। अखबारों की एक ही राय थी कि ये सब विदुषक बनकर चौधरी साब के ग्रामीण आधार को उखाड़ने का प्रयत्न कर रहे थे। इसीलिए वे प्रतिदिन नया पैंतरा फेंकते। डा. राम मनोहर लोहिया भी मानों क्रांति इसी मुद्दे पर करना चाहते थे। ऐसे में चौधरी साब अकेले संविद के खटारे को खींच रहे थे।

आपसी कलह का दुष्प्रभाव तो पड़ना ही था। अवसर देखकर सरकारी कर्मचारियों ने आंदोलन शुरू कर दिया। छात्रों ने मनमानी रूप से हुड़दंग मचाना शुरू कर दिया। यह सब चौधरी

साब को कैसे सहन होता? हिंसा फैलाने वालों को गिरफ्तार किया गया। तब मानों कम्युनिस्टों को अवसर मिला। उन्हें लगा कि उनके आधार को समाप्त किया जा रहा है।

उन्होंने चौधरी साब से मांग की, "गिरफ्तार कर्मचारियों को तुरन्त रिहा किया जाये।"

चौधरी साब ने समझाया, "भले आदमियों, कानून-व्यवस्था भी कोई चीज है। प्रत्येक व्यक्ति मनमानी करेगा तो सरकार कैसे चलेगी?"

तब ये कथित क्रांतिकारी फिर मचल उठते। उनके एक मात्र मंत्री ने इस्तीफा पेश कर दिया। चौधरी साब मानों स्वयं से पूछने लगे, "अच्छे फंसे चरणसिंह! अब क्या करोगे?" जनता भी दुखी थी। बी. के. डी. के सदस्यों से अपने मुख्यमंत्री का दुख देखा नहीं गया। उन्होंने एक प्रस्ताव पास कर मुख्यमंत्री से अनुरोध किया, "कम्युनिस्ट मंत्री का इस्तीफा स्वीकार कर लेना चाहिए। यदि भविष्य में कोई मंत्री रुठकर मंत्रीपद से इस्तीफा देता है तो उसे तत्काल स्वीकार कर लेना चाहिए। बार बार इस्तीफा देने से सरकार की स्थिति हास्यास्पद हो गई है।"

इसके बाद बी. के. डी. कार्यकारिणी की बैठक श्यामलालयादव के घर पर हुई। प्रस्ताव पास करके चौधरी साब को अधिकार दिया गया कि वे वर्तमान अस्थिरता को दूर करने के लिए यथा संभव कदम उठायें। तब चौधरी साब ने रात को ही दिल्ली जाने का निश्चय किया। कम्युनिस्ट पार्टी के केन्द्रीय नेताओं से विचार-विमर्श करके समाधान का कोई रास्ता निकालना था। अब तक वे स्वयं तंग आ चुके थे। उन्होंने संवाददाताओं से कहा भी, "यों लग रहा है जैसे सरकार चलाने की जिम्मेदारी मेरी ही है। जनता को हम लोगों ने परेशान कर दिया है। ऐसी अवस्था में मैं मुख्यमंत्री बने नहीं रहना चाहता।"

तब सभी सकते में आ गये। जनसंघी मंत्री ने फोन पर आग्रह किया, "चौधरी साब इस्तीफा मत दे देना। बेहतर हो कि कम्यूनिस्टों की मांग मान लें। सरकार तो बच जायेगी।"

"क्या करेंगे ऐसी सरकार का?" चौधरी साब ने तपाक से उत्तर दिया।" जिन्होंने कानून के साथ खिलवाड़ किया है, उनकी बात मान ली जाये? प्रजातंत्र के भी कुछ कायदे-कानून होते हैं। कर्मचारी तो पढे लिखे होते हैं। हमने बातचीत का रास्ता तो बन्द नहीं किया था।"

"तो आप दिल्ली जाकर बात कर लें।" इसी राय से वे सहमत हुए। दिल्ली में पार्टी के केन्द्रीय नेताओं से बातचीत की। संवाददाताओं को पता लगने पर उन्हें घेर लिया।

"आपकी सरकार कितने दिन और चलेगी?" संवाददाताओं ने पूछा।

चौधरी साब ने चुटकी ली, "आप लोगों के चाहने से सरकार नहीं गिरने वाली।"

एक गंभीर सवाल था, "मंत्रीमंडल के कई सदस्यों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोप लगे हैं। आपके रहते हुए यह कैसे हुआ?"

"मुझे जानकारी है। एक दो दिन में मुख्य जांच आयुक्त की घोषणा की जायेगी। या तो भ्रष्टाचार रहेगा या मैं रहुंगा।"

पत्रकार चुप हो गये। दूसरे दिन के अखबारों से प्रतीत हो रहा था मानों वे अपनी पुरानी फार्म में आ गये हैं। मंत्रीमंडल के कई सदस्यों में खलबली मच गई थी। जनसंघ घटक भी मोर्चे बन्दी पर पुन: आ गया। किसी तरह सरकार रेंग रही थी।

उस दिन जनसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रो. बलराज मधोक उनसे मिलने घर आये। चौधरी साब फर्श पर दरी बिछाये एक बड़े तकिये के सहारे बैठे थे। ऐसा सादा मुख्यमंत्री पहली बार देखा। दीवार पर स्वामी दयानन्द सरस्वती का चित्र लगा हुआ था।

मधोक ने मजाक में कहा, "आपको तो जनसंघ में होना चाहिए था। भारतीय संस्कृति के अग्रदूत हैं आप।"

"लेकिन क्या हमारी यही संस्कृति है कि संयुक्त परिवार में रहकर बुजुर्ग सदस्य का अपमान करते रहें? कोई भी अपनी जिम्मेदारी नहीं समझे।" चौधरी साब ने रुष्ट होकर मधोग को देखा।

मधोक ने स्वीकार किया कि जनसंघ अनुचित हस्तक्षेप करता रहा है। चौधरी साब भावुक

हो उठे। बोले, "जनसंघ संविद का सबसे बड़ा घटक है। इस नाते उसकी जिम्मेदारी भी बड़ी है। लेकिन आये दिन ये लोग बखेड़ा खड़ा कर देतेहैं। ऐसे में भला सरकार कितने दिन चलेगी?"

बलराज मधोक चुप थे। सहसा ही चौधरी साब ने अपनी जेब से लिखा हुआ त्याग पत्र उन्हें सौंपते हुए बोले, "आप यहां आ ही गये हैं। यदि यह समझते हैं कि मैं गलती पर हूं तो मेरा यह त्याग पत्र राज्यपाल को भेज दें।"

प्रो. मधोक सकते में आ गये। उनकी नजरें नीची हो गई। एक अपराध बोध का एहसास हुआ। उन्होंने नजर उठा कर देखा, चौधरी साब की आंखों में पानी थी। मधोक ने कांपती आवाज में कहा, "मुझे मालुम है चौधरी साब, आपने कितना कष्ट उठाया है। मैं जनसंघ के नेताओं से आग्रह करूंगा कि वे भविष्य में आपको शिकायत का अवसर न दें।"

बलराज मधोक ने इस्तीफे के टुकड़े टुकड़े कर दिये। ऐसा राजनीतिज्ञ उन्होंने पहली बार देखा था। इससे पूर्व अगस्त 1967 में भी चौधरी साब ने इस्तीफा उप मुख्यमंत्री राम प्रकाश को सौंप दिया था। प्रो. मधोक और चौधरी साब क्षणभर चुप बैठे रहे। सन्नाटे को तोड़ते हुंए चौधरी साब ही बोले, "जनता को हम से कितनी अपेक्षाएं थी। सब धूल में मिलती जा रही हैं। हम लोगों का भी वही चरित्र है।"

प्रो. मधोक के पास कोई उत्तर नहीं था। इतना ही कह सके, "चौधरी साब, मैं शर्मिंदा हूं।" और वे उठकर चले गये।

7.

दूसरे ही दिन जनसंघ का बयान छपा कि चौधरी साब के नेतृत्व में संविद सरकार ने बहुत अच्छा कार्य किया है। जनता उनके कार्य से संतुष्ट हैं। संविद को गर्व है कि उसे चौधरी जैसा मुख्यमंत्री मिला। तब संसोपा जैसे तिलमिला उठी। इस पार्टी ने मानों कसम खा रखी थी कि संविद सरकार चलने नहीं दी जायेगी। जनसंघ के बाद सबसे बड़ी पार्टी थी। तभी राजनारायण के मित्र अर्जुनसिंह भदौरिया ने तीर मारा, "चूंकि संविद के घटक चाहते हैं कि नेतृत्व में परिवर्तन हो, इसलिए चौधरी चरणसिंह को इस्तीफा दे देना चाहिए। इससे संविद सरकार बच जायेगी।"

अखबार में यह बयान पढकर चौधरी साब ने तुरन्त अपनी ओर से बयान जारी किया, "यदि मेरे हटने से संविद में एकता बनी रहती है तो मैं इस्तीफा देने को तैयार हूं।"

तब सभी घटक चिंतित हो उठे। ऐसा लगा, संविद के दिन लद गये हैं। भाग-दौड़ शुरू हो गई। उस दिन चौधरी साब घर से बाहर नहीं निकले। दूसरे दिन के अखबारों में संसोपा सहित सभी घटकों ने नेताओं के बयान छपवाये, "भदौरिया का बयान उनका व्यक्तिगत है। संविद का पूर्ण विश्वास चौधरी साब में है। हमारा अनुरोध है कि चौधरी साब मुख्यमंत्री बने रहें। संविद में ऐसा अन्य कोई नहीं है जो उनकी जगह ले सके।"

क्या किया जा सकता था? चौधरी साब पुनः कार्य में जुट गये। लेकिन उनकी पीड़ा कम नहीं हुई थी। उन्हें अहसास था कि पुनः कभी भी असंतोष भड़क उठेगा। कैसे इन लोगों को समझाया जाये? कभी कभी ख्याल आता, कांग्रेस छोड़कर कहीं गलत तो नहीं किया? उनकी आत्मा जैसे कहती, "नहीं, गलत तो नहीं किन्तु संघर्ष तो तुम्हें जीवन भर करना पड़ेगा।" और तब चौधरी साब बहुत उदास हो जाते।

उन्हीं दिनों जयपुर में बी. के. डी. की कार्य समिति की बैठक हुई। यू. पी. बिहार, राजस्थान, बंगाल, महाराष्ट्र एवं मध्य प्रदेश के लिए प्रान्तीय कार्य समितियां गठित की गई। पार्टी को जनजन

तक पहुंचाने का संकल्प किया गया। चौधरी साब की सरकार की प्रशंसा की गई। उस दिन दिल्ली लौटने पर संवाददाताओं ने प्रश्नों की झड़ी लगी दी।

"संसोपा आप से त्याग पत्र मांग रही है?"

"मैं तो तैयार हूं। शीघ्र ही संविद की बैठक बुलाई जा रही है। उसमें जो तैय होगा, मुझे मान्य होगा।"

"आपको संविद-घटकों ने काम नहीं करने दिया। आप क्या कहेंगे?"

"मेरा तो एक ही उद्देश्य था कि प्रदेश को स्वच्छ प्रशासन मिले। जनता का विश्वास सरकार में बना रहे। मैं अपनी तरफ से इस कार्य में ढील नहीं आने दूंगा।"

उन दिनों यू. पी. में अंग्रेजी विरोधी आंदोलन चल रहा था। इस सम्बन्ध में पत्रकारों द्वारा पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया, "हिन्दी प्रेमी जनता की अंग्रेजी विरोधी आंदोलन का मैं समर्थक हूं। लेकिन हिंसा सहन नहीं होगी। राजभाषा संशोधन विधेयक के बारे में यू. पी. सरकार केन्द्र को अवगत करा चुकी है।"

आने वाले सोमवार से राजभाषा संशोधन विधेयक के विरुद्ध दिल्ली में संसापो की ओर से प्रदर्शन होने वाला था। खबरें थी कि संसोपा के मंत्री भी इसमें भाग लेंगे। पत्रकारों ने इस सम्बन्ध में चौधरी साब की टिप्पणी मांगी। उन्होंने उत्तर दिया, "प्रदेश के बाहर वह जो कुछ करेंगे, उनसे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है।"

संविद की बैठक से पहले बी. के. डी. की बैठक हुई। चौधरी साब ने स्पष्ट रूप से ऐलान कर दिया, "मैं बहुत दु:खी हो गया हूं। अब संविद को अपना नया नेता चुनने दीजिए।"

दूसरे दिन के अखबारों में यह सब पढकर संविद के घटक फिर बैचेन हो गये। कई घटकों के बयान छपे कि यदि चरणसिंह मुख्य मंत्री पद छोड़ते हैं तो वे भी संविद से हट जायेंगे। उनका कहना था कि सिर्फ चौधरी साब ही नेतृत्व दे सकते हैं।

यह तकरार और इकरार चलता रहा। तब संविध की संयुक्त बैठक बुलाई गई। सबसे पहले चौधरी साब ही बोले-

"मित्रों, मेरा एक सपना था, कांग्रेस छोड़ते समय। लेकिन वह सचमुच सपना ही बना रहा। मैं कुछ नहीं कर सका। मुझे जनता के सामने शर्मिंदगी हो रही है। इसलिए मैं इस्तीफा दे रहा हूं। आप से मेरा अनुरोध है कि आप इसे तुरन्त स्वीकार कर लें। अपना दूसरा नेता चुन लें। मैं इस्तीफे के कारणों पर नहीं जाना चाहता। ये कारण आप सब जानते हैं। मेरे लिए ऐसी परिस्थितियों में कार्य करना बहुत कठिन हो गया है...।" बोलते बोलते उनका गला रूंध गया। कुछ क्षण चुप रहकर वे पुन: बोले, "मैं सबके सामने स्पष्ट कर दूं कि यदि आप लोग मेरा इस्तीफा स्वीकार नहीं करेंगे तो मजबूरन मुझे राज्यपाल को सौंपना पड़ेगा। तब शायद यह मुश्किल होगा कि आपके निर्णय को वे मानें। अत: बेहतर है कि आप स्वीकार कर लें और दूसरा नेता चुन लें।....मैं जनता को मुंह दिखाने लायक नहीं रहा....।"

उनका स्वर सहसा ऊंचा हो गया। आंखों में उमड़ते समुद्र को वे कठिनता से रोक रहे थे। इससे वे और उतेजित दिखाई देने लगे। बैठक में गहरा सन्नाटा छा गया। सबकी गर्दन झुकी हुई थी। तभी काफी विधायक एक साथ खड़े हो गये-

"नहीं चौधरी साब, ऐसा नहीं होगा। हम ऐसा नहीं होने देंगे। अपना इस्तीफा वापस लें।"

चौधरी साब कुछ बोल नहीं सके। तपाक से खड़े हो गये। यह कहते हुए वह बाहर निकल गये, "यह मेरा अपना मामला है। आज मैं किसी की कुछ नहीं सुनता।"

बैठक में भयानक सन्नाटा पुन: पसर गया। अधिकांश विधायक सुन्न थे। कुछ विधायकों के आंसु भी निकल आये। वे क्रोध में कांप रहे थे लेकिन कुछ बोलना नहीं चाहते थे।

कुछ क्षण बाद उपमुख्यमंत्री राम प्रकाश ने प्रस्ताव रखा कि चौधरी साब को नेता पद पर

बने रहने के लिए मनाया जाये। संविद के सचिव थे संसोपा विधायक उग्रसेन। उन्हें यह जिम्मेदारी दी गई कि वह चौधरी साब को सर्वसम्मति से पारित इस प्रस्ताव की जानकारी दें कि उन्हें ही नेता पद पर रहना है। किसी भी हालत में इस्तीफा स्वीकार्य नहीं है।

यहां दिलचस्प होगा कि अर्जुनसिंह भदौरिया ने उग्रसेन को ही संविद का नया नेता बनाने का बयान जारी किया था। उग्रसेन ने चौधरी साब को पत्र लिखा-"आपने जो नेता पद छोड़ने की बात कही है, उसके सम्बन्ध में सर्व सम्मति से निर्णय ले लिया गया है कि आप ही नेतृत्व करते रहें एवं मार्ग दर्शन देते रहें।"

रात को पत्रकार चौधरी साब के निवास पर पहुंच गये। वे बार बार कुछ बोलने पर जोर दे रहे थे। दिसम्बर की कड़ाके की सर्दी में भी चौधरी साब जैसे अन्दर से जल रहे थे। उनके मुंह से इतना ही निकला, "मैं बहुत दुःखी व्यक्ति हूं। इससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है। इस्तीफे का फैसला अपनी जगह कायम है।"

दूसरे दिन, लगभग सभी अखबारों के सम्पादकीय और मुखपृष्ठ इसी प्रसंगके थे। एक अंग्रेजी अखबार के सम्पादकीय का शीर्षक था-'अन हैप्पी मैन', मैं कुछ दिन मौन रहकर देखुंगा कि मुझे क्या करना है? अभी मैं आप लोगों को कुछ कहने में असमर्थ हूं।"

किन्तु अखबारों में विभिन्न धड़ों की तीखी आलोचनाएं छप रही थी। पाठकों के पत्रों का अन्त नहीं था। विभिन्न घटकों को बिना बारिश के ही टर्र..टर्र..करने वाले मेंढकों की संज्ञा दी गई थी।

तत्काल संविद सरकार के टूटने का खतरा टल गया था। इस पर अखबारों में ही नहीं, चौधरी साब के पास भी पत्रों और तारों का अम्बार लग गया था। उनके द्वारा त्याग पत्र देने को सराहनीय कदम बताया गया। यह भी अनुरोध था कि किसी भी तरह सरकार चलनी चाहिए। संविद के घटकों की गैर जिम्मेदारी की भृत्सना की गई थी।

चौधरी साब क्या करते? शासन में भागीदार होकर फायदा तो सभी लेना चाहते थे, लेकिन कोई भी जिम्मेदारी ओढने को तैयार न था। सारा बोझ चौधरी साब पर डाल वे जिद्दी और नटखट बच्चों जैसा व्यवहार कर रहे थे। जिसके जो जी में आया, वही बोल रहा था। अर्जुनसिंह भदौरिया की तिखी आलोचना की गई थी। जिस उग्रसेन को वे मुख्यमंत्री बनाना चाहते थे, उन्हें अपनी पार्टी में कोई भी पद नहीं दिया गया। पूरे राज्य का विश्वास था कि चौधरी साब के अतिरिक्त इस गाड़ी को कोई नहीं चला सकता। तब ये घटक और भी उद्दंडता पर उतर आते।

इस उठा-पटक से राजनैतिक माहौल बुरी तरह प्रभावित हुआ था। कांग्रेस और केन्द्रीय सरकार नहीं चाहती थी कि चौधरी साब की सरकार एक दिन भी चले। चन्द्रभानु गुप्ता की लालची नजरें कुर्सी पर टिकी हुई थी। जब तब अखबारों में छपता-"हरियाणा, पंजाब और पश्चिमी बंगाल के बाद उत्तर प्रदेश की बारी, चौधरी चरणसिंह की सरकार में दरारें पैदा करने की कुचेष्टा।"

चौधरी चरणसिंह के ईमानदार और मजबूत हाथों को उन्हीं की सरकार में शामिल दल कमजोर करने पर तुले हुए थे। कुछ अखबारों की टिप्पणी थी, "यू. पी. का लौह पुरुष गांधी का शिष्य भी है" तो किसी में छपा, "चौधरी चरणसिंह की ईमानदारी और अनुशासन उनके लिए महंगे साबित होंगे।" नौ महिने की सरकार की रिपोर्टिंग करते हुए अखबारों में लिखा, "प्रदेश के अधिकांश मंत्री नौ सखिये, अनुभवहीन और सिफारिशी मंत्री हैं।"

चौधरी साब ने मुख्यमंत्री पद पर रहना तभी स्वीकार किया था जब उन्हें मंत्रीमंडल में फेर बदल की स्वीकृति मिल गई थी। भ्रष्टाचार के आरोपी मंत्रियों के विभाग बदल दिये गये। जनता की बहुत शिकायतें मिलने के बाद यह किया गया था। इससे जनसंघ घटक फिर नाराज हो गया। उप-मुख्य मंत्री रामप्रकाश जब संसोपा के साथ मिल कर पुनः नेतृत्व परिवर्तन की आवाज उठाने लगे।

कम्युनिस्ट पार्टी इस परिवर्तन से तो खुश थी लेकिन कुछ और विभागों मेंभी परिवर्तन चाहती

थी। साथ ही चौधरी साब के अनुशासन को वह नापसंद करती थी। इस खेल का कहीं अन्त नहीं था।

उस दिन गायत्री देवी ने टोक दिया, "आपके तो यही कष्ट लिखा हुआ है। रात दिन भी क्या सोचना?"

"तुम्ही ने तो फंसा दिया इन लोगों के बीच। अब मैं कहां जाऊं?"

"संसार से भाग तो नहीं सकते। जनता का तो प्यार बढा है। यह क्या कम है?"

"उसी की तो चिंता है, नहीं तो मैं कबका हट गया होता।"

"आप तो चलते रहें अपने मार्ग पर। भगवान सहायता करेंगे।"

चौधरी साब रूखी हंसी हंस पड़े। "मैं तो सोचता हूं यह सब कष्ट भगवान ही दे रहे हैं। देखता हूं कब तक?"

8.

राजनारायणजी की विदुषक मंडली ने तभी धमाका कर दिया। दिल्ली में उग्र प्रदर्शन करके यू. पी. के संसोपा मंत्री गिरफ्तार हो चुके थे। यह एक हास्यास्पद घटना थी। चौधरी साब लज्जा से गड़ गये। उनके मंत्री तिहाड़ जेल में बंद थे। आंदोलन समाप्त होने पर उन्हें छोड़ा गया। तब राजनारायण ने बौखला कर शाही फरमान जारी कर दिया था कि किसी भी केन्द्रीयमंत्री को उत्तर प्रदेश में आने पर गिरफ्तार कर लिया जायेगा।

प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी 3 जनवरी 68 को वाराणसी में आने वाली थी। उन्हें विज्ञान कांग्रेस का उद्घाटन करना था। राजनारायण ने फतवा जारी कर दिया था कि श्रीमती इंदिरा गांधी को गिरफ्तार करके जनता की अदालत में पेश किया जायेगा। यह तमाशबीन राजनीति की चरम सीमा थी। अखबारों में विभिन्न अटकलें लगाई जा रही थी। एक अखबार में खबर छपी कि चौधरी चरणसिंह ने गोपनीय पत्र लिखकर श्रीमती गांधी को सलाह दी है कि वे यू. पी. की यात्रा निरस्त कर दें। चौधरी साब ने इस समाचार का तुरन्त खंडन किया। उन्होंने स्पष्ट किया, "मैंने ऐसा कोई पत्र नहीं लिखा है। यू. पी. की कानून व्यवस्था बिल्कुल ठीक है। प्रधानमंत्री जब चाहें, आ सकती हैं।"

चौधरी साब ने पहले अपने रेवेन्यू मंत्री उदित नारायण शर्मा को यह कार्यभार सौंपा था कि प्रधानमंत्री के दौरे के समय वे साथ रहें। अखबारों की विभिन्न अटकलों के बाद वे स्वयं इंदिरा गांधी के साथ रहने को तैयार हो गये। संसोपा के 45 विधायक थे। उनके मंत्री सरकार में सम्मिलित थे। यह एक अजीब स्थिति बनगई थी। कुछ मंत्री एक तरफ तो मुख्यमंत्री दूसरी तरफ। चरणसिंह पर कुर्सी से चिपके रहने का आरोप लगाने वालों को यहां गौर करना पड़ेगा। कुर्सी को निश्चित रूप से जाती देख भी उन्होंने परवाह नहीं की। प्रधानमंत्री के साथ साथ वाराणसी गये। राजनारायण समेत अनेक संसोपा विधायक और कार्यकर्त्ता जेलों में बन्द कर दिये गये। सारा कार्यक्रम शांतिपूर्वक निपटा।

प्रधानमंत्री के जाने के बाद संवाददाताओं ने चौधरी साब को बधाई दी। चौधरी साब ने स्पष्ट कहा, "हमारे राजनैतिक मतभेद हो सकते हैं लेकिन इंदिरा गांधी भारत की प्रधानमंत्री हैं और मैं उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री। दुनिया में मेरी क्या इज्जत रहती यदि आज प्रधानमंत्री ही यू. पी. में नहीं आ सकती।"

चौधरी साब ने अपने पद को दांव पर लगा दिया था। वे संसोपा को किसी तरह मना सकते

थे। किन्तु ऐसा नहीं किया। यहां यह कहना अप्रासंगिक नहीं होगा कि पंडित कमलापति त्रिपाठी उस समय प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे और वाराणसी के रहने वाले थे। वाराणसी में घटित इस नाटकीय घटना की उन्होंने आलोचना तक नहीं की। उस समय अनेक राज्यों में दौरे पर जाने पर इंदिरा गांधी को पत्थर-चप्पलें मारी गई थी। एक प्रान्त में तो उनके काफी चोट भी आई थी। यू. पी. के इस दौरे के बाद इंदिरा गांधी ने टिप्पणी की थी, "अनेक गैर कांग्रेसी राज्यों में कानून व्यवस्था सोचनीय है लेकिन यू. पी. में ऐसा नहीं है। निश्चय ही चौधरी साब ने एक सफल प्रशासक का परिचय दिया है।"

यही नहीं, बाद में संसद में रेलवे बजट पर भाषण देते हुए तत्कालीन रेल मंत्री पुनांचा ने बताया था कि हिन्दी आंदोलन के दौरान यू. पी. में रेलवे सम्पति को कोई क्षति नहीं पहुंची। इसके लिए मुख्यमंत्री चौधरी चरणसिंह धन्यवाद के पात्र हैं।"

वाराणसी की घटना के बाद तो कोहराम मच गया। संविद की घटक संसोपा भड़क उठी। संसापो तो बेलगाम थी ही, अब जनसंघ भी था। मुंह फट राजनारायण ने मांग कर दी, "उप मुख्यमंत्री रामप्रकाश को मुख्यमंत्री बनाया जाये। चरणसिंह की सांठ गांठ इंदिरा गांधी से है इसलिए उन्हें इस्तीफा देना चाहिए।" राजनारायण की चेतावनी थी कि इस्तीफा नहीं दिया तो वे अनशन करेंगे। अनशन भी कहां काशी विश्व विद्यालय के गेट पर। यह छात्रों को भड़काने की साजिश थी। दूसरे दिन ज्यों ही राजनारायण अनशन पर बैठने आये, छात्रों ने विरोध किया। 'राजनारायण जिन्दा बाद" और राजनारायण मुर्दाबाद के नारों का सिलसिला शुरू हो गया। छात्रों का कहना था कि विश्वविद्यालय के गेट पर अनशन क्यों? छात्रों की तो कोई मांग नहीं है। किसी सार्वजनिक स्थान पर अनशन किया जा सकता है। छात्रों को बेवजह इसमें क्यों घसीटा जावे? छात्र हथियार बनने को तैयार नहीं थे। इसलिए राजनारायण वापस जाओ के नारे से उनका स्वागत किया गया। राजनारायण को गेट से थोड़ा खिसक कर बैठना पड़ा। विश्वविद्यालय पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। एक अखबार में छपा, "यू. पी. में संसोपाई नाटक फिर आरम्भ, लेकिन चौधरी भी वह गुड़ नहीं जिसे चींटी खा जाये।"

एक अखबार में शीर्षक था, 'जनसंघ का मुख्यमंत्री पर आक्रमण! संविद सरकार टूटने के कगार पर।'

विदुषक राजनीति फिर शुरू हो गई। संवाददाताओं के पूछने पर मुख्यमंत्री चौधरी चरणसिंह ने कहा, "यह एक तमाशा बन गया है। एक दिन एक, तो दूसरे दिन दूसरा मचल उठता है। फिलहाल तो मैं काम कर रहा हूं। यदि संविद का मुझमें अविश्वास होगा तो वे नेता बदलने को स्वतंत्र हैं।"

अन्य घटक राजनारायण और जनसंघ का विरोध कर रहे थे। संसोपा में दो धड़े बन गये थे। 17 जनवरी को पुनः संविद की बैठक बुलाई गई। जनसंघ से अन्य घटक बेहद नाराज थे। संसोपा के विधायक अपने ही घटक के मंत्रियों पर आरोप लगाने लगे। संसोपा नेता डा. हलीम ने बयान जारी किया कि संसोपाई और कम्युनिस्ट मंत्रियों ने पूंजीपतियों से खूब धन कमाया। जनसंघ के मंत्रियों पर आरोप थे कि वे बिना पैसा लिये किसी का काम नहीं करते हैं। घटनाचक्र के इस दौर में दैनिक हिन्दुस्तान का सम्पादकीय था, "यू. पी. के मुख्यमंत्री चौधरी चरणसिंह ने कहा है कि संविद को कैंसर हो गया है और किसी भी समय इसका दम टूट सकता है। उनका यह अत्यंत गंभीर तथा चिंता जनक कथन वस्तुस्थिति का सही चित्रण करता है।"

रिपब्लिकन पार्टी के सचिव ने आरोप लगाया कि जनसंघी एवं संसोपा मंत्रियों ने ऐशो-आराम के लिए कांग्रेसी मंत्रियों को भी मात दे दी। पूंजीपतियों से लाखों रुपयों की सौदेबाजी का आरोप लगा।

अखबारों में पाठकों के पत्र रोजाना इस सम्बन्ध में छपे। जनसंघ व संसापो को 'धोखेबाज' कह कर भ्रत्सना की जाती। अधिकांश विधायक चौधरी साब पर ही विश्वास करते थे। चौधरी

साब पर आरोप था तो यही कि वे कठोर हैं, मनमानी करते हैं। वास्तव में सहयोगी मंत्रियों को मनमानी और भ्रष्ट आचरण पर वे अंकुश लगा रहे थे और यही उनका अवगुण था। इन परिस्थितियों को रेखांकित करते हुए एक अखबार में कार्टून छपा था, जिसमें बीच में चरणसिंह खड़े हैं। चारों ओर संविद के घटक खड़े हैं और उनसे कह रहे हैं, ''मेरी बात मानों या इस्तीफा दो।''

जनसंघ और संसोपा नेता सहभागीदार नहीं, ब्लेक मेलर हो गये थे। 17 दिसम्बर को चौधरी साब में विश्वास व्यक्त किया गया था और अब 17 जनवरी को पुन: संविद की बैठक बुलाई गई थी। चौधरी साब को यकीन हो गया था कि यह बेमेल खिंचड़ी अब पकने वाली नहीं। कांग्रेस का विकल्प तैयार करने की उनकी धुन को उनकी कमजोरी मान लिया गया।

संविद की बैठक में अजीब नजारा था। जिस मांग को संसोपा उठाये, उसका जनसंघ विरोध करे। जनसंघ के सुझावों का निर्दलीय विरोध कर रहे थे। भूमि पर लगान माफी की जोरदार मांग संसोपा ने की तो जनसंघ ने तीव्र विरोध किया। इस पर संसोपा बैठक का ही बहिस्कार कर गई। भीष्म पितामह चौधरी विवश हो यह तमाशा देख रहे थे।

इस्तीफा मांगने वालों को कोई समर्थन नहीं मिला। तब सर्व सम्मति से प्रस्ताव पास हुआ कि चौधरी साब को काम करने दिया जाये। आये दिन के झगड़ों को निपटाने के लिए जो समन्वय समिति बनाई गई थी उसे हाईकमान के अधिकार देने की मांग भी की गई। जनसंघ और संसोपा का यह प्रस्ताव मान लिया गया कि समन्वय समिति सर्वोच्च है और इसका निर्णय मानने को सरकार बाध्य है। यह प्रस्ताव चौधरी साब को मान्य नहीं था। सरकार चलाने की जिम्मेदारी मुख्यमंत्री की होती है। तब चौधरी साब बैठक से उठकर चले आये। बैठक के बाद उपमुख्यमंत्री रामप्रकाश ने वक्तव्य जारी किया कि संविद के लिए नया नेता चुनने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

चौधरी साब ने एक नोट तैयार किया और संविद के सभी विधायकों को वितरित करवाया। उसके मुख्य अंश इस प्रकार थे-

''जैसा कि जनता जानती है कि संविद के मंत्री मेरा त्याग पत्र मांग रहे थे-खूले रूप से समन्वय समिति की बैठक 17.1.68 को हुई। मैंने अनुरोध किया कि संविद बजट अधिवेशन शुरू होने से पूर्व अपना नेता चुन ले। पहले भी मैंने कहा है कि संविद का प्रत्येक मंत्री मेरी आलोचना करने का एक मात्र अधिकार समझता है। स्वयं का कर्तव्य भी कुछ है क्या, इसकी ओर किसी का ध्यान नहीं। यही भी कहा जाता है कि मैंने 19 सूत्री प्रोग्राम पर अमल नहीं किया। जैसा कि मैंने पब्लिक मिटिंग में ही कहा था कि सारे प्रोग्राम को एक साथ लागू करना संभव नहीं है। अब इस टीम के साथ और अधिक समय तक रहना मेरे वश की बात नहीं है। गत अप्रेल के बाद मुझे एक सप्ताह भी चैन से नहीं रहने दिया गया। कभी सोचने का वक्त भी नहीं दिया कि जनता की कौनसी कठिनाई को प्राथमिकता के तौर पर लिया जावे। समस्याओं का हल हम सबको मिलाकर निकालना चाहिए था। खेद है कि हमारे मंत्री समस्याएं दूर करने की अपेक्षा समस्याएं बढाते ही गये। मैं कर्मचारियों और छात्रों में ऐसे तत्वों को ढील नहीं दे सकता था जो आये दिन हड़ताल करें, कामचोर हों और शांति भंग करें। मेरे में ऐसी योग्यता नहीं है, जैसा कि वे कह रहे हैं। कानून का पालन सभ्य समाज का मूल आधार है और इसके बिना अराजकता फैल जायेगी।

क्या संविद में सम्मिलित दलों का केवल अपने दल या अपने कार्यकर्त्ताओं, समर्थकों के प्रतिनिधि की तरह ही काम करना चाहिए? फिर हम समस्त जनता के प्रतिनिधि कैसे बनेंगे? आशा है आप मुझे क्षमा करेंगे,यदि मैं कहूं कि अब तक उनका अधिकांश ध्यान विद्यार्थियों, संगठित मजदूरों और राज्य कर्मचारियं की मांगों पर लगा रहा है। अधिकांश शक्ति केवल आंदोलनों, कटु आलोचनाओं और सरकार में शामिल अन्य दलों का अहित कर अपने राजनैतिक दलों की विचारधाराओं को फैलाने तथा अपनी पार्टियों की प्रतिष्ठा बढाने में ही लगी रही। यदि ऐसा ही होता रहा तो इतिहास यह लिखेगा कि हम अपने दायित्वों के प्रति वफादार नहीं थे।

यदि राजनैतिक परिस्थितियां कुछ और रही होती तो मुझे विश्वास है कि हमारी उपलब्धियां

कहीं और अधिक अच्छी होती। विगत मई में समन्वय समिति की बैठक में माल गुजारी समाप्त करने या न करने और इसके लिए सर्वोत्तम विधि ढूंढने के लिए, हुए वाद-विवाद के अवसर पर एक विशिष्ट नेता ने साफ कहा था कि उसे या उसके दल को प्रदेश के आर्थिक विकास की चिंता नहीं है वरन् उसके दल का उद्देश्य राजनैतिक मात्र है। मैंने जो सवाल उठाये हैं, मेरे पास उनके अपने जबाब भी हैं लेकिन उत्तर देने का भार मैं संविदा पर ही छोड़ता हूं।

अत: मैंने संविद को एक फरवरी की बैठक के लिए कहा है कि आप मुझे मुक्त करें और अपना नेता चुन लें। इसीलिए मैं राज्यपाल को इस्तीफा नहीं दे रहा हूं। ऐसा संविद के लिए अनुचित होगा। ज्यों ही आप लोग अपना नया नेता चुन लेंगे, मैं राज्यपाल को इस्तीफा भेज दूंगा।''

जब उनका यह नोट अखबारों में छपा तो जनता में जोरदार प्रतिक्रिया हुई। एक विवश किन्तु कर्मठ मुख्यमंत्री की मजबूरी का लेखा-जोखा था। सत्ता पाकर बौराये लोगों का इतिहास था। अखबारों की खबरों से पता चलता है, कि कुछ पाठकों की आंखों में यह सब पढकर आंसु आ गये। भीष्म पितामह ने कहा था कि महाभारत के युद्ध में जीत किसी भी पक्ष की हो, हस्तिनापुर की तो हार होगी। चौधरी साब अनुभव कर रहे थे कि मुख्यमंत्री कोई भी बने, जनता के विश्वास के साथ भारी दगा हो चुका था।

9.

चौधरी साब विवश थे, जनता उद्वेलित थी। उन्हें बार बार दौरे के निमंत्रण आ रहे थे। तब मानों इस मायाजाल से दूर, वे गांवों की ओर चल पड़ते। सार्वजनिक सभाओं में अब वे जैसे फूट पड़ते। कहते, 'किसानों, राजनीति बहुत गन्दी हो गई है' सब अपनी अपनी रोटियां सेंकने में लगे हुए हैं। कांग्रेस में मैं गांव और गरीब के लिए लड़ता रहा। अलग होने के बाद मेरा विश्वास था कि अब हम कुछ काम करेंगे। लेकिन किसानों, एक बात स्पष्ट कर दूं। मैं जब तक मुख्यमंत्री हूं, प्रशासन में भ्रष्टाचार नहीं होगा, कामचोरी नहीं होगी, बेईमानी नहीं होगी।'' और तब विशाल जनसमूह के जयघोष से आकाश गूंज उठता।

इन्हीं दिनों मोदी नगर में मजदूरों की हड़ताल चल रही थी। मजदूर हिंसा पर उतर आये थे। गोलीकांड हुआ और पांच मजदूर मारे गये। चौधरी साब मोदी नगर में कर्मचारी राज्य बीमा संघ की ओर से 100 बिस्तरों के अस्पताल का उद्घाटन करने आये थे। उन्होंने पहले मोदी से सलाह मशविरा किया। चौधरी साब की सलाह से मोदी ने मजदूरों की अनेक मांगें मान ली। तब एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया था। मुख्य मंत्री का अभूत पूर्व स्वागत हुआ था। हजारों श्रमिकों के 'चरणसिंह जिन्दाबाद' के नारों से जैसे शहर हिल उठा। उन्होंने कहा, ''गौलीकांड की न्यायिक जांच बैठा दी गई है। यदि कोई अधिकारी दोषी पाया गया तो उसको सजा मिलेगी।''

जनवरी के अंतिम सप्ताह में प्रधानमंत्री की राय बरेली की यात्रा थी। वे पूर्णत: चौकस थे कि प्रधानमंत्री की यात्रा के समय कोई अशांति न हो। किसी में विघ्न डालने की हिम्मत नहीं थी। बाद में संवाददाताओं ने मजाक किया, ''आपने अपनी दृढ़ता के कारण अपने ही मित्र दलों की नाराजगी मोल लेली है। क्या कहेंगे?''

''कहना क्या है, अपना कर्तव्य तो करना ही पड़ेगा।''

''लेकिन फिर भी मंत्रीमंडल के कुछ सदस्यों पर भ्रष्टाचार के आरोप हैं।''

''जब मुझे पता लगा तो मैंने मंत्री मंडल में फेर-बदल कर दिया है। इसी से तो एक घटक

शोर मचा रहा है।"

"आपका अगला कदम क्या होगा?"

"मैं तो कदम उठा चुका हूं। संविद समन्वय समिति को इस्तीफा दे चुका हूं। वे स्वीकार कर लेते हैं तो ठीक है, वरना राज्यपाल को इस्तीफा सौंप दूंगा।"

"क्या यह जनता के साथ अच्छा होगा?"

"प्रजातंत्र में बहुमत से शासन चलता है। मैं और मेरे कुछ साथी क्या कर सकते हैं? जनता को बहुत अपेक्षाएं थी, लेकिन क्या कहूं...?"

उधर संसोपा और जनसंघ की हालत सांप-छछूंदर की सी हो गई थी। संविद को तोड़ना भी नहीं चाहते थे और चौधरी साब का नेतृत्व भी नापसंद था। क्योंकि इनके रहते वे मनमानी नहीं कर सकते थे। अब प्रत्येक पर चौधरी साब की कड़ी निगाह थी। भ्रष्टाचार के आरोप से वे बदनाम हो चुके थे। इन दोनों घटकों का प्रयास था कि एक कमजोर मुख्यमंत्री बनाया जाये ताकि वे सता सुख लूट सकें। अपने अपने दिलों को मजबूत भी बनाया जा सकता था। राजनारायण ने उप मुख्यमंत्री राम प्रकाश का नाम इसीलिए बढाया था। जब देखा कि इस नाम का तीव्र विरोध हो रहा है तो जनसंघ घटक ने रामचन्द्र विकल का नाम उछाल दिया। रामचन्द्र विकल सीधे-सादे, किसान वर्ग से हैं।

पत्रकारों ने विकल से प्रतिक्रिया जानना चाही तो उनका जबाब था, " इस सम्बन्ध में आप राम प्रकाश जी से पूछ लीजिए।"

दूसरे ही दिन, विकल के दल के जनरल सेक्रेटरी बलवीर सिंह ने एक बयान जारी कर कहा कि रामचन्द्र विकल हमारे दल का विश्वास खो चुके हैं। अत: मुखय्मंत्री बनना तो दूर, उन्हें मंत्री पद पर भी रहने का अधिकार नहीं। अगर वे स्वयं दल से त्याग पत्र नहीं देते हैं तो दल को सख्त कदम उठाना पड़ेगा। अखबारों ने चटखारे लेकर इसे छापा। एक अखबार में मोटे मोटे शीर्षक में छपा, "विकलजी बूरे फंसे।"

संविद का कलह चरम सीमा पर था। अखबार इसी प्रसंग से भरे रहते। सम्पादकीय, लेख और समाचार, सब में चौधरी साब के कुशव प्रशासन की प्रशंसा में कलम चलती। संसोपा और जनसंघ के प्रति घृणा के समाचार छपते। उन्हीं दिनों पुलिस ने एक गोपनीय रिपोर्ट तैयार की थी। इसके अनुसार कांग्रेसी समर्थक अखबार चरणसिंह को कुर्सी से चिपका हुआ मान रहे थे। बाकी स्वतंत्र अखबारों का मानना था कि संविद के घटकों ने चौधरी साब को एक माह बाद ही परेशान करना शुरू कर दिया था। अखबारों में सर्वेक्षण भी छप रहे थे, जिनके अनुसार प्रदेश की 80 प्रतिशत जनता चाहती है कि चौधरी साब मुख्यमंत्री बने रहें। अखबारों में छप रहे पाठकों के पत्र भी यही आग्रह कर रहे थे।

किन्तु चौधरी साब के सब्र का प्याला भर चुका था। वे अपने लंबे राजनीतिक जीवन में इतने दु:खी कभी नहीं रहे। उस दिन कानपुर की एक विशाल जनसभा में भाषण करते हुए उन्होंने कहा, "मुझे एक सप्ताह भी चैन से नहीं रहने दिया। अब तो सारे कायदे कानून ही ताक में रख दिये गये। आप ही बताइये कि प्रधानमंत्री की गिरफ्तारी से, हमारे देश का सम्मान क्या दुनियां में बढता? ये लोग आखिर क्या करना चाहते थे? उन्हें यह भी याद नहीं रहा कि जिस जनता ने उन्हें चुना है, उसी जनता ने प्रधानमंत्री को भी चुना है।"

क्षण भर रुककर, मानों वे जनता के दरबार में भाव-विह्वल हो उठे, बोले, मुख्यमंत्री पद से मुझे क्या मिला? यह पद मेरे लिये साध्य नहीं, साधन है। वह साधन जिसके द्वारा मैं गरीब का कुछ भला कर सकूं। गांधी के सपनों को साकार कर सकूं। लेकिन हुआ क्या? मैंने तीन अप्रेल को शपथ ली और 14 अप्रेल को मेरी आलोचना शुरू हो गई। आज संसोपा इसलिए नाराज है कि मैंने प्रधानमंत्री को गिरफ्तार नहीं करने दिया। क्या यह मांग जायज है?"

भीड़ में से असंख्य हाथ 'नहीं,-नहीं' के संकेत से हिल उठे। तब वे गला साफ कर बोले,

''दुनिया में हम क्या कहे जाते? ऐसे संस्कार मेरे तो नहीं हैं भाई। इसलिए, मैं तो अब थक गया हूं.... ।''

तब भीड़ से गगन-भेदी नारे गूंज उठे, 'चरणसिंह चौधरी बढते जाना, पीछे तेरे सारा जमाना!' मुख्य मंत्री कैसा हो, चौधरी चरणसिंह जैसा हो'

उन्होंने हाथ के संकेत से चुप कराते हुए जोर से कहा, 'आज भारत में अभाव है, बेरोजगारी है, मंदी है, अशिक्षा है। हमारा देश एशिया का एक बीमार देश कहलाता है। मेरा यह दृढ़ विचार है कि ईमानदारी और भ्रष्टाचार समाज में ऊपर से आते हैं। सब जगह बेईमानी का जोर है।ईमानदार व्यक्ति की खोज होती है। हमने यू. पी. में 27 ऊंचे अधिकारियों को भ्रष्टाचार में लिप्त होने के कारण घर भेजे हैं। जबकि पूरे भारत में यह संख्या 30 है.... ।'' तालियों की गड़गड़ाहट और नारों से फिर आकाश गूंज उठा।

''क्या यही मेरी गलती है? देश का निर्माण कठोर परिश्रम से ही होगा। हमारी नियत सही रखनी होगी। हमें कोई हक नहीं कि जनता की गाढे पसीने की कमाई हम ऐय्यासी और मक्कारी में बर्बाद कर दें। इसलिए भाइयों और बहनों, आपको जागरूक रहकर शासन की चौकसी करनी है।'' आज मानों वे वह बोझ उतार देना चाहते थे, जो पिछले दस माह से ढो रहे थे।

10.

जनसंघ के उम्मीदवार रामचन्द्र विकल का संसोपा के ही आधे से अधिक विधायक विरोध कर रहे थे। अन्य घटक चौधरी साब के नेतृत्व को ही चाहते थे। किन्तु जब रामचन्द्र विकल चौधरी साब के पास आये तो उन्होंने आशीर्वाद दे दिया। तब विकल अपना समर्थन जुटाने में जुट गये। बी. के. डी. और निर्दलियों को चौधरी साब का आशीर्वाद देना उचित नहीं लगा। उन्होंने एकत्रित हो चौधरी साब के निवास पर ही बैठक आयोजित की। विकल के नाम का विरोध किया। उन्होंने सर्वसम्मति से प्रस्ताव पास कर चौधरी साब से आग्रह किया कि वे इस्तीफा वापस ले लें। चौधरी साब चुपचाप सुनते रहे। उन्हें कुछ जंच नहीं रहा था।

दूसरे दिन के अखबारों में जब यह समाचार छपा तो यह विश्लेषण भी कि चौधरी साब कभी हां करते हैं, कभी ना करते हैं। यह उन जैसे व्यक्ति के लिए ठीक नहीं है। उन्हें स्पष्ट कदम उठाना चाहिए।

चौधरी साब ने एक बयान जारी किया, 'मैं अब बिल्कुल भी मुख्यमंत्री नहीं बने रहना चाहता। लेकिन संविद के विधायकों का विश्वास तो विकल को ही लेना पड़ेगा।''

ऐसे समाचारों का कोई अन्त नहीं था। घटनाचक्र दिन प्रतिदिन उलट-पलट रहे थे। लेकिन जनसंघ को सफलता नहीं मिली। संविद के सभी घटक पुनः एकत्रित हुए। चौधरी साब के नाम पर पुनः सभी सहमत हुए। इसी बीच चन्द्रभानु गुप्ता ने भी जोड़ तोड़ करने की कोशिश की लेकिन सफल नहीं हो सके। लेकिन इससे जनसंघ घबरा गया। उन्होंने पुनः चौधरी साब से आग्रह किया कि वे नेतृत्व संभाले रहें।

चौधरी साब को यकीन हो गया था कि दोनों बड़े घटक गंभीरता से सरकार चलाने में सहयोग नहीं देंगे। अब वे और उपहास के पात्र नहीं बनना चाहते थे। पुनः मुख्यमंत्री बनने के लिए उन्होंने अपनी ओर से शर्तें रखी। उन्होंने स्पष्ट किया कि यदि संविद यह माने तो ही वे मुख्यमंत्री बनेंगे। मुख्य शर्तें निम्न प्रकार थी-

(1) संसोपा सहमत हो तो ही मैं मुख्यमंत्री का भार संभालूं।

(2) पहले पूरे मंत्रीमंडल का इस्तीफा देकर पुन: सिर्फ मैं अकेला मुख्यमंत्री की शपथ लूंगा।

(3) प्रत्येक घटक में से मंत्री परिषद में किस किस व्यक्ति को लेना है, यह मेरी पसंद होगी।

(4) आठ व्यक्तियों की संचालन समिति बनेगी जो अंतिम फैसला लेने में सक्षम होगी।

(5) इसके अतिरिक्त मेरी कुछ शंकाएं हैं, उनका उचित समाधान होगा तो ही मैं मंत्रीमंडल का विस्तार करूंगा, नहीं तो पुन: इस्तीफा दे दूंगा।

निष्कर्ष यह है कि जैसा जनसंघ और संसोपा घटक चाहते, चौधरी साब हथियार बनने को तैयार न थे और जिस जिम्मेदारी से शासन चौधरी साब चलाना चाहते थे, ये लोग तैयार न थे। जनसंघ ने मांग की कि मंत्रियों के विभागों का बंटवारा पहले ही तैय कर लिया जाये। चौधरी साब का तर्क था कि प्रत्येक घटक का सदस्य निश्चित संख्या में शामिल कर लिया जायेगा लेकिन विभाग योग्यतानुसार मिलेंगे। इसी वाद विवाद में समय बीत रहा था।

इधर बौखलाये संसोपा और जनसंघ सदस्य पुन: एक बार दूसरे विकल्प की खोज में लग गये। किन्तु संविद के बहुसंख्यक विधायक चौधरी साब का नेतृत्व ही चाहते थे। उनका तर्क था कि ऐसा नेतृत्व हमें और नहीं मिलेगा। आखिर चौधरी साब में कमी क्या निकालेंगे?

जनसंघ के पास कोई उत्तर नहीं था। हताश होकर वे लोग निम्नस्तर पर उतर आये। उप मुख्यमंत्री राम प्रकाश ने बयान जारी किया कि संविद दूसरा नेता चुन सकता है लेकिन चौधरी साब आड़े आ रहे हैं।

इसी विषय पर अनेक अखबारों ने सम्पादकीय लिख कर विचार प्रकट किया कि चौधरी चरणसिंह के अतिरिक्त इस बेमेल गाड़ी को कोई नहीं खींच सकता। उस दिन 'नेशनल हेराल्ड' में एक रोचक कार्टून छपा था। चित्र में एक गधे के शरीर पर लिखा था-'संविद'। उसे गिरा कर पांच व्यक्ति कोड़े मार रहे हैं- जिनके कपड़ों पर लिखा है, संसोपा, प्रसोपा, रिपब्लिकन, कम्युनिस्ट और जनसंघ। दूर खड़े चरणसिंह का चित्र उन्हें देख रहा है।

मुख्यमंत्री चौधरी चरणसिंह इन दिनों दौरे पर अधिक रहते। मानों वे जनता के दरबार में पेश हो अपनी सफाई दे रहे हों। उप मुख्यमंत्री का बयान उन्होंने पढ़ा तो जैसे निश्चय कर लिया, खेल खतम।

लखनऊ आकर उन्होंने एक पत्र लिखा जो इस प्रकार था-

चरणसिंह
मुख्यमंत्री

विधान भवन,
लखनऊ
1 फरवरी 1968

प्रिय उग्रसेन जी,

आपके द्वारा मैं समन्वय समिति को नम्रता पूर्वक यह सूचित कर देना चाहता हूं कि कल की बैठक में श्री राम प्रकाश जी ने जो विचार व्यक्त किये, उनको दृष्टि में रखते हुए मैंने संविद के नेता पद के कार्यभार से मुक्त होने का निश्चय कर लिया है। मैं आज ही राज्यपाल महोदय के पास अपना त्याग पत्र भेज देता परन्तु, देवयोग से, वे मद्रास गए हुए हैं और कदाचित 8 फरवरी को वापस आने वाले हैं। अच्छा होगा कि इस बीच संविद अपना नया नेता चुन ले। हर सूरत में, इस अवधि के उपरान्त, राज्यपाल महोदय के वापस आने पर मैं अपना त्याग-पत्र उनके पास भेज दूंगा।

मैं इस पत्र द्वारा संविद के समस्त घटकों के नेताओं और सदस्यों के प्रति, उनके सहयोग और कृपा के लिए आभार भी प्रकट करना चाहता हूं।

स-प्रेम,
आपका,
चरणसिंह

श्री उग्रसेन जी,
महामंत्री,
संयुक्त विधायक दल
विधान भवन, लखनऊ।

दूसरे दिन उनका मेरठ का दौरा था। अखबारों में उनके पत्र की चर्चा थी। संवाददाताओं ने पूछा, "यदि संविद समन्वय समिति अब भी आपका इस्तीफा स्वीकार नहीं करे तो क्या आप मुख्यमंत्री बने रहेंगे?"

"बिल्कुल नहीं।" उन्होंने तपाक से उत्तर दिया। "मैं राज्यपाल के आने तक प्रतीक्षा करूंगा। उनके आते ही उन्हें इस्तीफा सौंप दूंगा।"

"प्रदेश की जनता तो चाहती है कि आप मुख्यमंत्री बने रहें।"

"लेकिन विधान सभा में बहुमत वाला व्यक्ति ही मुख्यमंत्री बना रह सकता है। जनता का तो कोई दोष नहीं है।"

लखनऊ की उठा पटक से उन्हें कोई मतलब नहीं था। वे इन दिनों अधिक से अधिक जनता के बीच रहते। मानों वे आगे आने वाले संघर्ष के लिए जनता से शक्ति प्राप्त कर रहे थे।

11.

नकारात्मक राजनीति और विध्वंस सोच रखने वालों की बुरी स्थिति थी। चौधरी साब सता को जबाब देह बनाना चाहते थे तो जनसंघ-संसोपा सता को आरामगाह बनाने पर तुले थे। चौधरी साब उग्रसेन जी को पत्र लिखने के बाद सचिवालय जाते या जनता से मिलने दौरे पर। जो समय उन्होंने दिया उस दौरान कोई फैसला नहीं हो पाया। होता भी क्या? जो जनसंघ-संसोपा चाहता वह अन्य घटक नहीं चाहते थे। लगभग डेढ माह से शासन डांवा डोल था। यह चौधरी साब के लिए कष्टदायक था। उन्हें जैसे अब लज्जा आने लगी थी। बैठे ठाले यह कुर्सी किस काम को? एक लौह-पुरुष ने झुकने की सभी सीमाएं तोड़ दी थी लेकिन पेशेवर नेता बाज नहीं आ रहे थे।

उस दिन 17 फरवरी का दिन था। वे सचिवालय गये। आज फैसला ले लिया था। वह स्वयं को हल्का अनुभव कर रहे थे। तब उन्होंने राज्यपाल को पत्र लिखा-

चरणसिंह
मुख्यमंत्री

विधानभवन लखनऊ।
दिनांक: फरवरी 17, 1968

प्रिय डा. रेड्डी,

मैं उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद से आपको अपना त्याग पत्र प्रस्तुत करता हूं.

मैं समझता हूं कि जिन कारणों से मैं मुख्यमंत्री पद त्याग रहा हूं, वे आपको प्रायः ज्ञात नहीं हैं। इस पत्र में उन कारणों का उल्लेख करना कोई आवश्यक भी नहीं प्रतीत होता।

स्पष्ट है कि मेरे पद त्यागने पर एक अन्य मुख्यमंत्री और मंत्रीमंडल की आवश्यकता होगी। जबकि संयुक्त विधायक दल का राज्य विधान सभा में बहुमत है तो आप कदाचित् उस दल के नये नेता को ही मंत्रीमंडल बनाने के लिए आमंत्रित करना चाहेंगे। यदि किन्हीं कारणों से आप ऐसा करना उचित न समझें अथवा संयुक्त विधायक दल अपना नवीन नेता नहीं चुन सके तो इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए कि इससे पूर्व विधानसभा का विश्वास खो देने के कारण कांग्रेस पार्टी

पदच्युत हो चुकी थी, मैं आपको परामर्श देता हूं कि आप भारतीय संविधान की धारा 174 (2) (ब) में निहित अपने अधिकारों का प्रयोग करने की कृपा करें और विधान सभा को भंगकर जनता की इच्छा जानने के हेतु कि वह इन परिस्थितियों में किस राजनीतिक दल अथवा दलों को एक सुदृढ़ सरकार बनाने के लिए चुनना चाहती है, मध्यावधि चुनाव करावें।

सादर,
आपका
चरणसिंह

डा. बी. गोपाल रेड्डी,
राज्यपाल, उ. प्र लखनऊ।

विधान सभा का बजट सत्र 19 फरवरी से शुरू होने वाला था, अत: 17 फरवरी को ही उन्होंने राज्यपाल को एक दूसरा पत्र और लिखा-

''जैसा कि आप जानते हैं, विधान सभा का सत्र 19 फरवरी को शुरू होना है। मेरे द्वारा इस्तीफा प्रेषित करने के बाद, अब आवश्यक है कि नयी सरकार बनेगी जो समय लेगी अथवा जैसा कि मैंने निवेदन किया है, मध्यावधि चुनाव के लिए विधान सभा भंग की जायेगी, दोनों ही मामलों को ध्यान में रखते हुए यह सलाह देनी आवश्यक है कि सत्र स्थगित किया जावे।

भवदीय
चरणसिंह''

एक प्रेस विज्ञप्ति भी उन्होंने अखबारों के लिए जारी की-

''मैंने आज राज्यपाल महोदय को मुख्यमंत्री पद से अपना त्याग पत्र दे दिया है। दो सप्ताह से भी अधिक हुए मैंने कुछ प्रश्न उठाये थे, जो मेरी बुद्धि के अनुसार किसी भी सरकार, विशेषकर एक जनतांत्रिक सरकार के सुचारू रूप से संचालन के लिए उसी प्रकार महत्वपूर्ण हैं जैसे जीवन धारण के लिए प्राण। इन प्रश्नों के संतोष जनक उत्तर प्राप्त होने की संभावना बहुत ही कम है। इसके विपरीत तब से अब तक के घटना क्रम ने मेरे विश्वासों को और भी अधिक पुष्ट कर दिया है। जहां संयुक्त विधायक दल के कुछ घटक सार्वजनिक भूमि को कानून का खुला उल्लंघन कर हड़पने के लिए एक जन-आन्दोलन की तैयारी कर रहे हैं या उसे प्रारम्भ कर दिया है, वहीं कुछ अन्य घटक प्रशासन की खुले आम भर्त्सना कर रहे हैं। यदि आवश्यक हुआ तो मैं एक विस्तृत वक्तव्य बाद में दूंगा।

अपने पद त्याग के लिए मैं किसी को दोष नहीं देता। इतने असमान मत के तत्वों की मिली जुली सरकार चलाने में सिद्धान्तों का तालमेल बैठाना आवश्यक हो जाता है, किन्तु तालमेल या समझौते की भी एक सीमा होती है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं उस सीमा तक पहुंच चुका हूं। दूसरे शब्दों में वह स्थिति आ चुकी है जबकि मेरे मतानुसार जनता के हितों और भविष्य को दृष्टि में रखते हुए और अधिक समझौता कर सकने में असमर्थ हूं।

हो सकता है संविद के मेरे कुछ मित्र मध्यावधि चुनाव को पसन्द न करते हों। यदि ऐसे कोई तत्व हैं तो उनके लिए अब भी मौका है कि वे मेरे स्थान पर एक नया नेता चुन लें और मध्यावधि चुनाव बचा जायें। कांग्रेसी विरोधी दल के मुकाबले संयुक्त विधायक दल का स्पष्ट बहुमत है।

लखनऊ:
दिनांक फरवरी 17, 1968

ह.
चरणसिंह
मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश।''

तीनों पत्र लिखकर वे अपने निवास स्थान पर चले आये। घर आकर परिवार के साथ हंसने खेलने लगे।

दूसरे दिन तो मानों तूफान उठ खड़ा हुआ। अखबारों के जरिये प्रान्त भर में समाचार फैल गया। एक अखबार की हैड लाईन थी-

'चरणसिंह की राजनीतिक हत्या!

जनता बोली-'हम अभी से क्या बतायें, क्या हमारे दिल में है?' कुछ दिनों से चले आ रहे नाटक की जैसे चरम सीमा आ पहुंची। एक अखबार ने टिप्पणी की थी, "चरणसिंह सरकार पर बज्र संकट। उत्तर प्रदेश सरकार का ज्वाला मुखी फूट पड़ा। मंत्रियों की 'पेन डाउन हड़ताल'। मुख्यमंत्री त्यागपत्र दें अथवा रवैया बदलें। त्याग पत्र दे दिया गया है। अब क्या होगा?"

समाचार पत्रों में जैसे जनता सजीव हो, विद्रोह कर उठी। चौधरी साब के साथ की गई कार गुजारी की भ्रत्सना की जा रही थी। प्रान्त का बच्चा और बुढा, स्त्री और पुरुष सब अपने चौधरी से खुश थे, फिर भी उन्हें जाना पड़ा। लगभग ग्यारह माह के शासन में उन्होंने वह सुधार किये जो पिछले 20 वर्षों में नहीं किये गये थे। लेकिन स्वार्थी नेताओं के कुरूप चेहरे वे और नहीं देख सकते थे। अब तक किसी भी मुख्यमंत्री के जाने पर जनता को क्रोध नहीं आया था।

19 फरवरी के एक दैनिक में लेख छपा

"चौधरी साब का इस्तीफा अप्रत्याशित न होते हुए भी कुछ कौतुहल का विषय जरूर है। इसका कारण यह है कि गत नौ फरवरी को संविद की सामान्यसभा ने उनसे नेता पद पर बने रह कर सरकार चलाते रहने का अनुरोध किया था। यहां यह उल्लेखनीय है कि इस मास के आरम्भ में ही संसोपा और जनसंघ के रवैये के कारण संविद से यह कह दिया था कि वह 8 फरवरी तक अपना नया नेता चुन ले और तब वे राज्यपाल को अपना इस्तीफा देंगे। उनकी इस घोषणा से संविद के घटकों में खलबली मच गई थी। प्रदेश संसोपा की कार्यसमिति तथा संसदीय बोर्ड ने अपनी संयुक्त बैठक में यह प्रस्ताव स्वीकृत किया कि यदि अन्य घटक चरणसिंह के पक्ष में हैं तो संसोपा भी चरणसिंह को बर्दाश्त करेगी।

लेकिन पिछले एक सप्ताह के भीतर कुछ घटनाएं और हुई जिनमें संसोपा की राष्ट्रीय कार्यसमिति का निर्णय उल्लेखनीय है। समिति ने कार्यक्रम की बात पर जोर देते हुए उत्तर प्रदेश संसोपा दल के सदस्यों को संविद के तथा उसकी समन्वय समिति के पदों से भी इस्तीफा देने का आदेश दिया। इससे मामला तूल पकड़ गया। मुख्यमंत्री ने संविद के 9 फरवरी के प्रस्ताव पर न तो कोई सार्वजनिक अभिमत व्यक्त किया और न संसोपा के निर्णय पर। वे 16 फरवरी को दौरे से राजधानी वापस लौटे। 17 फरवरी को बी. के. डी. की बैठक में सलाह की और साढे 12 बजे अपना इस्तीफा सौंप दिया।"

अखबारों के लिए जारी चौधरी साव के बयान को गौरव-सम्पन्न तथा प्रतिष्ठापूर्ण बताया गया। न कोई कटुता, न उत्तेजना और न किसी घटक विशेष पर आरोप। अखबारों ने एकमत से संसोपा और जनसंघ को खलनायकों की संज्ञा दी। उनका मानसिक विकार भयंकर रूप से उजागर हो गया था।

संविद के घटक जहां सुत्र थे तो चन्द्रभानु गुप्ता जोड़ तोड़ की राजनीति में जुट गए थे। उन्होंने बयान जारी कर मध्यावधि चुनाव का विरोध किया। कांग्रेस में लौटने की अन्य विधायकों से अपील की। किन्तु उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। जनता के सामने जाने से गुप्ता डर रहे थे।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सम्पादकीय की दिलचस्प टिप्पणी थी। लिखा था, "चरणसिंह भारत के इने-गिने मुख्यमंत्रियों में से हैं जो ईमानदारी, कठोर प्रशासन, न्याय और दृढ़ निश्चय के लिए जाने जाते हैं। अब प्रदेश में कोई ऐसा नेता नहीं बचा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जब एक नेता अपने सिद्धान्तों से समझौता नहीं करता है तो उसे काम नहीं करने दिया जाता है।"

'नेशनल हेराल्ड' में एक कार्टून छपा था, शीर्षक था-'यह मैंने किया' छः आदमी स्वयं श्रेय ले रहे हैं। जिनके कपड़ों पर संसोपा, प्रसोपा, कम्युनिस्ट, जनसंघ, कम्युनिस्ट (मार्क्सवादी) और रिपब्लिक लिखा हुआ था। चरणसिंह अटैची लिये जाते हुए दिखाई दे रहे हैं।

उस वक्त के अखबार चौधरी साब की लोकप्रियता के अमिट साक्षी हैं। पाठकों का क्रोध पत्रों के जरिये अखबारों में उमड़ पड़ा था। यही चौधरी साब की ताकत थी। उन्हें जनता की प्रतिक्रिया देखकर कोई पछतावा नहीं हो रहा था। जनमानस उनका मूल्यांकन कर रहा था। संसोपा और जनसंघ के प्रति अपार गुस्सा था। तब इन दलों की दशा विकट हो गई थी।

12.

जनता की प्रतिक्रिया, अखबारों की टिप्पणियां सब चौधरी साब के पक्ष में थी। इससे संविद के घटक शर्मिन्दा थे। उन्हें पछतावा हो रहा था। संविद समन्वय समिति की बैठक बुलाई गई। चौधरी साब से अनुरोध किया गया कि वे राज्यपाल से त्याग पत्र वापस ले लें। बैठक के दिन चौधरी साब दौरे पर थे। शाम को आने पर उन्हें प्रस्ताव दिया गया। उन्होंने स्पष्ट इन्कार कर दिया। उनका कहना था कि कोई भी दूसरा नेता चुनलो, सहयोग के लिए तैयार हूं।

तब रामचन्द्र विकल पुनः चर्चा में आ गये। लेकिन चौधरी साब के उत्तर से बी. के. डी. सख्त नाराज थी। जनसंघ और संसोपा के छल को वे पचा नहीं पा रहे थे। तब 55 विधायकों का एक बयान जारी हुआ कि चौधरी साब के अतिरिक्त वे अन्य किसी को संविद का नेता नहीं मानेंगे। राज्यपाल को भी इस आशय का एक ज्ञापन प्रेषित कर दिया। तब घटनाचक्र उलट गया था।

इससे निराश हो रामचन्द्र विकल पुनः चौधरी साब के पास आशीर्वाद लेने पहुंचे।

चौधरी साब ने स्पष्ट कहा, "भाई मैं तो कह चुका हूं कि आप नेता बनें।"

विकल प्रसन्न हो लौटे। तब संविद का दूसरा गुट उनके पास पहुंचा, "चौधरी साब आप यह क्या कर रहे हैं? हम तो आपको ही नेता मानेंगे।"

"लेकिन, मेरा भी तो अपना निर्णय है। मैं अब संविद का नेता नहीं बन सकता।" उनकी विवशता देख समर्थक विधायक चकित थे। कोई हल नहीं निकल रहा था। संविद घटकों की हंगामी बैठक चलती रही। एक दिन रामचन्द्र विकल को नेता माना जाता तो दूसरे दिन चौधरी साब को।

उधर चन्द्रभानु गुप्ता राज्यपाल के पास दौड़ लगा रहे थे। कुर्सी को करीब पा वे मचल रहे थे लेकिन किसी भी तरह बहुमत नहीं जुटा पा रहे थे। कांग्रेस के प्रति जन आक्रोश और चौधरी साब के प्रति सहानुभूति देख, किसी संविद विधायक का साहस नहीं हो रहा था कि कांग्रेस में मिल जायें।

संविद में इस समय जनसंघ के प्रति बहुत कटुता थी। अनेक घटकों ने स्पष्ट घोषणा कर दी कि जनसंघ जिस व्यक्ति का नाम पेश करेगा, उसका विरोध किया जायेगा। चौधरी साब ही नेता बने रहें अथवा वे किसी अन्य व्यक्ति को आशीर्वाद दें। इसी उधेड़बुन में एक एक दिन बीत रहा था।

चौधरी साब इन सबसे दूर, जनता के बीच जाने के क्रम में लगे हुए थे। आमजन उनकी एक झलक पाने को बेताब था। ऐसा नजारा कभी नहीं देखा गया कि एक विवश नेता के पीछे जनता इस तरह उमड़ पड़ी हो।

संविद के घटक, चौधरी साब के पास ही नया नेता चुनने का भार डालने दौड़े आये। काफी विचार विमर्श के बाद हरिश्चन्द्र सिंह को संविद का नेता घोषित किया गया। राज्यपाल को सूचित किया गया। राज्यपाल का विश्वास था कि हरिश्चन्द्रसिंह को संविद का सम्पूर्ण विश्वास प्राप्त नहीं है। चौधरी साब ने बयान जारी किया कि राज्यपाल सिंह को विश्वास मत प्राप्त करने के लिए कह सकते हैं। बहुमत किसके पास है, यह तो विधान सभा में ही पता लगेगा। राज्यपाल चुप थे। कांग्रेस

भी भाग-दौड़ कर चुप बैठ गई थी। गुप्ता मध्यावधि चुनाव से घबरा रहे थे। संसोपा और जनसंघ को भी अब अपने किये का पश्चाताप हो रहा था।

चौधरी साब को मानों आहट मिल गई कि अब राष्ट्रपति शासन लागू होगा। उस दिन वे रात को खाने के बाद अपने लॉन में घूम रहे थे। साथ में उनकी बेटी भी थी। वे गुनगुना रहे थे-

"बजा हिर उजाले बबातन अंधेरे, लिबासे रफीके सफर में लुटुरे।
खुदा के लिए इनसे बच के निकल जा, यह अहले सियासत न तेरे न मेरे॥"

बेटी उर्दू समझ नहीं पाई। पूछा, "इसका क्या अर्थ है पिताजी?"

उन्होंने समझाया, "बेटी, ऊपर से उजले दिखने वाले लेकिन कुटिलता छुपाने वाले, पहनावे से हम सफर लेकिन यात्रा में लूटने वाले, ऐसे दोगले व्यक्तियों से भगवान बचाये। ऐसे राजनीतिज्ञ न तेरे हो सकते हैं, न मेरे।"

क्षण भर रूककर वे मुस्कराये, "मैं भी उनमें से एक हूं।"

बेटी ने चिंता प्रकट की, "कांग्रेस भी आप छोड़ आये, ये लोग कांग्रेस से भी बुरे निकले। आप तो अकेले पड़ गये। अब..."

बेटी की पूरी बात सुने बिना ही वे गुनगुनाने लगे-

"सिंहन के नहीं लेहड़े, हंसन के नहीं पांत।
लालन की नहीं बोरियां, साधु न चले जमात॥
लीक लीक गाड़ी चले, लीक ही चले कपूत।
लीक छोड़ तीनों चले, शायर, सिंह, सपूत॥"

उन्होंने मुस्कराकर बेटी की ओर देखा। बेटी को रात के उस पहर में उनकी आंखों में चमक दिखाई दी।

दूसरे दिन वे मेरठ के दौरे पर निकल गये। वहीं उन्हें खबर मिली, यू. पी. में राष्ट्रपति शासन लागू हो गया है। विधान सभा भंग हो गई है।

उन्होंने अपने निजी स्टाफ को बुलाकर तुरन्त कहा, "आप लोग गाड़ी लेकर राजधानी लौट जाओ। हमारा साथ इतना ही था।"

"लेकिन आप भी तो चलेंगे सर!"

"नहीं, मैं अब मुख्यमंत्री नहीं रहा। सरकारी गाड़ी में कैसे जाऊंगा?"

ड्राईवर से लेकर पूरा स्टाफ मानों एक सन्यासी, जति, ऋषि, कबीर के सामने खड़ा था। सभी की आंखें नम हो आई। उन्हें आदेश का पालन करना ही था। चौधरी साब ने अपने बाकी कार्यक्रम निपटाये। मेरठ शहर रो उठा। विधि का कैसा संयोग था। उनका लाडला, खेतों की मेढं पर गुनगुनाता कबीर आज फिर उनके पास था। अपार जन समूह ने उन्हें घेर लिया। कहीं कुछ गड़बड़ न हो जाये। यही सोच वे शीघ्र ही एक प्रायवेट गाड़ी से लखनऊ के लिए चल पड़े।

रास्ते में बार बार वे खिड़की से गर्दन निकालकर खेतों को देख रहे थे। काम करते किसान स्त्री-पुरुषों को निहार रहे थे। गांव के जीर्ण-शीर्ण घरों को देख रहे थे। गाड़ी जैसे हवा में उड़ी जा रही थी। उनका भीतर का कबीर उन्हें बार बार मथ रहा था। इन लोगों का कैसे कल्याण होगा? इनका मंगलमय भविष्य हो, भगवान! जैसे वे मन ही मन बुदबुदाये और आंखें बंद कर गर्दन गाड़ी में खींच ली।

लखनऊ में संवाददाता उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। आज चौधरी साब का चेहरा उन्हें बदला हुआ दिखाई दिया। मानों हजारों टन बोझ को फेंककर आजाद हो गये हों। संवाददाताओं ने उनकी प्रतिक्रिया पूछी। वे मुस्कराये। बोले, "मैं आज उस गधे की तरह अनुभव कर रहा हूं जो बोझ ढोते-ढोते थक गया था और अब मुक्त होकर मैदान में हरी हरी दूब खा रहा है।"

परिशिष्ट

(क) वे व्यक्ति जिनसे साक्षात्कार किया

1. श्रीमती गायत्री देवी-जीवन संगिनी
2. श्री अजीत सिंह-सुपुत्र
3. श्रीमती वेदवती-बेटी
4. श्रीमती ज्ञानवती-बेटी
5. डा. जे. पी. सिंह-दामाद
6. श्री कर्तारसिंह-सुरक्षा अधिकारी एवं अन्तरंग सहयोगी

(ख) सहायक पुस्तकें

1. धरती पुत्र-अनिरुद्ध पांडे
2. परंतप-अभिनन्दन ग्रन्थ
3. माई. डेज विद चौ. चरणसिंह-तिलकराम शर्मा
4. चौधरी चरणसिंह स्मृति और मूल्यांकन सं. ज्ञानेन्द्र रावत
5. चौधरी चरणसिंह विशिष्ट रचनाएं-सं. अजयसिंह
6. जातिवादी कौन?-सम्पादित
7. उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार और कुलक वर्ग-चौ. चरणसिंह

(ग) सहायक समाचारक पत्र एवं साप्ताहिक पत्र

1.	नेशनल हेराल्ड	अंग्रेजी	लखनऊ
2.	पार्यानियर	अंग्रेजी	लखनऊ
3.	हिन्दुस्तान टाइम्स	अंग्रेजी	नई दिल्ली
4.	टाइम्स ऑफ इंडिया	अंग्रेजी	नई दिल्ली
5.	नवभारत टाइम्स	हिन्दी	नई दिल्ली
6.	हिन्दुस्तान	हिन्दी	नई दिल्ली
7.	वीर अर्जुन	हिन्दी	नई दिल्ली
8.	दैनिक जागरण	हिन्दी	कानपुर झांसी
9.	भारत	हिन्दी	प्रयाग
10.	तरुण भारत	हिन्दी	प्रयाग
11.	गांडीव	हिन्दी	वाराणसी
12.	युगान्तर	हिन्दी	कानपुर
13.	स्वतंत्र भारत	हिन्दी	लखनऊ
14.	अमर उजाला	हिन्दी	आगरा
15.	स्टेट्स मैन	अंग्रेजी	नई दिल्ली
16.	नवजीवन	हिन्दी	लखनऊ
17.	दिनमान	(साप्ताहिक हिन्दी)	नई दिल्ली
18.	धर्म युग	(साप्ताहिक हिन्दी)	बंबई

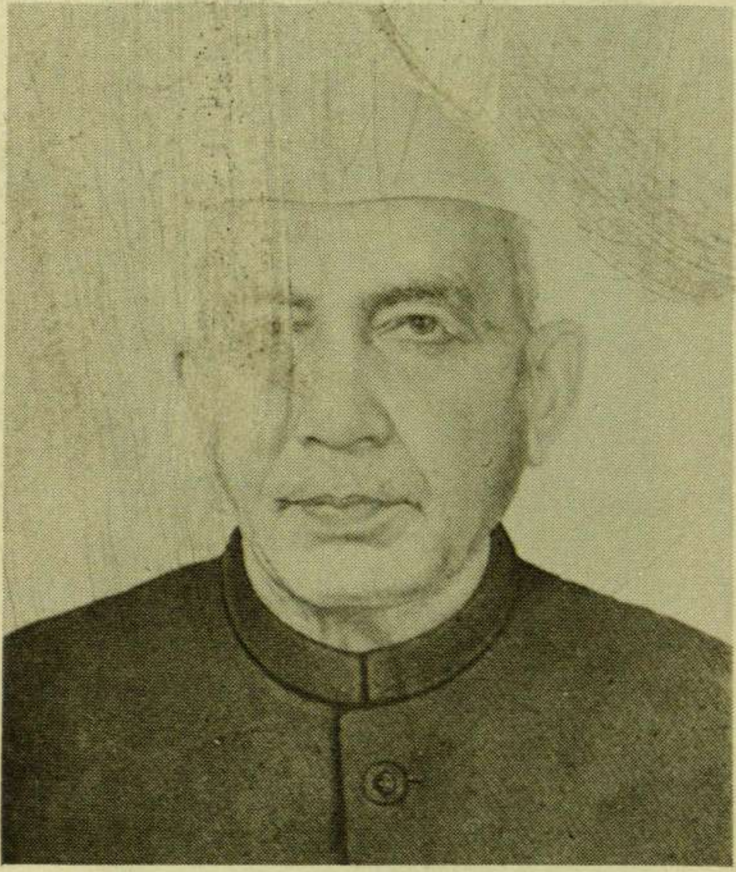

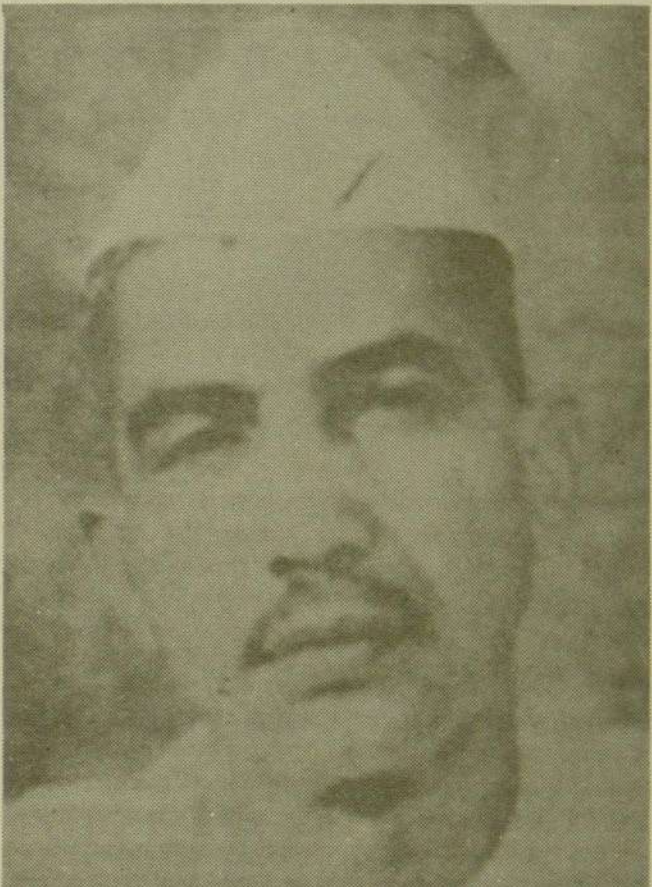

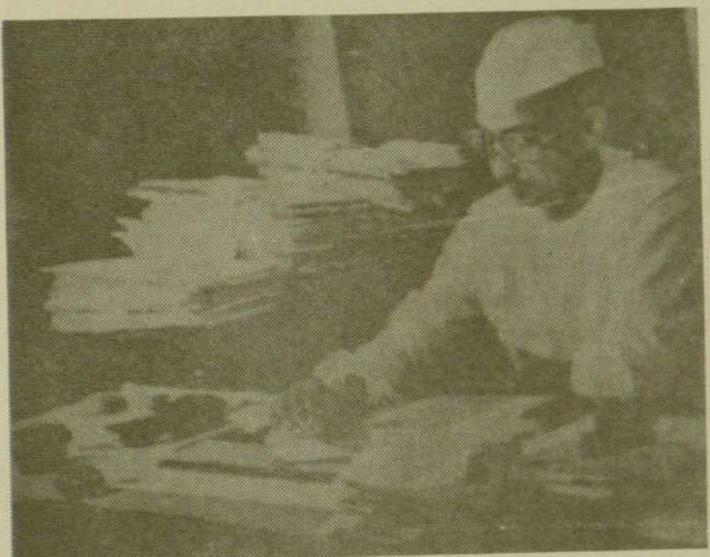

झुकने नहीं दिया। व्यापक जन–चेतना के नायक बन गये।

वे अपने सोच, सृजन और निजी जीवन स्तर पर एक व्यक्ति, अर्थशास्त्री और सच्चा भारतीय होने का गर्व रखते थे। इसलिए वे अपने सिद्धान्तों से कभी पीछे नहीं हटे। उन्होंने अपनी राह स्वयं ने बनाई और उस पर अडिग चलते रहे। अपने चरित्र की मर्यादाओं को लेकर बहुत चौकन्ने और चौकस भी थे। इसलिए वे ग्रामीण भारत के हीरो बन गये थे। जो वे सोचते, वही कहते, और जो कहते, वही करते। यही उनकी ताकत थी और सता–पिपासु नेताओं की ईर्ष्या।

अब ऐसा व्यक्तित्व भारतीय राजनीति में नहीं है। वे एक सम्पूर्ण, अखंडित और मननीय व्यक्तित्व थे। यह कम महत्वपूर्ण नहीं कि उनकी पूरी राजनैतिक जीवन–यात्रा में कहीं भटकाव नहीं आया। वे अपनी बात, सोच और सिद्धातों पर अड़े रहे। वे संत की तरह फक्कड़ रहे और कर्मयोगी की तरह कार्य में जुटे रहे। यदि इसमें कोई बाधक बना, तो उन्होंने कबीर की तरह उसे खरी–खोटी सुनाने से नहीं चूके।

उनके विराट व्यक्तित्व को समझने का प्रयास लेखक ने किया है। कड़ी मेहनत और लगन से उनका जीवन–चरित्र प्रामाणिक रूप से पहली बार पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। 'एक और कबीर' में राजनेता चरणसिंह से अधिक; संत चरणसिंह का अलबेला रूप अधिक मुखर रूप से सामने आया है। मेहनतकश वर्ग के मसीहा और ग्रामीण भारत के महानायक, चौधरी साब का जीवन–चरित्र; पाठकों को पढ़ते–पढ़ते कुछ सोचने को मजबूर करता है। सचमुच अद्धभुत व्यक्तित्व था चौधरी साब का।

प्रकाशक

'एक और कबीर' चौधरी चरणसिंह का जीवन चरित्र, एक प्रामाणिक एवं ऐतिहासिक दस्तावेज। हिन्दी प्रकाशन के इतिहास में एक क्रांतिकारी पहल। पढते समय आप ऐसे ऐसे मर्मस्पर्शी प्रसंग पायेंगे कि सचमुच यह कबीर कितना फक्कड़ और अक्खड़ था। भारतीय राजनीति में अपने ढंग का अलबेला व्यक्तित्व। गांव और किसान को समर्पित जीवन। अपने घर में संजोकर रखने वाली पवित्र पुस्तक, जिसका पाठ बार बार करने को मन करेगा।

मुख्य वितरक

विशाल प्रिंटर्स

स्टेशन रोड, सीकर–332 001

फोन : 51457

प्रकाशक

कलम प्रकाशन

52, दुसरी मंजिल, न्यू पुरोहित जी का कटला,

जयपुर, फोन : 560098